तुलसी भूषण

आचार्य रसरूप

संपादक

डॉ. पूर्णमासी राय

तुलसी भूषण

(सन् 1754 ई.)

आचार्य रसरूप

संपादक
डॉ0 पूर्णमासी राय
पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष,
हिंदी विभाग, मगध विश्वविद्यालय,
बोधगया (बिहार)

ललित प्रकाशन

भारत सरकार की
'भारतीय भाषाओं तथा अंग्रेज़ी में प्रकाशन योजना'
के अंतर्गत शिक्षा विभाग,
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
द्वारा आर्थिक सहायता के लिए स्वीकृत पुस्तक

प्रथम संस्करण : 1996

प्रकाशक : ललित प्रकाशन
ई-137, गणेश नगर
पांडव नगर कांप्लेक्स
नई दिल्ली-110092

आवरण सज्जा : बलराज

मूल्य : उनसठ रुपए

शब्द संयोजन : गीत कंप्यूटर्स
दिल्ली-110053

मुद्रक : ऋत्विज प्रकाशन
34, संस्कृत नगर, प्लॉट-3
सेक्टर-14, रोहिणी, दिल्ली-110085

TULSI BHUSHAN : Acharya Rasroop. Edited by Dr. Purnamasi Rai, Ex. Professor and Head, Department of Hindi, Magadh University, Bodhgaya (Bihar).

समर्पण

स्मृतिशेष पूज्य पंडित जी
आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
को
जिनकी प्रेरणा से इस महत्त्वपूर्ण कृति
का संपादन हुआ

प्रयोग नहीं किया, पर रसरूप ने इन्हें अन्य उदाहरणों से समझाने की चेष्टा की है और 'धन्यता' और 'निर्णय' दो नए अलंकारों कर सन्निवेश भी किया है। इस ग्रंथ की भूमिका में इस तथ्यों का विवचेन है।

कुछ बातें 'तुलसी भूषण' के संपादन के संबंध में भी।

'तुलसी भूषण' की जो चार प्रतियाँ मिलीं, उनमें मन्नूलाल पुस्तकालय की प्रति स्पष्ट एवं पूरी थी – शेष अपूर्ण थीं। इनके उपलब्ध पाठों में कुछ अंतर नहीं था। इसलिए गया की प्रति को आधार मानकर इसका संपादन किया गया।

'तुलसी भूषण' में 'तुलसी वाङ्मय' या अन्यत्र से जो उदाहरण दिए गए हैं, उनका ग्रंथ-निर्देश संपादक की ओर से किया गया है। कुछ का पता प्रचलित पाठ से न लग सका। संभव है; उस समय के प्रचलित ग्रंथों में वे पाठ रहे हों।

'तुलसी भूषण' की प्रकाशन-गाथा बड़ी कुतूहलमयी है। इसका संपादन इस शताब्दी के सातवें दशक में ही हो गया। मुझे जब मन्नूलाल पुस्तकालय, गया की प्रति मिली तो मेरी मानसिक स्थिति 'पावा परम तत्त्व जनु जोगी' के साथ-साथ 'जनम रंक जनु पारस पावा' की हो गई। मैंने आचार्य पं0 विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र को दिखाया। उन्होंने इसके संपादन की आज्ञा दी और कहा कि इसकी मूल मान्यताओं को लेकर एक शोध पत्र प्रकाशित करवा दीजिए। मैंने 'आचार्य रसरूप कृत तुलसी भूषण और उसकी ब्रजभाषा टीका' नामक शोध पत्र बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पत्रिका (वर्ष 14, अंक-7, सन् 1974) में प्रकाशित करा दिया। परिषद् ने इसे प्रकाशित करने की स्वीकृति दी। पर दीर्घकाल तक की प्रतीक्षा के बाद भी निराशा ही हाथ लगी। इस बीच रसरूप की दो अन्य कृतियाँ सन् 1980 में प्रकाशित हो गयीं। संयोग की बात कहिए सन् 1993 में मैं केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय से निदेशक डॉ0 गंगा प्रसाद विमल से मिला। उन्होंने इसके प्रकाशन की सहर्ष स्वीकृति प्रदान की। उनका 'विमल' प्रसाद न मिलता तो यह ग्रंथ प्रकाशन के अभाव में यों ही पड़ा रहता। मैं मात्र धन्यवाद की औपचारिकता से उनके सौजन्य की पूर्ति नहीं कर सकता। निदेशालय के अन्य अधिकारी एवं सहयोगी डॉ0 डी0सी0 दीक्षित, डॉ0 सुबच्चन पाण्डे, डॉ0 सरोज कुमार त्रिपाठी और श्री सरोज शुक्ल ने इस प्रकाशन यज्ञ में यथेष्ट सहायता की। भारत सरकार के मानव संसाधन विभाग के अधिकारियों ने अपेक्षित तत्परता दिखाई। मैं इन सभी महानुभावों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

मैं पुण्यश्लोक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र और डॉ0 माधव के पाण्डित्य पूर्ण निर्देशन को कैसे भूल सकता हूँ? मैं सर्वतोभावेन

आचार्य त्रय को प्रणति निवेदित करता हूँ। माननीय डॉ0 वासुदेव नंदन प्रसाद, डॉ0 बटेकृष्ण और डॉ0 वचनदेव प्रसाद होते तो इस कृति को देखकर अवश्य प्रसन्न होते। मन्नूलाल पुस्तकालय के पं0 वाचस्पति शास्त्री, सरस्वती भण्डार, रामनगर के सर्वस्व डॉ0 विभूति नारायण सिंह, ना0प्र0 सभा के प्रधान मंत्री पं0 सुधाकर पाण्डेय और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधानमंत्री पं0 प्रभात शास्त्री आदि ने हस्तलेखों की सुविधा प्रदान की। मगध विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के सभी सहयोगियों, डॉ0 कुमार विमल और डॉ0 रंजन सूरिदेव (पटना), डॉ0 दीनानाथ सिंह और डॉ0 गोरखनाथ राय (आरा), डॉ0 विजयपाल सिंह, डॉ0 महेन्द्रनाथ राय (वाराणसी), डॉ0 नामवर सिंह, डॉ0 महेन्द्र कुमार, डॉ0 रामजी मिश्र और डॉ0 एस0एम0 अय्यर (दिल्ली), डॉ0 दिवाकर (नवादा, बिहार), डॉ0 प्रमोद कुमार सिंह (मुजफ्फरपुर), डॉ0 मदन राज डी0 मेहता (जोधपुर), डॉ0 लक्ष्मी नारायण शर्मा (चण्डीगढ़) आदि ने विचार-विमर्श के द्वारा इस कृति को संपन्न किया है। मैं इन सभी विद्वानों का हार्दिक आभार मानता हूँ।

'तुलसी भूषण' अभी भी कार्यालयों के चक्रव्यूह से न निकल पाता, यदि मेरे भ्रातृव्य डॉ0 देवदत्त राय, आत्मज श्री रामराज राय एम0एस0सी0 (कार्यकारी अधिकारी, लोकसभा) और श्री बालकृष्ण राय, एम0ए0, एम0फिल0 (दिल्ली) ने जी-तोड़ प्रयत्न न किया होता। मैं इनके मंगलमय भविष्य के लिए आशीर्वाद देता हूँ। ललित प्रकाशन के सुयोग्य प्रकाशक श्री धनंजय श्रोत्रिय ने सुरुचि और तत्परता से इसका प्रकाशन किया है, एतदर्थ उनका हार्दिक साधुवाद करता हूँ।

यह ग्रंथ सुधी एवं सहृदय समीक्षकों के समक्ष प्रस्तुत है। उनके महत्त्वपूर्ण सुझावों का स्वागत करूँगा।

– पूर्णमासी राय

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
संवत् 2053
दिनांक 5.9.96
पिपरी (वाराणसी)

अनुक्रम

भूमिका

हिंदी के रीतिशास्त्रीय अलंकार ग्रंथों में आचार्य रसरूप कृत 'तुलसी भूषण' लक्ष्य-चयन की दृष्टि से अभिनव प्रस्थान है। रीति काल के ग्रंथकार अलंकारों के लक्षण-निर्धारण में संस्कृत साहित्य शास्त्र के पूर्व निर्धारित राजमार्ग पर चलने में थोड़ी भी हिचकिचाहट नहीं दिखलाते थे, पर लक्ष्य (अलंकारों के उदाहरण) के लिए वे कई पद्धतियों का अनुगमन करते थे, कभी स्वनिर्मित उदाहरण देते थे, कभी संस्कृत श्लोकों के छायानुवाद देकर छुट्टी पा लेते थे और कभी अन्य आलंकारिकों अथवा कृतिकारों से उदाहरण चुन लेते थे। अलंकार के उदाहरण प्राय: श्रृंगारपरक होते थे। रीतिकारों को श्रृंगार की रसमयी वीथिका के अलावा अन्यत्र झाँकने की फुरसत कहाँ थी? अलंकार जैसे क्लिष्ट विषय को मधु आवेष्टन में प्रस्तुत करना उन्हें व्यावहारिक भी लगता था। पर रसरूप ने उस युग में भी एक नवीन सरणि की उद्भावना की। उन्होंने तुलसी साहित्य से उदाहरणों का चयन कर प्राय: अलंकारों को स्पष्ट किया और यत्र-तत्र मिलते-जुलते अलंकारों को भी निर्दिष्ट किया। इस दृष्टि से उनका 'तुलसी भूषण' तुलसी के अलंकार-विवेचन का कदाचित् सर्वप्रथम स्तुत्य प्रयास है। युग-प्रवाह से अपने को पृथक् रखकर तुलसी साहित्य की अलंकार-मीमांसा करना उनकी अभिनवता है।

सुकवि रसरूप की जीवन-वृत्त विषयक सामग्री अद्यावधि कम ही उपलब्ध है। हिंदी की हस्तलिखित पुस्तकों की खोज-रिपोर्ट भी इसकी सामान्य जानकारी देती हैं। सन् 1926-28 की खोज रिपोर्ट में उनके जन्मकाल एवं उनकी तीन कृतियों का उल्लेख है।[1] डॉ0 ग्रियर्सन ने इनका जन्म सन् 1731 ई0 में माना

---

1. *रसरूप – संवत् 1811 के लगभग वर्तमान। जन्मकाल संवत् 1788*
   ग्रंथ – तुलसी भूषण – (ङ-11) सन् 1904
   शिख-नख (च-76) सन् 1905
   उपालंभ शतक – (ज-261) सन् 1908, 10, 11

और लगभग 1754 ई0 तक रहने का अनुमान किया है।[1] शिवसिंह सेंगर ने इन्हें संवत् 1788 में उपस्थित माना है।[2] इन्होंने स्वयं 'तुलसी भूषण' में रचना-काल दिया है –

दस बसु सत संवत हुतो अधिक और दस एक।
कियो सुकवि रसरूप यह पूरण सहित विवेक।।

अर्थात् संवत् 1811 में 'तुलसी भूषण' की रचना हुई। इनके एक अन्य 'हास्यमय नाटक' में भी संवत् 1830 विक्रमी रचना-काल का निर्देश है। इससे इतना स्पष्ट है कि ये अठारहवीं शती के अंतिम चरण में विद्यमान थे।

रसरूप ने गोस्वामी तुलसी दास के प्रति अनन्य श्रद्धा व्यक्त कर उन्हें 'गुरु' रूप में स्वीकार किया है। 'उपालंभ शतक' में उनका एक छंद इसका प्रमाण है-

व्यास को पाय हजार सरीर सरीरनहू प्रति सीस हजारो।
है प्रति सीस हजार मुखौ मुख हू प्रति जीभ हजार हकारो।
जन्म हजारहिं लौं रसरूप पढ़ावैं गनेस जो जोरि अखारो।
या तुलसी तुलसी यह मेरी गिरा गुनगाय सकै न तिहारो।।[3]

'तुलसी भूषण' से उनकी तुलसी-भक्ति स्वतः स्पष्ट है।[4] इन्होंने तत्कालीन श्रृंगार प्रधान धारा से अलग हटकर तुलसी साहित्य को चुना। 'हास्यमय नाटक' में भी तुलसी को प्रमाण रूप में इन्होंने स्थन-स्थान पर उद्धृत किया है। हालांकि तुलसीदास के समय से इनके समय में बड़ा अंतर है। तुलसी दास की मृत्यु संवत् 1680 में हो चुकी थी और इनकी रचना का काल सन् 1811 विक्रमी है। इनका तुलसी दास से क्या संबंध था, यह कहना कठिन है। इन्होंने बड़े भक्तिभाव से तुलसी का स्मरण किया है।

कृतियाँ

रसरूप के जीवन-वृत्त के समान ही उनकी कृतियों के संबंध में भी विद्वानों

---

1. *रसरूप कवि – जन्म सन् 1731 ई0। इस पर डॉ0 किशोरी लाल गुप्त ने टिप्पणी दी है। सन् 1731 (संवत् 1788) उपस्थितिकाल है। संवत् 1811 में इन्होंने 'तुलसी भूषण' नामक ग्रंथ लिखा। (हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास, पृ. 229)*
2. *शिव सिंह सरोज – पृ. 485 सं0 – डॉ0 त्रिलोकी नारायण दीक्षित।*
3. *हास्यमय नाटक तथा उपालंभ शतक – सं0 डॉ0 बटे कृष्ण।*
4. *श्री तुलसी निज मनित मैं भूषण धरे दुराय।*
   ताहि प्रकासन की भई मेरे चित में चाय।।
   सो कविता सब गुण सहित हैं जग विदित सुभाय।
   दीपक लै रसरूप ज्यों दिनकर दियो दिखाय।।

में मतैक्य नहीं है। जैसा कि पूर्व उल्लेख किया जा चुका है कि सन् 1926-28 की रिपोर्ट में इनकी तीन कृतियों का उल्लेख है – 'तुलसी भूषण', 'शिख-नख' और 'उपालंभ शतक'। 'तुलसी भूषण' की संवत् 1856 से संवत् 1920 तक की प्रतियाँ उपलब्ध हैं। इसलिए यह उन्हीं की कृति है, इसमें सन्देह नहीं। 'शिख नख' उपलब्ध नहीं है। इधर डॉ. बटेकृष्ण ने रसरूप कृत 'हास्यार्णव' (हास्यमय) नाटक तथा 'उपालंभ शतक' (18वीं शती) का सुसंपादित संस्करण विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी से सन् 1980 में प्रकाशित कराया। उन्हें भी 'हास्यमय नाटक' की हस्तलिखित प्रति नहीं मिली। पर पं. मन्नालाल 'द्विज' के संवत् 1923 के 'हास्यार्णव' को प्रमाण मानकर इसे रसरूप की कृति के रूप में प्रकाशित कराया है। 'उपालंभ शतक' की जो प्रति उन्हें मिली, वह पं. नकछेदी तिवारी द्वारा संपादित है। इस प्रकार रसरूप की चार कृतियाँ मानी जा सकती हैं – 'तुलसी भूषण', 'शिखनख', 'हास्यमय नाटक' और 'उपालंभ शतक'।

'हास्यमय नाटक' जैसी रचना को देखकर उसे रसरूप की कृति होने में संदेह हो सकता है। पर रसरूप की प्रवृत्ति तीनों में समान है। उनकी तुलसी-भक्ति तीनों में है और कुछ पद भी समान हैं। यह संस्कृत की प्रहसन परंपरा में आ सकता है। शंखधर कृत 'लटकमेलक' और जगदीश्वर कृत 'हास्यार्णव' की परंपरा में यह हिंदी नाटक परिगणित हो सकता है। इसमें नौ अंक हैं। राजा अनयसिंधु के कुल और उसके विध्वंस की कथा है। ये हरिबोंग के पुत्र थे। इस नाटक के सभी नाम एवं कृत्य हास्य उत्पन्न करते हैं और इसमें सामाजिक कुरीतियों के लिए श्रृंगारपरक प्रसंगों की बहुलता भी दिखाई गई है।

'उपालंभशतक' भ्रमरगीत की परंपरा में उद्धव-गोपी संवाद के रूप में है। इसमें निर्गुण-सगुण के खंडन के साथ कृष्ण के प्रति उपालंभ प्रधान है। अंत में नायक-नायिका के पारंपरिक उपालंभ को भी सम्मिलित कर लिया गया है। ग्रंथ के अंत में लगभग बीस छंदों में राजा रामचंद्र के राजसी ठाटबाट का वर्णन भी रीतिकालीन प्रशस्तिकाव्य परंपरा के अनुरूप रखा गया है। इसमें कुल 107 छंद हैं जिसमें भ्रमर गीत का प्रसंग कुल चौहत्तर छंदो (छंद 8 से 81 तक) में है। इस ग्रंथ की कुछ अपनी विशिष्टता है। उद्धव योग के अष्टांगों का वर्णन करते हैं। राधा की ललिता आदि विभिन्न सखियाँ कृष्ण की रुक्मिणी, सत्यभामा आदि के प्रति अनेक उक्तियाँ निकालती है। इसमें उपालंभ की सारी स्थितियाँ उजागर हुई हैं। यह रसरूप की मौलिक कल्पना है। ये परंपराभुक्त मार्ग से किंचित् हटकर विचार करने वाले कवि प्रतीत होते हैं।

'उपालंभ शतक' के एक छंद की वचन-भंगिमा द्रष्टव्य है –

जब तें गये है नाँखि, ऊधव न लागै आँखि

सदा चले आवत, वियोग ही के बिस्ते हैं।

लागि सुख देह तब, झारत चरन खेह

रसरूप अब तो वे राखत न रिस्ते हैं।

कैसे गोपीनाथ गाय गीतन में नाथ हमैं,

नाहक गजब मारे उनमें उमिस्ते हैं।

आप हैं त्रिभंगी, तैसी कूबरी मिली है संगी,

जैसी जहाँ, रूह तहाँ तैसियै फिरिस्ते हैं।।[1]

इस प्रकार रस रूप का 'उपालंभ शतक' अभी तक अविवेच्य रहा है। उसकी विस्तृत समीक्षा कभी की जाएगी। यहाँ केवल संकेत भर है।

'तुलसी भूषण' रसरूप की ऐसी कृति है, जिसकी प्रसंगवश चर्चा की गई पर उसकी नूतनता का उद्‌घाटन नहीं हुआ। यहाँ यथासंभव विस्तार से उसकी व्याख्या की जाएगी। सर्वप्रथम उसकी हस्तलिखित प्रतियों का विवरण इस प्रकार है–

तुलसी भूषण की हस्तलिखित उपलब्ध प्रतियों का विवरण

1. हस्तलेख संवत् 1856 (पत्राकार-विंडा-39/843/153)

प्राप्ति स्थान – सरस्वती भंडार

राम नगर दुर्ग, वाराणसी

विवरण– लंबाई 9½", चौड़ाई = 5" पत्र सं-97; पृष्ठ सं. 194/प्रतिपृष्ठ पंक्ति 9, प्रति पंक्ति अक्षर 26 संपूर्ण (पत्राकार)।

ग्रंथ का आरंभ इस प्रकार है –

श्री गणेशाय नमः। अथ तुलसी भूषणं लिख्यते।।

गुरु गणेश गिरिधर सुमिरि गिरा गौरि गौरीश।

मति माँगत रसरूप कवि राखि चरण पर शीश।।1।।

श्री तुलसी निज भाणित मैं भूषण धरे दुराय।

ताहि प्रकाशन की भई मेरे चित में चाय।।2।।

---

1. उपालंभ शतक – छंद सं0 41

सो कविता सब गुण सहित है जग विदित सुभाय।
दीपक लै रस रूप ज्यौं दिनकर दियो देषाय।।3।।
रामायण में जो धरे अलंकार को भेद।
ताहि जथामति बूझि कै रचत प्रबंध अखेद।।4।।
औरनि के लक्षण लिए रामायण के लक्ष।
तुलसी भूषण ग्रंथ को या विधि कियो प्रतक्ष।।5।।
अलंकार द्वै भाँति के शब्द अर्थ द्वै नाम।
तिनके लक्षण लक्षयुत वरणत अति अभिराम।।6।।

।।अथ शब्दालंकार कथनम्।।

अनुप्रास वक्रोक्ति पुनि यमक (ल) श्लेष सुचित्र।
पुनरुक्तिवदाभास ए षटविधि शब्द विचित्र।।

इस रूप में शब्दालंकारों का उल्लेख किया गया है। चित्रालंकार को स्पष्ट करने के लिए खंगादि के काले चित्र बनाए गए हैं। अलंकारों की कुल संख्या 111 है। संपुष्टि के लिए मुख्य रूप से 'कुवलयानंद' और गौण रूप से 'काव्य प्रकाश' और 'चंद्रालोक' को उद्धृत किया गया है। इस प्रति में संस्कृत की टीका नहीं है।

इस प्रति का का अंतिम अंश इस प्रकार है –

सम्मत काव्य प्रकास को और कुवलयानंद।
चंद्रालोक कलपलता चंद्रोदय सुभकंद।।
एकादश अरु एक शत मुख्य अलंकृत रूप।
विविध भेद इनके धरे तुलसी दास अनूप।।
दश वसु शत संवत हुतो अधिक और दश एक।
कियो सुकवि रसरूप यह पूरण सहित विवेक।।

पुष्पिका इस प्रकार है –

इति श्री तुलसी भूषण ग्रंथे समस्त भूषण भूषिते रसकृतिः संपूर्ण। संवत् 1856 चैत्रे मासे शुक्ले पक्षे तृतीयाँतिथौ सोमवासरे। श्री राम जय राम जय जय राम।।[1]

---

1. *काशी नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट में संवत् 1856 की प्रति को संवत् 1886 की प्रति लिखा गया है। वहाँ स्पष्ट ही अंकों में संवत् 1856 लिखित है।*

(2) यह प्रति भी श्री काशिराज सरस्वती भंडार, रामनगर दुर्ग, वाराणसी में सुरक्षित है। इसके साथ ही कवि करण का 'रसकल्लोल' भी संलग्न है। इसका विवरण इस प्रकार है –

लंबाई 11.3'', चौड़ाई 7'', पत्र सं.-61, पृष्ठ 121, प्रति पृष्ठ पंक्ति 23, प्रति पंक्ति अक्षर 19, संपूर्ण (पुस्तकाकार)

ग्रंथारंभ प्रथम प्रति जैसा ही है। लेखक की अपनी विशेषता यत्र-तत्र दिखाई पड़ती है, जैसे औरिन के स्थान पर 'वौराणि' संसार की जगह पर 'शंशार'। तथ्यात्मक अंतर बिलकुल नहीं है। चित्रालंकार के चित्र काले रंग के पाँच पृष्ठों में अंकित हैं। इसके पद अलग से नहीं लिखे गए हैं। प्रत्युत चित्रों में ही भरे गए हैं। अलंकारों की संख्या 117 है। इसमें भी कुवलयानंद के श्लोकों की टीका नहीं है। ग्रंथ के अंतिम दोहे भी प्रथम प्रति जैसे ही हैं। पुष्पिका इस प्रकार है–

''इति श्री तुलसी भूषण ग्रंथे समस्त भूषण भूषिते रस रूप कवि कृतं संपूरण।।''

शशि वसु रस सागर सहित संवत् संख्या जानि।

मधु शुल्का तिथि शंभु रव इंदुवार शुभ षानि।।

श्री बाबू जगदेव सिंह हित ग्रंथ लिखित्।।

दास बहोरण खास धराउत मध्य वसित्।। राम राम राम राम राम।।

(3) काशी नगरी प्रचारिणी सभा की प्रति खंडित है। इसका लिपिकाल सवंत् 1900 है। कुल पत्र संख्या 56 है। पृष्ठ 4, 5, 6 और 7 त्रुटित हैं। (लिपिकार साँवलदास, हस्तलेख सं0 935, पत्र 1-56) [पत्राकार]

इस प्रति का प्रारंभिक अंश पूर्ववर्ती प्रतियों जैसा ही है। शुरू में 'श्रीगणेशाय नम:' के स्थान पर 'श्रीमन्मारुतनंदनाय नम:' लिखा गया है। इसमें कुवलयानंद के श्लोकों की टीका नहीं है। अंत भी पूर्ववर्ती प्रतियों के समान है। पुष्पिका इस प्रकार है –

इति श्री तुलसी भूषण ग्रंथ समस्त भूषण रसरूपकृत संपूर्ण:।। ज्येष्ठ मास कृष्ण 3 सवंत् 1900 राम श्री राम साँवलदास श्री वैष्णव प्रकावाद टोका (?) घाट के ऊपर लिखे। श्रीराम श्रीराम . . . .

(4) मन्नूलाल पुस्तकालय, गया की यह प्रति सटीक है और मनोरम हस्तलेख है। इसके लेखक सिग्रिफलाल हैं। लिपिकाल संवत् 1920 है।[1] (ज.र. नं. 52, लिपिकार सिँग्रिफलाल) इसका विवरण इस प्रकार है –

लंबाई – 8.7'', चौड़ाई 6.2''। पत्र संख्या 146, पृष्ठ सं. 291, प्रति पृष्ठ पंक्ति – 17, प्रति पंक्ति अक्षर – 16। संपूर्ण, [पुस्तकाकार]

इस प्रति की पूर्ववर्ती प्रतियों से यह विशिष्टता है कि यह ब्रजभाषा टीका संवलित है। किन्हीं बाबू घनश्यामसिंह की आज्ञा से राधाकृष्ण ने तुलसी भूषण की भाषा में टीका की।[2] इससे तत्कालीन ब्रजभाषा के स्वरूप का भी बोध हो जाता है। 'कुवलयानंद' जैसे विशिष्ट अलंकार ग्रंथ की ब्रजभाषा टीका भी इस ग्रंथ के साथ उपलब्ध हो जाती है।

ग्रंथ का आरंभ और अंत पूर्ववर्ती प्रतियों जैसा ही है। अलग से सिग्रिफलाल ने दोहे और कवित्त में लिपिकाल एवं ब्रजभाषा टीका आदि का उल्लेख किया है।

इस प्रति की लेखन-पद्धति के संबंध में कुछ टिप्पणियाँ अपेक्षित हैं –

(अ) इस ग्रंथ का लेखक कैथी लिपि का है क्योंकि 'ग' और 'र' आदि उसी आकृति के हैं।

(आ) कैथी में तालव्य 'श' का ही प्रयोग होता है। इसमें तालव्य 'श' का ही व्यवहार अधिक है। यत्र-तत्र 'स' का भी प्रयोग है।

(इ) लेखक ने अपनी तरफ से संशोधन किया है, जैसे 'गौरीश' के तुक पर 'सीश' 'शब्द का र्सबद' लिखा है और 'ब' की जगह 'व' और जब कभी 'व' पढ़ना हो तो 'व' के बीच बिंदी लगाई गई है।

(ई) जहाँ स्वर 'ओ' और 'औ' होना चाहिए, वहाँ 'वो' और 'वौ' लिखा है। जो पूर्वी उच्चारण का सूचक है। अत: इस प्रति के लेखक ने प्राय: कैथी लिपि के प्रभाव को व्यक्त किया है। कुवलयानंद के श्लोकों की टीका में विशेषकर यह प्रवृत्ति लक्षित होती है।

---

1 *व्योंम नयन निधि इन्दु जुत संवत् निक्रम जान।*
फाल्गुन कृष्ण सुसप्तमी चन्द्रवार सुभ मान।।
सिँग्रिफ लाल सुजान तुलसी भूषण ग्रंथवर।
पूर्ण कियो मतिमान स्वकर लेखि अति चावकर।। तुलसी भूषण, पृष्ठ सं0 145

2 *बाबू घनश्याम सिंह आयसु ते राधाकृष्ण*
तुलसी सुभूषण की टीका भाषा करी है।
टीका सहित सांई सिग्रिफसुलाल लिखे
ताहि देषि हियें माँह आनँद की झरी है।। पृ. 146

'तुलसी भूषण' का प्रस्तुत संस्करण चतुर्थ प्रति को मूलतः आधार मानकर उपस्थित किया गया है। अन्य तीन प्रतियों के पाठ में केवल स्थानीय प्रभावों का ही अंतर देखने में आया। यह ध्यान रखा गया है कि तुलसी भूषण का मूल अविकल रूप में सामने आ जाए। 'कुवलयानंद' और संस्कृत के अन्य ग्रंथों के श्लोकों की ब्रजभाषा टीका को विस्तारभय से छोड़ दिया गया है। रसरूप की मूलकृति को यथावत् लिया गया है।

'तुलसी भूषण' की अन्य प्रतियों का विवरण नहीं प्राप्त हो सका। इन चार प्रतियों में लिपिकों के भाषा-ज्ञान और लेखन की परंपरा के कारण छोटे-मोटे पाठांतर दिखाई पड़े, पर वे नगण्य थे। इसलिए पाठान्तर नहीं दिए गए। संवत् 1856 से संवत् 1920 तक की उपलब्ध प्रतियों में लेखकों ने सुलेख पर विशेष ध्यान दिया है। इससे सभी प्रतियों का पाठ सुपाठ्य है।

'तुलसी भूषण' की रचना का उद्देश्य

रसरूप ने स्वयं 'तुलसी भूषण' के प्रारंभ में रचना का उद्देश्य स्पष्ट कर दिया है। तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में अलंकारों को छिपा रखा है, कवि के हृदय में उन्हें प्रकाश में लाने की इच्छा हुई। सर्व गुणोपेत तुलसी साहित्य में से दीपक लेकर दिखा देने का उन्होंने प्रयास किया। कवि की स्पष्टोक्ति है कि उसने लक्षण औरों से लिए और 'रामायण' को मुख्यतः और तुलसी के अन्य ग्रंथों को गौण रूप से लक्ष्य ग्रंथ बनाया –

श्री तुलसी निजभनित मैं भूषण धरे दुराय।
ताहि प्रकासन की भई मेरे चित में चाय।।
सो कविता सब गुणसहित है जग विदित सुभाय।
दीपक लै रसरूप ज्यों दिनकर दियो दिषाय।।
रामायण में जो धरे अलंकार के भेद।
ताहि यथामतिबूझि के रचत प्रबंध अखेद।।
औरनि के लच्छन लिए रामायण के लच्छ।
तुलसी भूषण ग्रंथ या विधि कियो प्रतच्छ।।[1]

---

1 तुलसी भूषण – प्रारंभिक दोहा-2 से 5 तक।

अलंकारों के लक्षण हेतु स्रोत

'औरनि के लच्छन' अर्थात् अलंकारों के लक्षण दूसरों से गृहीत हैं। लक्षणोल्लेख में चार-पाँच तरह की स्थितियाँ स्पष्ट दिखाई देती हैं। रस रूप ने प्राय: 'काव्य प्रकाश', 'चंद्रालोक' और 'कुवलयानंद' के छायानुवाद प्रस्तुत करते हुए लक्षण दिए हैं।[1] 'कल्पलता' और 'चंद्रोदय' के लक्षणों को भी कई स्थलों पर ग्रहण किया है।[2] हिंदी के रीति ग्रंथकारों में सर्वाधिक लक्षण केशवदास की कविप्रिया से लिए गए हैं। स्थूल रूप से देखने पर कविप्रिया के 24 लक्षण तो अवश्य ही आए हैं।[3] कुछ ऐसे ही लक्षण हैं जिनमें केशव के नाम का उल्लेख नहीं है। इन्होंने कहीं कहीं 'भूपति' कवि का भी उल्लेख किया है।[4] कुछ अलंकारों के लक्षण-निर्देश में 'सुकवि'[5] शब्द आया है। इस शब्द का पूरे ग्रंथ में 18 बार प्रयोग हुआ है। प्रतीत होता है कि रस रूप को 'सुकवि' की उपाधि मिली थी। कवि ने स्वयं 'सुकवि' नाम नहीं रखा होगा। कुछ लक्षण तो कवि के स्वनिर्मित हैं। 'चित्रालंकार' के वर्णन लक्षण और उदाहरण इन्हीं के हैं। इसी स्थल पर उन्होंने 'अलंकार-दर्पण' नामक एक अन्य ग्रंथ का भी निर्देश किया है।[6] कुछ अलंकारों के लक्षण नहीं दिए गए हैं, केवल उदाहरण ही हैं। इस तरह रसरूप ने जाग्रत विवेक से लक्षणों का चयन किया है। उन्हें लक्षणों के लिए केवल संस्कृत साहित्य-

---

1. *सबद सु अर्थ्थ निषेधते प्रश्ना प्रश्न बखानि।*
   परिसंख्या है चारिविधि मम्मट मत ते जानि।। वही पृ. 111
2. *आक्षेप अलंकार के भेद-प्रभेद। तुलसी भूषण – अलंकार सं0 12*
3. *कपट निपट मिटि जाइ जहँ उपजै पूरण प्रेम।*
   ताही सों सब कहत है केसव भूषण प्रेम।। तुलसी भूषण – पृ. 110
4. *सामग्री श्री संख कहि तब दृढ़ करै विशेष।*
   ताकहँ कहत दृढ़ोक्ति है भूपति सुकवि अशेष।। वही, पृ. 54
5. *वृत्य, लाटानुप्रास, पुनरुक्तवदाभास, अवज्ञा, अनन्वय, आक्षेप, निवृतोक्ति, सार, विकस्वर आदि।*
6. *अलंकार दर्पण विषे मै वरणे बहु चित्र।*
   तिन्हे जानिबे हेतु अब रूप देखावत मित्र।। पृ. 6

शास्त्र का ही अनुगमन करना अभीष्ट नहीं था प्रत्युत कई स्रोतों से लेकर तब तक के निरूपित सभी अलंकारों और कुछ नये अलंकारों को सन्निविष्ट करने की आकांक्षा थी।

तुलसी भूषण की उदाहरण-विषयक नवीनता

इसी स्थल पर 'तुलसी भूषण' में उदाहरणों के चयन को लेकर रसरूप ने जो अपूर्वता दिखाई है, उसकी चर्चा कर लेना सर्वथा सभीचीन होगा, यहाँ पर किस ग्रंथ के कितने उदाहरण आए हैं, उन सबकी संक्षिप्त तालिका प्रस्तुत की जा रही है –

	ग्रंथ		उदाहरणों की संख्या
1.	रामचरितमानस	–	358
2.	गीतावली –		47
3.	बरवैरामायण	–	43
4.	कवित्त रामायण	–	4
5.	रामसलाका	–	6
6.	राम सतसैया	–	4
7.	वैराग्य संदीपनी	–	3
8.	कृष्णचरित्र	–	3
9.	सीतामंगल	–	1
10.	विनयपत्रिका	–	1
11.	बिहारी सतसई	–	1
12.	स्फुट छंद–		लगभग - 20 तथा चित्रालंकार के सभी उदाहरण

विवरण

(1) स्पष्ट है कि रसरूप ने गोस्वामी तुलसी कृत रामचरितमानस से साढ़े तीन सौ से अधिक उदाहरण लिए। इनके विश्लेषण से प्रतीत होता है कि मानस

का मंथन करके इन रत्नों को निकाला। उनका प्रसंग निर्दिष्ट करना भी दुष्कर कार्य था। क्योंकि कुछ उदाहरण तो बड़े ही स्पष्ट थे, पर कुछ पाठ-भेद के कारण अत्यंत कठिनाई से मिले। कुछ को प्रचलित पाठ में नहीं ही उपलब्ध किया जा सका।[1] हो सकता है, वे मानस के क्षेपक से ले लिए गए हों। मानस के इन उदाहरणों से पाठानुसंधान में भी सहायता मिल सकती है।

(2) मानस के अनंतर गीतावली का महत्व है। इसके 47 उदाहरण इस ग्रंथ में उद्धृत हुए हैं। पर इनमें से केवल 15 को गीतावली के प्रचलित पाठ में से उपलब्ध किया जा सका, शेष 32 पद नहीं मिल सके। ऐसा प्रतीत होता है कि गोस्वामी जी की गीतावली का कोई और रूप रहा होगा। अब वह अनुपलब्ध है। इस ग्रंथ के द्वारा गीतावली के इतने नये छंद भी प्रकाश में आ गए, यह कम महत्व की बात नहीं है।

---

1. *(i) जो सुत मानहु तात नियोगू। जननिउँ तात मानिये योगू।।*
आक्षेप का उदाहरण – तुलसी भूषण पृ. 24
(ii) अहै अनूप राम प्रभुताई। बुधि विवेक करि तर्कि नजाई।।
वही, पृ. 33
(iii) मैं तुम से तुम उन समस्वामी। मैं जन नीच नाथ अनुगामी।।
वही, पृ. 36
(iv) वशत हृदय नृप के सुत कैसे। फणि मणि मीन सलिलगत जैसे।
वही, पृ. 37
(v) देखि जनक की नगर निकाई। लघु लागी विरंचि निपुनाई।।
वही, पृ. 45
(vi) विरचे जहाँ मुनिन्ह निज वासा। तहाँ निसाचर कीन्ह निवासा।।
वही, पृ. 80
(vii) आए उतरि काल के मारे। राम लखन ये मनुज विचारे।।
वही, पृ. 61
(viii) तहाँ न जाहि मोहमद माना। जेहि हिय धरे रामधनु बाना।।
वही, पृ. 89
(ix) पावक जानि धरहि जे प्राणी। जरहि न काहे न अति अभिमानी।
जानि गरल जे संग्रह करहीं। सुनहु रामते काहें न मरहीं।।
वही, पृ. 88
(x) गुरु विनु मातु वचन अनुसारी। खल दल दलन देव हितकारी।
वही, पृ. 82
(xi) मैं निज जन्म सुकल करि लेखेउँ। आजु तात दसरथ कहँ देखेउँ।
वही, पृ. 121

(3) सबसे विलक्षण निष्कर्ष बरवै रामायण को लेकर निकाले जा सकते हैं। बरवै रामायण के बालकाण्ड से लंकाकाण्ड के केवल एक बरवै (बालकाण्ड-3) को छोड़कर सभी उदाहरणों के रूप में आ गए हैं। उत्तरकाण्ड का केवल एक बरवै (57वां) अनुगुण अलंकार में हुआ है। बरवै रामायण के स्वीकृत बरवै 69 हैं जिनमें से 43 'तुलसी भूषण' में उदाहरण के रूप में आ चुके हैं। एक तुलसी के नाम पर एक 'वृहद बरवै रामायण' का प्रकाशन संवत् 2010 में जौनपुर के राजा श्री यादवेन्द्र दत्त ने स्वकीय पुस्तकालय के हस्तलेखों के आधार पर 'बरवा रामायण' नाम से किया था, जिसमें 405 बरवै हैं। इसमें राम कथा क्रमबद्ध कथित है, पर प्रचलित बरवै के केवल 15 छंद ही कुछ पाठांतरों सहित समान है। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने 'तुलसी भूषण' में उदाहृत बरवै छन्दों को ध्यान में रखकर वृहद् बरवै रामायण की अप्रामाणिकता सिद्ध की है।[1] मूल बरवै रामायण के लिए 'तुलसी भूषण' को साक्ष्य रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। यह भी कम आश्चर्यजनक नहीं है कि यह ग्रंथ तुलसी ने जैसे अलंकारों के लिए ही लिखा था। सभी छंदों में वचन की भंगिमा पिरोई हुई है।[2]

(4) 'कवित्त रामायण' से केवल 4 छंद उद्धृत हैं। ये चारों 'कवितावली' के प्रचलित पदों में उपलब्ध हो गए हैं।[3]

(5) 'राम सलाका' अथवा 'रामाज्ञा प्रश्न' से 6 छंद उद्धृत हैं। प्रायः सभी प्रचलित पाठ में मिल जाते हैं।

(6) 'रामसतसैया' के चार छंद उद्धृत हैं। जिनमें केवल दो का निर्देश स्पष्ट है। शेष नहीं मिल सके।[4]

---

1. *गोसाई. तुलसी दास – पृ. 244*
2. *तुअ जल यमुना जो जन जबहि नहाइ।*
   जात लोक हरि यम के मुँह मसि लाइ।। तुलसी भूषण, पृष्ठ 127 पद उद्धृत।
3. *कवितावली 1/7, 2/28, 7/14 और 7/40*
4. *लाटानुप्रास (एक शब्द बहु शब्द + भिन्न समास का उदाहरण दोहा 41 + व्यतिरेक का उदाहरण 1/7) 8*
   अनुपलब्ध दोहे :
   (I) कोमल वचनन्हि साधु मैं कोमल हियो मलीन।
   श्रवण सुधा धर मुख सुन्यो श्रवण सुधाधर कीन।।
   (II) माया माया नाथ की मोहै सब संसार
   देव देव वैरी मनुज कोउन जीतनिहार।।

(7) 'वैराग्य संदीपनी' के केवल तीन दोहे उद्धृत हैं जो प्रचलित पाठ में उपलब्ध हैं।[1]

(8) 'कृष्ण चरित्र' के तीन छंद उद्धृत हैं। ये 'कृष्ण गीतावली' में खोजने से नहीं मिले। हो सकता है कि तुलसी ने अलग से 'कृष्ण चरित्र' नाम का ग्रंथ लिखा हो।[2]

(9) सीता मंगल का पंचम प्रतीप के उदाहरण में एक बरवै उद्धृत है[3] – यह 'जानकी मंगल' का नहीं है, 'बरवै रामायण' का भी नहीं है। क्या गोस्वामी जी ने 'सीतामंगल' नामक कोई काव्य बरवै छंदों में लिखा था?

(10) विनय पत्रिका – इतने बड़े ग्रंथ में माला रूपक के उदाहरण में 'विनय पत्रिका' का निम्न छंद उद्धृत है –

नवकञ्ज लोचन कञ्ज मुख कर कञ्ज पद कञ्जारुणम्।[4]

(11) तुलसी साहित्य के अतिरिक्त 'तुलसी भूषण' के बीसों उदाहरण अन्य कवियों के लिए गए हैं, पर वे संख्या में कम हैं। एक दोहा बिहारी कृत भी है।[5] कुछ ऐसे उदाहरण हैं जो रीतिकालीन कवियों के हैं। 'धन्यता' का उदाहरण द्रष्टव्य है –

निसि अँधेरि नहि संग सखि ननदनाह के भौन।
पति विदेस हों एक सी ह्यॉं तू उतरंत कौन।।[6]

---

1. *वैराग्य संदीपनी – दोहे 35, 38 और 39*
2. (I) *वाजत ताल आनन गुड़ी मंजुल देव मृदंग।*
   तुलसी जल में नचत है राधा माधव संग। पृ. 48 पर उद्धृत कृष्ण चरित्र
   (II) *वरणौ अवध गोकुल ग्राम।*
   इहाँ राजत जानकी वर उहाँ श्यामा श्याम।
   इहाँ सरजू बहत अद्भुत उहाँ यमुना नीर।
   हरत किल्विष दोउ दुहु दिसि दुखित जन की पीर।
   भक्त के सुख रास कारण लिए द्वै अवतार।
   दास तुलसी सरण आयो कोउ उतारै पर। पृ. 70 पर उद्धृत कृष्ण चरित्र
   (III) *लोचन पन्द्रह पाँच मुख पशुवाहन दुर्गेस।*
   बशत ऊजरे कुधर पर तुलसी नमत महेस कृष्ण चरित्र पृ. 107
3. *नील कमल द्युति कवक कहा। मरकत मणि।*
   कितिक मनोहर मेघ देणि रघुकुल मणि।
   पञ्चम प्रतीप सीता मंगल उदाहरण – पृ. 103
4. *विनय पत्रिका – 45/2*
5. *लखि गुरजन विच कमल सो शीश छुवायो श्याम।*
   हरि सन्मुख करि आरसी हिये लगाई बाम।। बिहारी बोधिनी–451
6. *पृष्ठ 98*

'चित्रालंकार' के उदाहरणों में रसरूप ने स्वनिर्मित छंद उद्धृत किए हैं, क्योंकि तुलसी दास ने इन्हें अपनी रचनाओं में स्थान नहीं दिया था। स्वयं रसरूप ने तुलसी की ओर से उत्तर दे दिया है, इन्हें 'धृष्टकाव्य' कहा जाता है। फलतः तुलसी ने अपनी कृतियों में इनका संग्रह नहीं किया। इसीलिए 'अलंकार दर्पण' से जानकारी के लिए कवि ने उदाहरणों का संकलन कर दिया है।

संस्कृत साहित्य शास्त्र के संपुष्टक ग्रंथ

रसरूप ने 'तुलसी भूषण' की समाप्ति करते हुए स्वयं उपजीव्य ग्रंथों का नामोल्लेख किया है –

संमत काव्य प्रकास को और कुवलयानन्द।
चन्द्रालोक कलपलता चन्द्रोदय शुभकन्द।।

अर्थात् यह ग्रंथ काव्य प्रकाश, कुवलयानन्द, चंद्रालोक, कल्पलता और चन्द्रोदय के अनुसार निर्मित है। यहाँ यह विवेचन करना संगत प्रतीत होता है कि तुलसी भूषण की रचना में इन ग्रंथों तथा अन्य स्रोतों से कितनी सहायता ली गयी है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी के रीतिकालीन साहित्य के शास्त्रीय निरूपण के स्रोतों की चर्चा करते हुए लिखा है "हिंदी के अलंकार-ग्रंथ अधिकतर 'चंद्रालोक' और 'कुवलयानंद' के अनुसार निर्मित हुए। कुछ ग्रंथों में 'काव्य प्रकाश' और 'साहित्य दर्पण का भी आधार पाया जाता है। इस प्रकार दैव योग से संस्कृत साहित्य-शास्त्र के इतिहास की संक्षिप्त उद्धरणी हिंदी में हो गई।"[1] इसीलिए डॉ0 नगेंद्र ने इन आचार्यो की शैली को काव्य प्रकाश शैली और चन्द्रालोक शैली के नाम से पुकारकर इनके दो वर्ग मान लिये हैं। पर रीति कवियों की अलंकार निरूपण शैली पर ध्यान दें तो कम से कम तीन प्रकार की शैलियाँ दिखाई पड़ती हैं – एक ही छंद में लक्षण – उदाहरण प्रस्तुत करना, लक्षण के लिए अलग छंद और उदाहरण के लिए अलग तथा लक्षण के अनन्तर ऐसा वर्णन जिसमें उदाहरण भी वन सके। प्रथम पर 'चंद्रालोक' का प्रभाव है, द्वितीय पर 'काव्य प्रकाश' का, तृतीय पर विद्यानाथ के 'प्रताप रुद्रयशोभूषण' का। इन शैलियों के अतिरिक्त दूलह की स्वतंत्र शैली है, वे एक साथ लक्षण देकर फिर एकत्र उदाहरण देते हैं। आचार्य रस रूप ने एक अभिनव संदर्भ-पुष्ट समन्वित शैली का प्रयोग किया। उन्होंने कहीं केवल अलग लक्षण देकर तुलसी साहित्य से या अन्यत्र से

---

1 *हिन्दी साहित्य का इतिहास – पृ. 233 दसवाँ संस्करण*

उदाहरण दिए हैं, कहीं लक्षण और उदाहरण एक ही छंद में है, उसके बाद भी उदाहरण हैं। तदनंतर संदर्भ ग्रंथ के श्लोक उद्धृत हैं 'यथा कुवलयानंदः' शैली में। इसका कारण यह है कि उन्होंने भाषा कवियों के लक्षण भी लिए हैं। कहीं स्वयं लक्षण गढ़ लिए हैं और प्रमाण में श्लोक भी दे दिए। इस तरह 'तुलसी भूषण' संस्कृत एवं हिन्दी के अलंकार ग्रंथों की वृहद् उद्धरणी बन कर उपस्थित हो सका है।

यह सर्वमान्य सिद्धांत हो चुका है कि हिंदी के रीति आचार्यों ने अलंकार-मीमांसा में 'चंद्रोलोक' और 'कुवलयानंद' को अपना आदर्श बनाया। 'कुवलयानंद' यद्यपि 'चंद्रालोक' पर आधृत है, पर उसमें लक्षण और उदाहरण के विवेचन की जितनी स्पष्टता है, उतनी चंद्रालोक में नहीं। इसलिए अधिकांश रीतिकवियों पर 'कुवलयानंद' का प्रभाव अधिक है।[1] महाराज जसवंत सिंह कृत 'भाषा भूषण' में लक्षण और उदाहरण देने की शैली तो कुवलयानंद की अपनायी ही गयी है, उपमा से लेकर हेतु तक सभी अर्थालंकारों का अनुक्रम भी कुवलयानन्द के ही आधार पर आधृत है, यही नहीं 'भाषा भूषण' की अलंकार-परिभाषाएँ भी अधिकांशतः कुवलयानन्द के अलंकार लक्षणों के अविकल हिन्दी रूपान्तर मात्र है। 'भाषा भूषण' में प्रमुख अलंकारों के भेदापभेदों का विवेचन भी कुवलयानन्द के तत्तदलंकार-भेदों के विवेचन से अभिन्न है। 'कुवलयानंद' इतना प्रिय ग्रंथ हुआ कि दूलह कृत 'कविकुलकंठाभरण', रघुनाथ वन्दीकृत 'रसिक मोहन', श्रीधरकृत 'भाषाभूषण' रसिक सुमतिकृत 'अलंकार चन्द्रोदय', रसरूप कृत 'तुलसी भूषण', रामसिंह के 'अलंकार दर्पण', सेवादास कृत 'रघुनाथ अलंकार' और पदमाकर कृत 'पद्माभारण', गिरिधर कृत 'भारती भूषण' तक में 'कुवलयानन्द' का प्रभाव देखा जा सकता है। इसी प्रकार भामह, दण्डी, रुद्रट, उद्भट, मम्मट, जयदेव आदि ने भी न्यूनाधिक रूप में रीति कालीन अलंकार साहित्य को प्रभावित किया है। हिन्दी के कवि-आचार्य भाषा में अलंकारों के स्वरूप को उतार-देना चाहते थे।

जैसा कि पूर्वोद्धृत दोहे से स्पष्ट है कि 'तुलसी भूषण' के प्रेरक ग्रंथ कुवलयानंद, चन्द्रालोक, काव्य प्रकाश, कल्पलता और चन्द्रोदय रहे हैं। रस रूप ने 'कुवलयानन्द' के लक्षण और उदाहरण को भाषा में व्यक्त करने की कोशिश नहीं की है, प्रत्युत स्वतंत्र लक्षण देकर अधिकांशतः तुलसी साहित्य से उदाहृत करने की कोशिश की है, कहीं अन्यत्र से उदाहरण दिए हैं। कहीं लक्षण और

---

1. *हिंदी का अलंकार साहित्य – पृ. 53*

उदाहरण एक ही में देकर काम चालू कर दिया है और अन्त में 'कुवलयानंद' का श्लोक उद्धृत किया है। इस प्रकार कुवलयानन्द के प्रायः सभी श्लोकों (कुल 1602 श्लोक) को यथावत् संपुष्टि के लिए संगृहीत किया गया है। अतः 'तुलसी भूषण' का कर्त्ता 'कुवलयानंद' का इतना प्रबल पक्षधर है कि संपूर्ण ग्रंथ ही को प्रमाण में पेश कर देता है। इस पद्धति से एक साथ दो-दो ग्रंथ के पारायण में प्रवृत्त होना पड़ता है।

'चन्द्रालोक' के मात्र 8 बार उद्धरण आए हैं।[1] भाषा के लक्षणों में यत्र-तत्र श्लोकों की छाया निश्चित है, पर कुवलयानंद जैसी अपार ममता नहीं दिखाई देती।

'तुलसी भूषण' पर काव्य प्रकाश का प्रभाव दूसरे प्रकार का है। संपूर्ण ग्रंथ में दो अलंकारों (मालोपमा और अन्योक्ति) की संपुष्टि में दो श्लोक उद्धृत किए गए हैं[2] जो काव्य प्रकाश में उपलब्ध नहीं होते। मम्मट को अन्योक्ति अलंकार मान्य ही नहीं है। संभव है रसरूप के समय में काव्य प्रकाश का कोई दूसरा रूप प्रचलित रहा हो। दीपका वृत विरोधाभास, सहोक्ति, निदर्शना, परिसंख्या और व्यतिरेक में मम्मट के मत का उपयोग किया गया है। रसरूप ने मम्मट का नामोल्लेख मात्र कर दिया। वस्तुतः कुवलयानंद के श्लोकों को लक्षण एवं उदाहरणों में प्रस्तुत किया है।[3] विरोधाभास के सामान्य लक्षण कथन एवं उदाहरण के उपरांत वे विरोधाभास को मम्मट निरूपित दस प्रकार के[4] विरोधाभास से सोदाहरण स्पष्ट करते हैं – ये दस प्रकार निम्नवत हैं –

1. जाति जाति से विरोध 2. जाति गुण से विरोध 3. जाति क्रिया से विरोध 4. जाति द्रव्य से विरोध 5. गुण गुण से विरोध 6. गुण क्रिया से विरोध 7. गुण द्रव्य से विरोध 8. क्रिया क्रिया से विरोध 9. क्रिया द्रव्य से विरोध 10. द्रव्य

---

1. *तुलसी भूषण, कल्पित भ्रांति, अतद्गुण, अप्रस्तुत प्रशंसा, उपमेयोपमा, स्वभावोक्ति युक्तालंकार, दीपक कारक और वैचित्र्य अलंकार।*
2. (I) *वर्णे नान्यस्योपमाया मालायाश्च निरूपणम्।*
   निद्रेव रमिता नयनं प्राणे वरमिता हृदी।।
   –तुलसी भूषण पृ. 37 पर उद्धृत
   (II) *यत्रान्य परिगाना हुरन्यो क्तिस्त्र कथ्यते।।*
   –तुलसी भूषण, पृ. 46 पर उद्धृत
3. *पद अरु अर्थ पदार्थ्थ पुनि आवृत दीपक जानि।*
   तीन भाँति सो ग्रंथ मत मम्मट गये बखानि।। तुलसी भूषण पृ. 94
4. *यों विरोध दश भाँति सो मम्मट गए बषानि।*
   तिनेक देत उदाहरण सुकवि लेहु अनुमानि।। तुलसी भूषण पृ. 131
   जातिश्चतुर्भिर्जात्याद्यै विरुद्धा स्याद् गुणास्त्रिभिः।
   क्रिया द्वाभ्यामपि द्रव्यं द्रव्ये णैवेति ते दश। काव्य प्रकाश

द्रव्य से विरोध। इन्होंने इन सभी विरोधों को तुलसी साहित्य से उदाहृत किया है। अन्त में 'काव्य प्रकाश' सम्मत विरोधाभास को दो स्वरचित कवित्तों में[1] सभाष्य उपस्थित किया है। विरोधाभास का इतना विशद निरूपण रीतिकालीन आचार्यों द्वारा शायद ही हुआ हो। सहोक्ति, निदर्शना और परिसंख्या में[2] मम्मट के मत से अलंकारों को उदाहृत करने की चेष्टा की गयी है। मम्मट द्वारा निरूपित स्वरूप को रस रूप ने मान्यता देकर कई आचार्यों के मत के संग्रह का नियम स्वीकार किया। व्यतिरेक अलंकार के निरूपण में उन्होंने 24 प्रकार के व्यतिरेक का उल्लेख किया है।[3] उन्हें तुलसी साहित्य से उदाहरण लेकर स्पष्ट किया है। इस प्रकार रसरूप ने मम्मट द्वारा निरूपित अलंकार वैशिष्ट्य को ग्रहण कर भाषानुवाद कर के उपस्थित किया है।

रसरूप ने 'कल्पलता' और 'चंद्रोदय' का भी उपयोग इस ग्रंथ को तैयार करने में किया है। एक स्थल पर गुणाधिकोपमा अलंकार की संपुष्टि के लिए कल्पलता से एक श्लोक उद्धृत है।

अधिकाधिकं यत्र तत्र स्याद्धिगुणाधिकः।
शशांके षोडसः कांतिद्र्दात्रिश्ति कलामुखम्।।[4]

'कल्पलता' के अनुसार 16 प्रकार की उपमाएँ और 12 प्रकार के आक्षेप भी सन्निविष्ट किये गये हैं।[5] विरोधाभास में भी कल्पलता का आधार लिया गया है। आलंकारिकों में दंडी ने 32 प्रकार की उपमाएँ और उन्हीं का अनुसरण करते

---

1. *तुलसी भूषण – पृ. 133*
2. *सहोक्ति (पृ. 46), निदर्शना (पृ. 100) परिसंख्या (पृ. 111)*
   (I) *एक वस्तु को एक ही ठौर नियम जहँ होइ।*
   सब ठौरनि ते दूरि करि एकहिं मे कहि सोइ।।
   शब्द सु अर्थ निषेध ते प्रश्न प्रश्न वषानि।
   परिसंख्या है चारि विधि मम्मट मत ते जानि।। पृ. 111
   (II) *असंभवी सम्बन्ध को कछु सम्बन्ध जो होइ।*
   परिकल्पित उपमा किए निदर्शना है सोइ।। पृ. 100
3. *तुलसी भूषण 117*
4. *तुलसी भूषण – पृष्ठ 36*
5. *रसनोपमा, प्रतिवस्तूपमा, उपमेयोपमा, गुणधिकोपमा, मालोपमा, स्तवकोपमा, दूषणोपमा, भूषणोपमा, नियमोपमा, अभूतोपमा, अद्भुतोपमा, निर्णयोपमा, लक्षणोपमा, विरोधोपमा। अतिशयोपमा, विपरीतोपमा और संकीर्णोपमा। तुलसी भूषण पृ. 35 से 40 तक*
   प्रेमाक्षेप, अधीरजाक्षेप, धीरजाक्षेप, संशयोपमा, मरणाक्षेप, धर्माक्षेप, उपायाक्षेप और शिक्षाक्षेप, आशिषाक्षेप, प्रतिषेधाक्षेप निषिध्यारक्षेप जातिविषपकाक्षेप।

हुए केशव ने कविप्रिया में 22 प्रकार की उपमाएँ स्वीकार की।

इस संदर्भ में रसरूप ने 'कविप्रिया' से भी उपमा के कई भेदों के लक्षण लिए हैं।

चंद्रोदय : अयुक्तालंकार, चपलातिशयोक्ति और विक्षेप अलंकार का भी यत्किंचित् उपयोग किया गया है। 'चंद्रालोक' के एक श्लोक का उद्धरण दिया गया है।[1] विक्षेप अलंकार में चन्द्रोदय से लक्षणोल्लेख इस प्रकार है।

अन्यत्र क्रियाधिकारेण यत्रान्योत्कर्षत्वेन तुल्यस्तस्य विक्षेपः। इंद्रजाली न शूरमा।।

(जिसका जो अधिकार हो, उस कार्य को और ही करे, वहां विक्षेप अलंकार होता है।

इस प्रकार रसरूप ने आवश्यकतानुसार कुवलयानंद, चन्द्रालोक, काव्य-प्रकाश, कल्पलता और चन्द्रोदय का उपयोग कर तुलसी भूषण को प्रामाणिक बनाने की चेष्टा की।

(तुलसी भूषण) में अलंकारों का विवेचन

'तुलसी भूषण' अलंकारों का एक ऐसा संग्रह ग्रंथ है जिसमें इसके रचयिता सुकवि रसरूप में यथासंभव उपलब्ध अलंकारों को सोदाहरण प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। अन्य अलंकार ग्रंथों से इसका वैशिष्ट्य इस अर्थ में है कि इसमें उदाहरण तुलसी साहित्य से लिये गये हैं। रसरूप की दृष्टि में अलंकारों के दो भेद हैं [2] जिन्हें लक्षण और लक्ष्य के साथ उन्होंने प्रस्तुत किया है। शब्दालंकार 6 हैं - अनुप्रास, वक्रोक्ति, यमक, श्लेष, पुनरुक्तवदाभास और चित्र। अनुप्रास के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए आचार्य भामह[3] और आचार्य मम्मट[4], दोनों ने समान वर्णविन्यास को महत्व दिया है। रसरूप में भी 'जहँ समता द्वै वर्ण की' को अनुप्रास कहा है। उन्होंने अनुप्रास के तीन रूप माने हैं - 1. छेकानुप्रास 2. वृत्यनुप्रास 3. लाटानुप्रास। आचार्य उद्‌भट और मम्मट भी ये ही तीन प्रकार के अनुप्रास मानते हैं। वृत्यनुप्रास का संबंध तत्तद्‌वृत्तियों से है। वृत्तियाँ तीन हैं

---

1. *तुलसी भूषण पृष्ठ 39*
2. *अलंकार द्वै भाँति को सब्द अर्थ द्वै नाम।*
   तिन्ह के लक्षण लक्ष युत बरणत मति अभिराम।। तुलसी भूषण पृ. दोहा-6
3. *सरूप वर्ण विन्यास मनु प्रासं प्रचक्षते – भामह, काव्यालंकार 2.5*
4. *वर्णसाम्यमनुप्रासः। काव्य प्रकाश 9*

– उपनागरिका, कोमला और परुषा। इन्हीं को क्रमशः वैदर्भी, पांचाली और गौड़ी रीति भी कहते हैं। रसरूप भी इन्हीं तीनों के आधार पर वृत्यनुप्रास का निरूपण करते हैं। लाटानुप्रास में वर्णों की नहीं, अपितु पदों की आवृत्ति होती है पर आवृत्त पद में तात्पर्य मात्र का भेद होना आवश्यक माना गया। आचार्य मम्मट ने लाटानुप्रास के पाँच भेद माने हैं। रसरूप भी पाँच भेद मानते हैं।[1]

1. एक शब्द 2. बहुशब्द 3. एक समास 4. भिन्न समास 5. वचन समास। आचार्य मम्मट ने इसे ही इस रूप में कहा है –

1. केवल एक ही पद की आवृत्ति 2. अनेक पदों की आवृत्ति 3. एक ही समास में पद की आवृत्ति 4. दो अलग अलग समास में एक ही पद की आवृत्ति 5. समास और असमास में आवृत्त होने वाला पद।

अनेक पदों की आवृत्ति विषयक लाटानुप्रास का एक उदाहरण –

जाके पीअ विदेश तेहि शीत भानु सम भानु।
जाके पीअ विदेश तेहि शीत भानु सम भानु।।

वक्रोक्ति अलंकार का रसरूप ने शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों में उल्लेख किया है। हालांकि अर्थालंकार में यह कहकर काम चला लिया है कि शब्दालंकार में इसके लक्षण दिये जा चुके हैं, अर्थालंकार में केवल संग्रह कर रहा हूँ।[2] वक्रोक्ति को आचार्य रुद्रट ने शब्दालंकार में और रुय्यक और अप्पय दीक्षित ने दोनों को अर्थालंकार में रखा। रसरूप ने प्राचीनों के द्वारा स्वीकृत होने के कारण दोनों के अंतर्गत स्थान दिया। रुद्रट ने वक्रोक्ति का स्वरूप इस प्रकार दिया है, "जहाँ वक्ता के किसी विशेष अर्थ में प्रयुक्त वाक्य का श्रोता श्लेष या कण्ठध्वनि भेद के सहारे उससे भिन्न अर्थ लगा लेता है। इस भिन्न अर्थ की योजना या तो सभंग या अभंग श्लेष से संभव है या काकु अर्थात् कंठध्वनि के भेद से। इस प्रकार वक्रोक्ति के दो मुख्य भेद हैं – श्लेष वक्रोक्ति और काकु वक्रोक्ति। रुद्रट का यह वक्रोक्ति लक्षण ही परवर्ती आचार्यों को मान्य हुआ है। अप्पय ने भी "श्लेष काकुभ्यां अपरार्थत्व कल्पनं वक्रोक्तिः' कहा है। रसरूप ने वक्रोक्ति की परिभाषा पूर्ववर्ती आचार्यों जैसी ही दी है, पर उसके तीन भेद माने हैं – श्लेष वक्रोक्ति, काकु वक्रोक्ति और शुद्ध वक्रोक्ति। शुद्ध वक्रोक्ति

---

1. *एक शब्द बहु शब्द को एकरु भिन्न समास।*
पाँच भाँति लाटा कहैं पंचम वचन प्रकास।। तुलसी भूषण पृ. 3
2. *याको लक्षण शब्दालंकार में धरयौ है। अरु अर्थालंकार में संग्रह करतु हैं। प्राचीनोदित है ताते।। तुलसी भूषण पृ. 56*

में परशुराम - लक्ष्मण संवाद का प्रसंग उद्धृत किया है। परशुराम ने जब कहा कि इस कठोर कुठार से तुम्हें काट कर थोड़े ही श्रम में मैं गुरु ऋण से मुक्त हो जाता, इस पर लक्ष्मण की वक्रोक्ति द्रष्टव्य है -

मातहि पितहिं उरिन मै नीके।

गुर रिन रहा सोच बड़ जीके।।[1]

इस प्रकार वक्रोक्ति के विवेचन में रसरूप ने संस्कृत आलंकारिकों का अनुगमन किया है, पर शुद्ध वक्रोक्ति का उल्लेख कर किंचित मौलिकता भी दिखाई है।

यमक अलंकार का कई दृष्टियों से महत्व है। आचार्य भरत द्वारा स्वीकृत एवं परिभाषित चार अलंकारों में यमक एकमात्र शब्दालंकार है। भरत के अनुसार शब्द का अभ्यास अर्थात् शब्दावृत्ति यमक अलंकार है।[2] इस शब्दालंकार में वर्णावृत्ति तथा पदावृत्ति दोनों की धारणां निहित थी। भामह के अनुसार सुनने में समान किंतु अर्थों में परस्पर भिन्न वर्णों की आवृत्ति को यमक कहते हैं।[3] रुद्रक ने यमक में आवृत्त वर्णों में श्रुति की समता, क्रम की समानता तथा (सार्थक पदों में) अर्थ की भिन्नता वाञ्छनीय मानी है।[4] संक्षेप में जहां निरर्थक अथवा सार्थक स्वर व्यंजनों के समूह की आवृत्ति हो, वहां यमकालंकार होता है। यमक शब्द का अर्थ है दो। इसमें एक ही आकार वाले शब्दों का बार-बार प्रयोग होता है, इसलिए रसरूप ने भी परिभाषा इस प्रकार दी है।

''अर्थ और अक्षर ओई फिरि फिरि श्रवण जु होई''

उदाहरणार्थ - मूरति मधुर मनोहर देखी।

भयउ विदेह विदेह विसेखी।।

यहाँ विदेह शब्द दो बार आया है। पहले का अर्थ राजा जनक और दूसरे का अर्थ 'बिना शरीर वाला' है, अतः यहां यमकालंकार है।

आचार्यों ने यमक के अनेक भेद कर डाले हैं। भरत, भामह, दण्डी और

---

1. *राम चरित मानस 1/276/2*
2. *शब्दालङ्कार स्वरूपमाह शब्दाभ्यासस्तु यमकमिति।।*
   भरत, ना. शा. अभिनव भारती 2-326
3. *तुल्य श्रुतीनां भिन्नानामभिधेयैः परस्परम्।*
   वर्णानां यः पुनर्वादो यमकं तन्निगद्यते।। काव्यालङ्कार - 2/17
4. *रुद्रट, काव्यालङ्कार 3.1*

मम्मट आदि ने अपने-अपने ग्रंथों में इन भेदों की चर्चा की है। उनका विस्तार यहाँ अनावश्यक है।

श्लेषालंकार

'श्लेष' शब्द का अर्थ है 'चिपका हुआ'। जहाँ ऐसे शब्दों का प्रयोग हो, जिनके एक से अधिक अर्थ हों, वहाँ श्लेष होता है। अप्पय के अनुसार 'नानार्थसंश्रय: श्लेष:' है। रसरूप के अनुसार -

"पद अभिन्न भिन्नार्थ जहँ कहियत तहाँ श्लेष"

इसके दो भेद हैं।

(1) अभंग श्लेष

(2) सभंग श्लेष

अभंग श्लेष वह है जिसमें शब्दों के दो अर्थ करने के लिए उसका भंग - टुकड़ा न किया जाय।

रावन सिर-सरोज बनचारी।
चलि रघुवीर सिलीमुखधारी।।

यहाँ सिलीमुख के दो अर्थ हैं, बाण और भौंरा। क्योंकि 'रावण के सिर रूपी कमल वन में सिलीमुख की सेना प्रवेश कर रही हैं।' में केवल बाण अर्थ से खूबी नहीं आती। अत: दो अर्थ वाला सिलीमुख शब्द रखा गया है।

सभंग श्लेष वह है जिसमें शब्दों के टुकड़े कर के अर्थ निकाले जायें।

बहुरि सक्रसम बिनवहुं तेही। संतत सुरानीक हित जेही।।

यहाँ 'सुरानीक' के दो अर्थ हैं। (1) सुरा + अनीक = सेना अर्थात देवताओं की सेना। और (2) सुरा (शराब) + नीक = बढ़िया अर्थात शराब अच्छी है। पहला अर्थ इंद्र के पक्ष में लगता है क्यों कि उसे देवों की सेना प्रिय है और दूसरा अर्थ दुष्टों पर घटता है जो शराब के प्रेमी होते हैं।

आचार्यों ने श्लेष को शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों में स्वीकार किया है। इस प्रकार इसके दो रूप मान्य रहे हैं - शब्द श्लेष और अर्थ श्लेष। शब्द श्लेष का वर्णन शब्दालंकार में और अर्थ श्लेष का वर्णन अर्थालंकार में किया गया है। अप्पय दीक्षित ने वर्ण्य (उपमेय), अवर्ण्य (उपमान) और वर्ण्यावर्ण्य (उपमेयोपमान दोनों) की अनेकता के आधार श्लेष के तीन भेद किए।

पुनरुक्तवदाभास

आचार्य उद्भट के मतानुसार –

"इसमें पुनरुक्ति का आभास होता है अर्थात भिन्न-भिन्न पद एक ही वस्तु का बोध कराते से जान पड़ते हैं।[1] इसलिए जहाँ विभिन्न अर्थ वाले भिन्नाकार के पद सुनने में समानार्थी प्रतीत हों, वहाँ यह अलंकार होता है।[2] वस्तुतः एक ही अर्थ का भिन्न-भिन्न पदों से पुनः पुनः कथन पुनरुक्ति दोष माना जाता है, पर जहाँ तत्वतः अर्थ की पुनरुक्ति नहीं रहने पर भी आपातातः पुनरुक्ति का आभास होता है और विचार करने पर पुनरुक्ति का परिहार हो जाता है। इसलिए रसरूप ने कहा है –

"भिन्न पदनि में एक सो आभासित जहँ अर्थ"

उदाहरणार्थ :

देखा विधि विचारि सब लायक।
दच्छहिं कीन्ह प्रजापति नायक।।

यहाँ पर विधि और प्रजापति तथा पति और नायक में पुनरुक्ति सी दिखाई देती है। वस्तुतः पुनरुक्ति है नहीं। 'विधि' का अर्थ ब्रह्मा है और प्रजापति का अर्थ (दक्ष आदि दस लोककर्ता जिन्हें ब्रह्मा ने सृष्टि के आदि में उत्पन्न किया था) प्रजा का प्रधान और नायक का अर्थ नेतृत्व करने वाला।

पुनरुक्तिवदाभास के शब्दगत तत्व और अर्थगत तत्व को लेकर थोड़ा मतभेद रहा है। एक ओर रुय्यक और उनके अनुयायी विद्याधर, विद्यानाथ आदि ने इसे अर्थालंकार माना। दूसरी ओर आचार्य मम्मट ने इसे शब्दार्थोभयगत अलंकार माना है।

चित्रालंकार

आचार्य मम्मट के अनुसार जहाँ वर्णों की रचना खड्ग आदि की आकृति का हेतु बन जाती है, वहाँ चित्र नामक शब्दालंकार होता है।[3] आचार्य रुद्रट भी

---

1. *पुनरुक्तवदाभासमभिन्नस्तिवोद्भासि भिन्नरूप पदम्।*
   उद्भट, काव्यालंकार सार संग्रह पृ. 1
2. *पुनरुक्तवदाभासो विभन्नाकार शब्दगा।*
   एकार्थतेव शब्दस्य तथा शब्दार्थमोरयम्।। काव्य प्रकाश 9/86
3. *तच्चित्रं यत्र वर्णानां खड्गाद्याकृति हेतुता।। काव्य प्रकाश 8/85*

कहते हैं – ''जहाँ वस्तु के (पदम, खड्ग आदि वस्तु के) स्वरूप की रचना उसके चिह्न के साथ वर्णो के द्वारा विशेषभंङ्गी या विच्छित्ति से भी जाती है, वहाँ चित्र अलंकार होता है।[1] इसमें वर्णो के एक विशेष प्रकार के विन्यास की अपेक्षा रहती है। यह क्लिष्ट काव्य होता है। ये कवि की शक्ति मात्र के प्रदर्शक होते हैं, इसका दिग्दर्शन मात्र ही कराना उपयुक्त है। मम्मट ने काव्य प्रकाश में खड्गबंध, मुखबंध, पद्मबंध, सर्वतोभद्र आदि चित्रालंकारों का निरूपण कर अन्त में इनकी काव्यरूपता में संदेह व्यक्त किया है।

रस रूप ने चित्रालंकार को पंडितों की गवाही पर धृष्टकाव्य स्वीकार किया है। उनकी दृष्टि में तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में इसी से इनका संग्रह नहीं किया। उन्होंने अपने 'अलंकार दर्पण' में अनेक चित्रालंकारों का वर्णन किया है, उन्हें जानकारी के लिए 'तुलसी भूषण' में भी संगृहीत किया है। उन्होंने खड्गबंध, हारबंध, त्रिपदी, अश्वगति, गोमूत्रिका, कपाट चित्र, कमलबंध, सारिका चित्र, छत्रबंध, शेषबंध, चक्रबंध, अन्तर्लापिका, आद्यनाल्लापिका, बहिर्ल्लापिका, अनेकार्थ, मध्याक्षरी, गतागतचित्र, पदलोपचित्र, अन्तादिमुख चित्र, मातृका, अदन्त, निरोष्ठ, चित्रशब्द और कामधेनु आदि 24 चित्रालंकारों का सोदाहरण निरूपण किया है। अधिकांश उदाहरण रसरूप कृत हैं। चित्रालंकारों का इतना विस्तृत वर्णन हिन्दी रीति साहित्य में कम ही ग्रंथों में उपलब्ध होगा। बलवान सिंह की 'चित्रचन्द्रिका' चित्रालंकारों पर एक स्वतंत्र ग्रंथ है। रीतिकाल में मानसिक व्यायाम प्रधान दूरारूढ़ कल्पना प्रधान यह स्वरूप अवश्य ही विकसित होना चाहिए क्योंकि तत्कालीन राजदरबारों में चमत्कार उत्पन्न करने में इससे सहायता मिलती थी।

मूल्यांकन

रसरूप ने 'तुलसीभूषण' में 6 शब्दालंकारों का निरूपण किया। क्या इस क्षेत्र में उनकी मौलिक उद्भावना भी है? उन्होंने आचार्यों द्वारा निरूपित प्रमुख शब्दालंकारों (अनुप्रास, वक्रोक्ति, यमक, श्लेष, पुनरुक्तवदाभास और चित्र) को विवेच्य बनाया है। वक्रोक्ति में शुद्ध वक्रोक्ति की कल्पना की है। यमक और श्लेष आदि के भेद-प्रभेद में वे नहीं पड़े हैं। कहीं-कहीं साम्य निर्देश भी करते चलते हैं जैसे 'काकु वक्रोक्ति परिसंख्या से मिलती हैं' इन सभी अलंकारों में केवल श्लेष अलंकार के प्रमाण में कुवलयानन्द (श्लोक 64, 65) के श्लोक

---

1. *भङ्ग्यन्तर कृत क्रम वर्ण निमित्तनि वस्तु रूपाणि।*
साङ्कानि विचित्राणि च रच्यन्ते यत्र तच्चित्रम्।। रुद्रट, काव्यालंकार 2,1

उद्धृत किए हैं। चित्रालंकार को विशद रूप में सोदाहरण दिखलाने की कोशिश की गई है। शब्दालंकारों के विवेचन में विषयगत नवीनता नहीं है, पर संग्रह की रुचिरता अवश्य है।

अर्थालंकार

आचार्य रसरूप ने अर्थालंकारों के निरूपण में काव्य प्रकाश, चन्द्रालोक, कुवलयानंद, कल्पलता, चन्द्रोदय के अतिरिक्त अलंकारो भेदों को दिखलाते समय अन्य ग्रंथों से भी सहायता ली है। उन्होंने हिन्दी के रीति साहित्यकारों में केशव की 'कवि प्रिया' को विशेष महत्व दिया है। यत्र-तत्र स्वतः उद्भावना है। उन्होंने 111 अर्थालंकारों के लक्षण एवं उदाहरण दिए हैं। ध्यान देने की बात है कि उन्होंने अर्थालंकारों को अक्षरानुक्रम[1] में देने का क्रम रखा, आशिषालंकार से एकावली (संख्या 31) तक क्रम ठीक चला। उसके बाद रूपक से हेत्वलंकार (21) क्रम चला। पुनः क्रमालंकार से मुद्रालंकार (59 अलंकार)। उपलब्ध सभी प्रतियों में यही क्रम है।

इस ग्रंथ में 111 अर्थालंकारों का भेद सहित निरूपण है। सर्वप्रथम आशिषालंकार का वर्णन इस प्रकार है –

अथ आशिषालंकार लक्षणम्

मातु पिता गुरुदेव मुनि आशिष देत बनाय।
ताही सो सब कहत है आशिष केशवराय।।

यथा – सुफल मनोरथ होहि तुम्हारे।
राम लखन सुनि भये सुखारे।।

पुनः – होहु सदा तुम पियहि पियारी।
चिर अहिवात असीस हमारी।।

डॉ0 ओमप्रकाश शर्मा की दृष्टि में 'चाहे भगवान् राम का आशीर्वाद लेना तुलसी की भाँति रसरूप का उद्देश्य रहा हो, परन्तु काव्य शास्त्र में यह नया प्रयोग ही था।''[2] अर्थालंकारों के अक्षरानुक्रम से निरूपण के कारण उन्हें उक्ति के

---

1. *अर्थालंकार कथनम् – अक्षर को संबंध करि क्रम ही सो रसरूप।*
आदि वरन के नेम सो भूषन रचे अनूप।। तु. भू. पृ. 11
2. *रीतिकालीन अलंकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन – पृ. 117*

36 भेदों को स्थल पर रखना पड़ा। अलंकारों के क्रम-निर्वाह[1] पर दृष्टि करने पर स्पष्ट होगा कि उनके मूलभूत आधार सादृश्य, विरोध,शृंखला आदि से पृथक् हटकर इसमें नवीन परंपरा-निर्माण का प्रयास किया गया है।

अर्थालंकारों के निरूपण में रसरूप ने जिस व्यापक दृष्टिकोण और सारासारदर्शिनी प्रज्ञा से काम लिया है, वह भाषा में रचित काव्यशास्त्र-विषयक ग्रन्थों में अप्रतिम है। इसके लिए उन्होंने कविकल्पलता, कविप्रिया आदि के वर्गीकरण को भी मान्यता दी है। अपह्नुति के 10, आक्षेप के 12, उपमा के 27, उक्ति के 36 दीपक के 11, व्यतिरेक के 26 और विरोधाभास के 11 भेदों के विवेचन में उनकी सूक्ष्म दृष्टि को देखा जा सकता है। 'कल्पलता' के आधार पर उपमा के 16 भेदों के नाम दिये हैं। इन सभी के उदाहरण मानस से ही नहीं, प्रत्युत गीतावली, बरवै रामायण तथा रामशलाका से भी दिये गये हैं। बरवै रामायण से दो उदाहरण द्रष्टव्य हैं –

नियमोपमा अलंकार –

भाल तिलक सर सोहत भौंह कमान।
मुख अनुहरिया केवल चन्द समान।।

प्रथमपद में रूपक होता है। समान पद की अर्थावृत्ति करि रूपक को निवारण है।

अभूतोपमा अलंकार

उपमा जाइ कही न कछु जाको रूप निहारि।
सो अभूत उपमा कहैं केसवदास बिचारि।।

---

1. *आशिष, अपह्नुति (10 भेद), अवज्ञा (2 भेद), अनुज्ञा, अनन्वय, असम्भव, अतदगुण, अनुगुण, अमित, अधिक, अल्प, आक्षेप (12 भेद), असंगति, अनुमान, अर्थान्तरन्यास, अयुक्त, अयुक्तायुक्त, अर्थापत्ति, अन्योन्य, उपमा (24 भेद), उक्ति (36 भेद), उत्प्रेक्षा (9 भेद) ऊर्जस्वी, उन्मीलित, उल्लेख (3 भेद), उत्तर, उदात्त, उल्लास (4 भेद), एकावली, रूपक (20 भेद), रसवद्, रूपाभास, रत्नावली, लेश, सामान्य, सूक्ष्म, स्मृत, सार, सन्देह, समाहित, समाधि, सिद्ध, सम, समुच्चय, संख्या, सोपाधिरूपक, संभावना, संकर, संसृष्टि, हेतु, क्रम, कारणमाला, काव्यलिंग, चित्र, जातिसुभाव, युक्तं, युक्तायुक्त, युक्ति, तद्गुण, तुल्ययोगिता, दीपक, दृष्टान्त, धन्यता, निर्णय, निदर्शना, नियमविरोधी, प्रतीप, परिणाम, परिवृत्त, पर्यायोक्त, प्रहर्षण, प्रहेलिका, पूर्वरूपक, प्रत्यनीक, परिकर, परिकरांकुर, प्रेम, प्रसिद्ध, प्रश्नोत्तर, प्रतिषेध, परिसंख्या, पिहित, पर्याय, प्रत्याय, प्रतिबिम्ब, परस्पर, प्रस्तुतांकुर, विचित्र, व्यतिरेक, विधि, विपरीत, विनिमय, विशेष, व्याघात, विभावना, व्याजस्तुति, व्याजनिन्दा, विषादन, विषम, विरोधाभास, विकल्प, वैचित्र्य, विकस्वर, विशेष, भ्रान्ति, भाविक, मिलित, मिथ्या और मुद्रा।*

यथा गीतावली :

उपमा एक अभूत भइ तब जब जननी पटपीत ओढ़ाये।
नील जलद पर उडगण निरषत तजि सुभाव इमि तड़ित छपाये।।[1]

मालोपमा – रामचरितमानस से उदाहरण –

आगे राम अनुज पुनि पाछे। तापस वेष वने अति आछे।।
उभय बीच सिय सोहति कैसी। ब्रह्मजीव बिच माया जैसी।।
बहुरि कहौं छवि जस मन बसई। जिमि मधु बिच रोहिनि सोही।।[2]

इसी प्रकार उक्ति के 28 भेदों के निरूपण में भी रसरूप ने नवीनता दिखलाने की चेष्टा की है। इनके नाम इस प्रकार हैं – रूपकातिशयोक्ति, भेदकातिशयोक्ति, अक्रमातिशयोक्ति, चपलातिशयोक्ति, अत्युक्ति, सहोक्ति, व्यधिकरणोक्ति, विशेषोक्ति, विनोक्ति, निरुक्ति, प्रौढ़ोक्ति, लोकोक्ति, छेकोक्ति, विरोधोक्ति, स्वभावोक्ति, समासोक्ति, विवृतोक्ति, गूढ़ोक्ति, व्याजोक्ति, उन्नतोक्ति, दृढ़ातिशयोक्ति, सापह्नुवातिशयोक्ति, अन्यभवातिशयोक्ति और वक्रोक्ति। इनमें से अधिकांश 21 उक्तियों के लक्षण 'कवि प्रिया' से लिए गए हैं। पर उदाहरण तुलसी साहित्य से ही हैं। विवृतोक्ति के लक्षण और उदाहरण –

जहाँ गूढ़ श्लेष सो सुकवि प्रकासै अर्थ।
विवृतोक्ति तासों कहै बरणत बुद्धिसमर्थ।।[3]

यथा बरवै रामायणे –

बेद नाम कहि अंगुरिन्ह खण्डि अकास।
पठयउ सुपनखा कहँ लछिमण पास।।

वेद कहै स्रुति याते कान अरु आकाश कहै नाक ताते नाक कान काटने की संज्ञा करी। यह गुप्त श्लेष है।

'उन्नतोक्ति' और 'व्यधिकरणोक्ति' को समाविष्ट कर रसरूप ने उक्तियों के यथासम्भव प्राप्त सभी भेदों को समेटने की चेष्टा की है, यद्यपि पदुमनदास की 'काव्यमंजरी' में भी 'उन्नतोक्ति' का विवेचन है। इस प्रकार रसरूप ने अलंकारों के विवेचन में पूर्ववर्ती परंपरा के उत्तमांश को स्वीकार कर तुलसी साहित्य से उदाहृत करने की कोशिश की है। इससे इतना तो अवश्य ही सिद्ध हो जाता है

---

1. *गीतावली – बालकाण्ड पद 29/5*
2. *रामचरित मानस 2/123/1-4*
3. *तुलसी भूषण – पृ. 53*

कि भक्ति के मानक ग्रन्थों में भी अलंकारों की छवि–छटा पूरी मात्रा में है और वे वहाँ का काव्यशोभाकर धर्म के रूप में भावोत्कर्ष के साधन बन कर आये हैं। इससे इस धारणा कर भी निरसन हो जाता है कि अलंकार केवल रीतिकाव्य के लिये अनिवार्य है। वे वाग्विकल्प के अनन्त साधन हैं जिनसे भक्त कवि भी वाणी को महिमान्वित करते थे।

रसरूप ने 'धन्यता' और 'निर्णय' ये दो नये अलंकार भाषा-काव्य शास्त्र को दिये है।[1] 'धन्यता' का लक्षण देते हुए उन्होंने कहा है कि जहाँ वरणीय अर्थ से अधिक बात पैदा हो जाय, वहाँ 'धन्यता' अलंकार होता है।[2] उदाहरण इस प्रकार है –

निशि अधेरि नहि संग सखि ननद नाह के भौन।
पति विदेस हौं एक सी ह्याँ तू उतरत कौन।।

यह उदाहरण अधिक स्पष्ट नहीं है। यहाँ तुलसी–साहित्य से उदाहरण नहीं दिया गया। निर्णयालंकार वहाँ होता है, जहाँ बहुमुख एक ही निर्णय किसी बात के बारे में दे देते हैं।[3] उदाहरणार्थ –

यथा बरवै रामायणे –

कोउ कहत नरनारायण हरिहर कोउ।
कोउ कह बिहरत बन मधु मनसिज दोउ।।

उल्लेख विषे सुग्रीवादिक की उक्ति करि चन्द्रलांक्षण विषे। यहाँ भगवान् राम के सम्बन्ध में हर कोई व्यक्ति अपना निर्णय देकर कहता है, इसलिये निर्णयालंकार है। रसरूप ने चन्द्रलांछन के सम्बन्ध में सुग्रीवादिक[4] का जो निर्णय है, जिसे द्वितीय उल्लेख कहा है, वहाँ भी निर्णयालंकार माना है। लक्ष्य करने की बात है कि आचार्य रसरूप ने परस्पर साम्य रखने वाले अलंकारों का भी निर्देश किया है; इससे उनके जाग्रत विवेक का परिचय मिलता हैं। निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि रसरूप का 'तुलसी भूषण' – तुलसी साहित्य के अलंकार पक्ष विषयक अनुसंधान का प्रथम प्रामाणिक प्रयास है। इससे तुलसी के अलंकार-पक्ष पर कार्य करने वालों का दिशा-निर्देश मिला है।

---

1. *रीतिकालीन अलंकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन – पृ. 118*
2. *वरण अर्थ तें अधिक जहाँ उपजावै कुछ बात।*
   धन्यत तासों कहत है जाकी मत अवदात।।
3. *जहाँ होत है एक को निर्णय बहुमुख माँह।*
   अलंकार निर्णय कहत, तासों कविकुल नाँह।। तुलसी भूषण
4. *मानस 6/12/5-10*

एक बात लक्ष्य करने की और है कि 'तुलसी भूषण' के रचयिता पर अप्पय दीक्षित कृत 'कुवलयानंद' का इतना प्रभाव है कि उन्होंने अर्थालंकारों के लक्षण भाषा में देकर और तुलसी-साहित्य से उदाहृत कर उसे पुनः 'कुवलयानन्द' में प्रदत्त संस्कृतभाषा के लक्षणों से भी पुष्ट किया हे, बहुधा 'कुवलयानन्द' के उदाहरण भी साथ-साथ रखे हैं। उदाहरणार्थ अनन्वय अलंकार के लक्षण एवं उदाहरण यहाँ अविकल रूप में उद्धृत किए जा रहे हैं –

अनन्वयालंकार लक्षणम्

एकहि को कहिये जहाँ उपमा और उपमेय।
ताहि अनन्वय कहत हैं पण्डित सुकवि अजेय।।

यथा :

उपमा न कह कोउ दास तुलसी कतहुँ कवि कोविद कहैं।
बल विनय विद्या विनय सील शोभा सिन्धु इन सम येइ अहैं।।

पुनः

मिलत महा दोउ राज बिराजै। उपमा खोजि खोजि कवि लाजै।।
लही न कतहुँ हार हिय मानी। इन सम यह उपमा उर आनी।।

पुनः

निरवधि गुन निरुपम पुरुष भरत भरत सम जानि।
कहिय सुमेरु कि सेर सम कविकुल मति सकुचानि।।

कुवलयानन्द :

उपमानोपमेयत्वं यदेकस्यैव वस्तुतः।
इन्दुरिन्दुरिव श्रीमानित्यादौ तदनन्वयः।।

यथा :

गगनं गगनाकारं सागरः सागरोपमः।
रामरावणयोर्युद्धं रामरावणोयोरिव।।

इस प्रकार आचार्य रसरूप ने अर्थालंकारों के निरूपण में व्यापक एवं सूक्ष्म दृंष्टि का परिचय दिया है। उन्होंने संस्कृत एवं हिंदी ग्रंथों से लक्षण लेकर तुलसी वाङ्मय से उदाहृत करने की चेष्टा की है। स्थल-स्थल पर पार्थक्य स्पष्ट करने के लिए उदाहरण लिये गये हैं। इससे अलंकारों (मुख्यतः) अर्थालंकारों का स्वरूप अस्पष्ट नहीं रह गया है। कुछ उदाहरण स्वनिर्मित हैं। या तो वे तुलसी साहित्य में नहीं मिले या तुलसी ने उन्हें स्वतः छोड़ दिया है (जैसे चित्रालंकार)। इस प्रकार रसरूप ने रीतिकाल की सहज प्रवृत्ति (शृंगार) के प्रतिकूल तुलसी को आधार बना कर उस समय तक के ज्ञात सभी अलंकारों का स्वरूप निर्दिष्ट कर स्वच्छंद एवं मौलिक दृष्टि का परिचय दिया है।

अलंकारों (कुल 117 अलंकार) के निरूपण के साथ 'तुलसी भूषण' का

महत्व पाठानुसंधान की दृष्टि से भी है। इससे 'रामचरित मानस' और 'गीतावली' के पाठों पर नवीन आलोक पड़ सकता है।

मानस का काशिराज संस्करण	रसरूप कृत तुलसी भूषण
गरल सुधा रिपु करत मिताई।	गरल सुधा रिपु करत मिताई।
गोपद सिंधु अनल सितलाई।।	गोपद सिंधु अनल सितलाई।।
गरुड़ सुमेरू रेनु सम ताही।	गरुड़ सुमेरू सर्षप सम ताही।
राम कृपा करि चितवा जाही।।[1]	राम कृपा करि चितवा जाही।।[2]
जिअ बिनु देह नदी बिनु बारी।	जिअ बिनु देह नदी बिनु बारी।
तइसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।।[3]	तरु बिनु पात पुरूष बिनु नारी।।[4]
निंदहिं आपु सराहहिं मीना।	निंदहिं आपु सराहहिं मीना।
धिगु जीवनु रघुवीर विहीना।।[5]	जीवन जासु बारि आधीना।।[6]
सुनि पाती पुलके दोउ भ्राता।	पढ़ि पाती पुलके दोउ भ्राता।
अधिक सनेहु समात न गाता।।[7]	अधिक सनेहु समात न गाता।।[8]
बायस पलिहहिं अति अनुरागा।	बायस पालिय अति अनुरागा।
होहिं निरामिष कबहुँ कि कागा।।[9]	कबहुँ निरामिष होहिं कि कागा।।[10]

इस प्रकार तुलसी भूषण से मानस के कतिपय स्थलों के पाठ पर अर्थ स्वारस्य की दृष्टि से पुनर्विचार की नवीन संभावनायें हो सकती हैं।

सबसे बड़ा आश्चर्य तो 'गीतावली' के उदाहृत पदों को देख कर होता है। 'गीतावली' के प्रचलित पाठ से 'तुलसी भूषण' में उद्धृत पद सर्वथा भिन्न हैं। लगता है उस समय 'गीतावली' का कोई दूसरा रूप रहा होगा अथवा प्रचलित

---

1 *रामचरितमानस – काशिराज संस्करण, 5/5/2-3*
2 *तुलसी भूषण –*
3 *मानस 2/65/7*
4 *तुलसी भूषण –*
5 *मानस 2/86/5*
6 *तुलसी भूषण –*
7. *मानस 1/291/1*
8. *तुलसी भूषण –*
9. *मानस – 1/5/2*
10. *तुलसी भूषण –*

'गीतावली' से वे पद निकाल दिये गये हैं। यह भी लक्ष्य करने की बात है कि प्रचलित 'बरवै रामायण' के पाठ से 'तुलसी भूषण' में उद्धृत बरवै पाठ की समानता है। तुलसी साहित्य के अनुसंधायकों के लिए 'तुलसी भूषण' में कुछ नये नाम भी मिल सकते हैं। 'कृष्ण चरित्र'[1] सीता मंगल [2] आदि। संभव है, गोस्वामी तुलसीदास ने 'कृष्ण चरित्र' पर अलग से कोई ग्रंथ ही लिखा हो।

'तुलसी भूषण' की जो सार्थ (सटीक) प्रति मिली है, उसका भाषा के स्वरूप की दृष्टि से अतिशय महत्व है। इसमें 'काव्य-प्रकाश', 'कुवलयानंद', और 'चंद्रालोक' के संस्कृत श्लोकों की ब्रजभाषा में टीका है। अलग निकाल कर रखा जाय तो 'कुवलयानंद' के प्राय: सभी श्लोकों की ब्रजभाषा टीका प्राप्त हो जायेगी। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने काव्यों की ब्रजभाषा टीका में प्राप्त गद्य को सुव्यवस्थित और अशक्त कहा है। "उसमें अर्थों और भावों को सम्बद्ध रूप में प्रकाशित करने की शक्ति नहीं थी। वे टीकाएं संस्कृत की 'इत्यमर' और 'कथम्भूतम्' वाली टीकाओं की पद्धति पर लिखी जाती थीं।"[3] उन्होनें संवत 1892 की लिखी जानकी प्रसाद वाली 'रामचंद्रिका' की प्रसिद्ध टीका की भाषा का एक उदाहरण दिया है पर 'तुलसी भूषण' में 'कुवलयानंद' की टीका की भाषा सशक्त एवं व्यवस्थित है। एक उदाहरण पर्याप्त होगा।

कुवलयानंद :-

उक्तिरर्थान्तरन्यास: स्यात् सामान्य विशेषयो:।
हनुमानाब्धिमतरद् दुष्करं किं महात्मनाम्।।

टीका।। सामान्य विशेषयो:। याने सामान्य विशेष जो दोनों हैं तिश विषे जो उक्ति करे।। याने एक को स्थापन करे।। तिशको अर्थान्तरन्यास कहते हैं। जो व्यवहार बहुत जगह होय तिशको सामान्य कहिए। उदाहरण – हनुमान जी अब्धि जो है समुद्र विशे पार उतरि गए।। सो महात्मा जो हैं बड़े योग्य सब।। तिनको दुष्कर कुछ नहीं है। याने सब कर सकते हैं।। तो इहाँ विशेष कौन है।। समुद्र

---

1. कृष्ण चरित्र – *लोचन पन्द्रह-पाँच मुख पसुवाहन दुर्वस।*
वसत ऊजरे कुधर पर तुलसी नमत महेस।। इति कृष्ण चरित्रे।
बजत ताल आनन गुडी मंजुल देव मृदंग।
तुलसी जल में नचत हैं राधा माधव संग।।
कृष्ण चरित्र का दोहा, निरुक्तिका उदाहरण।

2. *सीता मंगल बिषे– नील कमल द्युति कवनन कहा मरकतमणि।*
कितिक मनोहर मेघ देखि रघुकुल मणि।।

3. *हिन्दी साहित्य का इतिहास – पृ. 406*

को पार करना।। सामान्य कौन है कि महात्मा के लेखे कुछ कठिन नहीं है।। इहाँ विशेष देषाय के सामान्य का स्थापन किया। ताते अर्थान्तरन्यास हुआ।

पुनर्यथा :-

गुणवद्वस्तु संसर्गाद्याति स्वल्पोऽपि गौरवम्।
पुष्प मालानुषङ्गेण सूत्रं शिरसि धार्यते।।

टीका : गुणावद्वस्तु संसगति। याने गुणयुक्त जो है वस्तु तिशके संसर्ग से स्वल्प: गौरवं याति।। याने छोटा जो है शो बड़े पद को प्राप्त होता है। उदाहरण: पुष्प माला प्रसंगेन।। याने फूल के माला के प्रसंग ते।। शूत्रं शिरसि धार्यते।। याने सूत्र को शिर पर रखना सामान्य है। सो देषलाय करके सूत्र को शिर पर रखना विशेष है।। विशे स्थापन किहिन।। ताते अर्थान्तरन्यास अलंकार हुआ।[1]

यह लक्ष्य करने की बात है कि टीकाकार ने मूल के भाव को अधिकाधिक स्पष्ट करने की चेष्टा की है। इस भाषा में दुरूहता नहीं है, अशक्तता भी नहीं है। टीका में दन्त्य 'स' के स्थान पर तालव्य 'श' का प्रयोग अधिक है। यहाँ तक कि संस्कृत के 'सूत्रं शिरसि धार्यते' को भी 'शूत्रं शिरशि धार्यते' बना दिया है। इससे संवत् 1920 की ब्रजभाषा का अनुमान हो सकता है।

सम्पूर्ण पुस्तक में केवल संस्कृत श्लोकों की टीका मिली है। पर उत्तर अलंकार के उदाहरण में तुलसीकृत चौपाइयों के गूढ़ार्थ के स्पष्टीकरण में गद्य का प्रयोग हुआ है। संभव है, रसरूप ने स्वयं यह गद्य लिखा हो। इससे संवत् 1811 के गद्य का नमूना मिल जायेगा।

उत्तरालंकार लक्षणम्

व्यंग्य सहित उत्तर जहाँ गूढ़ोत्तर सो होइ।
पुनि उत्तर ते प्रश्न को ज्ञान सो उत्तर दोइ।।

प्रथमो यथा –

सीतै चितै कही प्रभुबाता। अहै कुमार मोर लघुभ्राता।।

सीता को चितै करि उत्तर दियो यह व्यंग जो हम स्त्रीयुत हैं। अथवा सीता प्रति हास्य कर्‌यौ जो तुम पर सौति आवति है। यह व्यंग सो अनुकूल नायक को दूसरो विवाह उचित नाहीं। ताते लक्ष्मण कुमार हैं। अहो रामचन्द्र असत्य कह्यो

---

1. *तुलसी भूषण –*

टीकाकार पर शकार बहुला भाषा मागधी और बिहारी बोली का वचोभंगी का प्रभाव भी स्पष्टत: परिलक्षित होता है। (सं0)

लक्ष्मण को विवाह भयो है। कुमार कैसे भए। वहाँ षट वैश विषे आठ से पन्द्रह पर्यन्त कुमार वैश कहत हैं। याते व्यंग करि कै बचन सत्य है।

पुनः – प्रभु समरथ कोशलपुर राजा।
जो कुछ करहि उनहिं सब छाजा।।

प्रभु हैं स्वतंत्र हैं काहू की भय नाहीं। बिवाह करहि तो कोऊ बरजनिहार नहीं। बहुरि समर्थ्य हैं समर्थ्य हैं समर्थ्य को दोष न लगै। बहुरि कोशलपुर अयोध्या के राजा हैं ह्याँ के राजा सगर सहस्त्र विवाह करयो। राजा दशरथ पिता तीनि सौ साठि विवाह करयो जामे तीनिं पाटमहिषी हैं। श्रीरघुनाथ जी दो विवाह करैंगे तो कौन आश्चर्य है जोग्य ही है। अरु ए ईश्वर है जाइ कछु करै सो इक्षाजे समस्त सृष्टि इनहीं की है। इनकी निन्दा कोउ न करै। औ हम सेवक पराधीन हमको सर्वथा अयोग्य है। न हम प्रभु हैं न समरथ हैं न अवध के राजा हैं।। पराधीन हैं।

निष्कर्ष रूप में आचार्य रसरूप के 'तुलसी भूषण' को तुलसी साहित्य के अलंकार-निरूपण का कदाचित् प्रथम अनुसन्धानात्मक प्रयास कहना असमीचीन न होगा। उन्होंने संवत 1811 (सन् 1754) में रचित इस ग्रंथ में रीतिकालीन शृंगारिक धारा के विपरीत तुलसी साहित्य से उदाहरण लेकर अदृष्टपूर्व परंपरा का प्रवर्तन किया और इस धारणा का भी निरसन कर दिया कि भक्तिकालीन साहित्य में अलंकारों का सुष्ठु प्रयोग उतना नहीं होता जितना रीतिकालीन काव्यों में इसके साथ ही इस अलंकार ग्रंथ ने तुलसी साहित्य के पाठानुसंधान के लिए दिशा निर्दिष्ट की, तत्कालीन व्रजभाषा गद्य का उदाहरण प्रस्तुत किया और कुछ नये अलंकारों (धन्यता और निर्णय) को भी जोड़ा। अत: रीतिकाल में निर्मित इस रीतिग्रंथ का कई दृष्टियों से अविस्मरणीय महत्व है।

तुलसी भूषण

आधारभूत प्रतियाँ

1. तुलसी भूषण (हस्तलेख) – सरस्वती भंडार, रामनगर दुर्ग, वाराणसी संवत् 1856
2. तुलसी भूषण (दूसरी प्रति) – सरस्वती भंडार, रामनगर दुर्ग, वाराणसी
3. तुलसी भूषण (खंडित) – काशी नागरी प्र0सभा, वाराणसी संवत् 1900
4. तुलसी भूषण (सटीक) – मन्नूलाल पुस्तकालय, गया (बिहार) संवत् 1920

तुलसी भूषण

विषय सूची

।। श्री गणेशाय नमः ।।

अथ तुलसी भूषण लिख्यते।

दोहा – गुरु गणेश गिरिधर सुमिरि गिरा गौरि गौरीस।
मति मागत रस रूप कवि, राखि चरण पर सीस।।1।।
श्री तुलसी निज भनित मै भूषण धरे दुराय।
ताहि प्रकासन की भई मेरे चित में चाय।।2।।
सो कविता सब गुण सहित हैं जगबिदित सुभाय।
दीपक लै रस रूप ज्यों दिनकर दियो देखाय।।3।।
रामायन में जो धरे अलंकार को भेद।
ताहि यथामति बूझि कै रचत प्रबंध अखेद।।4।।
वौरनि (औरनि) के लक्षण लिए रामायन के लक्ष।
तुलसी भूषण ग्रंथ को या विधि कियो प्रतक्ष।।5।।
अलंकार द्वै भाँति को सब्द अर्थ द्वै नाम।
तिन्ह के लक्षण लक्ष युत बरणत भति अभिराम।।6।।

।। अथ शब्दालंकार कथनम् ।।

अलंकार बक्रोक्ति पुनि यमक श्लेष सुचित्र।
पुनरुक्तिवदाभास ए षट्विधि शब्द बिचित्र।।7।।

।। अथानुप्रास लक्षणम् ।।

जहँ समता है वर्ण की, अनुप्रास तेहि नाम।
छेक वृत्य लाटा सहित, तीनि भेद गुणधाम।।8।।

।। अथ छेका (छेक) लक्षणम् ।।

जहँ अनेक आखरन्हि की, श्रवण तुल्यता होइ।
सो छेकानुप्रास है, बरणत कवि सब कोइ।।9।।

यथा –

जद्यपि मनुज दनुजकुल घालक।
मुनि पालक खलसालक बालक।।[1]

।। अथ वृत्यानुप्रास (वृत्त्यनुप्रास) लक्षणम् ।।

जहाँ प्रथम बहु आखरन्हि एक अक्षर को नेम।
इहै वृत्ति है वृत्य की भाषत सुकवि सप्रेम।।10।।

यथा –

स्यामल गौर किसोर बर सुंदर सुषमा अयन।
सरद सर्बरीनाथ मुख सरद सरोरुह नयन।।[2]

पुनर्यथा – भवभव बिभव पराभव कारिनि। बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि।।[3]

।। वृत्यभेदः ।।

त्रिबिध वृत्य माधुर्य गुण उपनागरिका होइ।
मिलि प्रसाद पुनि कोमला परुषा ओज समोइ।।11।।

।। अथ उपनागरिका ।।

यथा – माधुर्य्यगुण बिन्दु समास युक्ता।।

।। सलाका विषे।। दोहा – रामचन्द मुख चन्द को चित चकोर जब होइ।
मंजुल मंगल मोदमय तुलसी मानत सोइ।।[4]

याको वैदर्भीहू नाम कहत हैं।

।। अथ कोमलावृत्य प्रसाद गुण सरलार्थ समास ।।

यथा – लागे बिटप मनोहर नाना। बरन बरन बर बेलि बिताना।।[5]

याको पंचालीहू कहत हैं।

---

1. *मानस 3/19/11*
2. *मानस 2/116*
3. *मानस 1/235/8*
4. *रामाज्ञाप्रश्न 6/4/4*
5. *मानस 1/227/4*

।। अथ परुषावृत्यम् ।।

।। ओजगुण टवर्ग रेफ योग युक्तम्।।

यथा – खग कंक काक सृकाल। कटकटहिं कठिन कराल।।[1]

छप्पयअस्फुटम् –

कटक कोट चहुँ ओर लगे कहुँ अटक न माना।
कटक चक्र अरु तेज अर्क दुरधर्ष निधाना।।
धरे बिर्क्ष (वृच्छ) पर्वत अनेक बर रूप मयंकर।
हटक न मानत गर्ज वज्र सम बीर धुरंधर।।
सो गर्व अर्व अरि टेरि करि झटकि चढ़े मर्कट अटा।
छबि यथा स्वर्ण वर सैल पर सोहै पटु पावस घटा।।[2]

याको गौड़ीहू नाम कहत हैं।

।। अथ लाटानुप्रास लक्षणम् ।।

दीन्हो पद जो देइ पुनि अभिप्राय के भेद।
सो लाटानुप्रास है समुझत सुकवि अखेद।।12।।

यथा –

जाके पीअ बिदेस तेहि सीत भानु सम भानु।
जाके पीअ बिदेस तेहि सीत भानु सम भानु।।[3]

एक सब्द बहु सब्द को एक रु भिन्न समास।
पाँच भाँति लाटा कहे पंचम बचन प्रकास।।

एक शब्द बहु शब्दौ

यथा रामसतसैया विषये –

कोमल वचनन्हि साधुभै कोमल हियो मलीन।
श्रवण सुधाधर मुख सुन्यो श्रवण सुधाधर कीन।।[4]

---

1. *मानस 3/20/13 पाठान्तर – खग काक विक्क सृकाल।*
   कटकटहिं कठिन कराल।।
2. *स्फुट छप्पय*
3. *स्फुट दोहा–(9/81) काव्यप्रकाश में उद्धृत श्लोक का छायानुवाद–*
   यस्य न सविधे दयिता दवदहनस्तुहिनदीधितिस्तस्य।
   यस्य च सविधे दायितादवदहनस्तुहिनदीधितिस्तस्य।।
4. *राम सतसैया*

एक समास यथा

भलो भलाइहि पै लहइ लहइ निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरताँ गरल सराहिअ मीचु।।[1]

दूजे पद मैं एक सब्द को समास है।

भिन्न समास यथा

राम सतसैया –

माया मायानाथ की मोहै सब संसार।
देव देव बैरी मनुज कोउ न जीतनिहार।।[2]

वचन समास

यथा –

रघुबर मुख की छवि बसी मेरी अँखियन आइ।
रघुबर मुख की छबि हमैं याते जग दरसाइ।।[3]

।। अथ वक्रोक्ति अलंकार लक्षणम् ।।

और भाँति की (के) बचन जहँ और लगावै कोइ।
श्लेष काकु कै शुद्ध ही (है) बक्र उक्ति सो होइ।।13।।

श्लेष वक्रोति यथा

गीतावली बिषे सूर्पनषा बचन राम प्रति –

कहत हरि तुमको सबै कोइ होइ गो मृगनाथ।
सूल समन प्रसिद्ध हौ यह वेद की है गाथ।।
चहत योग बिवाह तुम सों करिय पद की चेरि।
लखन तें करि सैन तुलसी हँसे सिय तन हेरि।।[4]

प्रथम चरण मैं श्लेष है।

काकु वक्रोक्ति यथा

मातु बिषाद बाद कत कीजत नहिं ऐहैं रघुबीर।
हरिहैं दुअन (दुजन) संघारि सकुल दल यह दुख दुसह सरीर।।[5]

---

1. *मानस 1/5*
2. *रामसतसैया–*
3. *रामसतसैया*
4. *गीतावली–*
5. *अज्ञात*

पुन :– मैं सुकुमारि नाथ बन जोगू। तुम्हहि उचित तप मो कहुँ भोगू।।[1]

।। याको काकोक्ति भी कहतु हैं ।।

काह न पावक जारि सक का न समुद्र समाइ।

का न करै अबला प्रबल केहि जग कालु न खाइ।।[2]

पुन : –

मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही।।

तृष्णाँ केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा।।[3]

गुन कृत सन्यपात नहि केही। को न मानमद नहिं जग जेही।

जोबन ज्वर केहि नहिं बलकावा। काहि न सोक समीर डोलावा।

कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा।।

सुत बित लोक ईषना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी।।[4]

दोहा – श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि।

मृगलोचनि लोचन बिसिख को अस लाग न जाहि।।[5]

यह काकोक्ति परिसंख्या के भेद ते मिलतु है।।

शुद्ध वक्रोक्ति यथा

परशुराम वाक्यम् – न त यहि काटि कुठार कठोरें। गुरहि उरिन होतेउँ श्रम थोरें।।[6]

लखन वक्रोक्ति – माता पितहिं उरिन भए नीकें। गुर रिनु रहा सोचु बड़ जीकें।।[7]

परशुराम :– दूरि करहु किन आँखिन ओटा। देखत छोट खोट नृप ढोटा।।

विहसे लखनु कहा मन माहीं। मूँदें आँखि कतहुँ कोउ नाहीं।।[8]

पुनर्यथा –

अब कहु कुसल बालि कहँ अहई। बिहँसि बचन तब अंगद कहई।।

दिन दस गएँ बालि पहिं जाई। बूझेहु कुसल सखा उर लाई।।[9]

---

1. *मानस 2/67/8*
2. *मानस 2/47*
3. *मानस 7/70/7–8*
4. *मानस 7/71/1–2,5,6*
5. *मानस 7/70*
6. *मानस 1/275/8*
7. *मानस 1/276/2*
8. *मानस 1/280/7–8*
9. *मानस 6/21/7–8*

।। अथ यमकालंकार लक्षणम् ।।

अर्थ और अक्षर ओई फिरि फिरि श्रवण जु होइ।
यमक अनेक बिधान सों बरणत है कवि लोइ।।14।।

यथा – अस मानस मानस चख चाही। भइ कविबुद्धि विमल अवगाही।।[1]

पुन :– मूरति मधुरमनोहर देखी। भयउ बिदेहु बिदेहु बिसेषी।।[2]

।। अथ श्लेषालंकार लक्षणम् ।।

पद अभिन्न भिन्नार्थ जहँ कहियत तहाँ श्लेष।
कबि कोबिद बरनत सबै बहु बिधि सहित विशेष।।15।।

यथा – पूजा कीन्हि अधिक अनुरागा। निज अनुरूप सुभग बरु मांगा।।[3]

पुन :– लेइ उसास सोच यहि भाँती। सुरपुर तें जनु खँसउ जजाती।।[4]

प्रथम चौपाई में बरु श्लेष है दूसरि विषे सुरपुर है।।

पुन :– सो श्लेष जहाँ शब्द में अनेकार्थ ठहराइ।
कामिनि दामिनि लसत है घनस्यामहिं लपटाइ।।

कुवलयानन्दो यथा –

नानार्थ संश्रय: श्लेषो वर्ण्यावर्ण्योभयाश्रित:।
सर्वदो माधव: पायात् स योऽगं गामदीधरत्।।
अब्जेन त्वन्मुखं तुल्यं हरिणाहित सक्तिना।
उच्चरत भूरि कीलाल: शुशुभे वाहिनी पति:।।

।। इति त्रिविध:।।

।। अथ पुनरुक्तिवदाभास लक्षणम् ।।

भिन्न पदनि मे एक सो आभासित जहँ अर्थ।
पुनरुक्तिवदाभास तेहि भाषत सुकवि समर्थ।।16।।

यथा – देखा विधि बिचारि सब लायक। दच्छहिं कीन्ह प्रजापति नायक।।[5]

'विधि' 'प्रजापति' अरु 'पति' 'नायक' पुनरुक्ति सी भासति है।।

---

1. *मानस 1/39/9*
2. *मानस 1/215/8*
3. *मानस 1/228/6*
4. *मानस 2/148/6*
5. *मानस 1/60/6*

।। अथ चित्रालंकार लक्षणम् ।।

खड्गाद्याकृत बन्ध बहु कामधेनु दै आदि।
चित्रालंकृति बिबिधि बिधि बरणत सुकवि अनादि।।17।।
धृष्टकाव्य याको कहत पण्डित सुमति निवास।
नहि याको संग्रह कियो ताते तुलसीदास।।
अलंकार दर्पण बिषे मैं बरणे बहु चित्र।
तिन्हें जानिबे हेतु अब रूप देखावत मित्र।।

।। अथ खड्गबन्धः ।।

।। कुलकलधौल जलपाल दल साल षल।।

।। हारबन्धादि चिन्तामणि कृतम् ।।

हारबंध त्रिपदी अश्वगति गोमूत्रिका कपाटबंध एक ही दोहा बिषे धर्‍यौ है।

दोहा – हरि हरि फिरि फिरि टेरि करि हेरि हेरि गिरिधारि।
भरि भरि ढरि ढरि वारि धरि मोरि मोरि मुरि नारि।।

अथकमलबंध

यथा छप्पय –

पंडित लखि चित दौर करत उर भरम सकल भर।
जगत वसीकृत अजिर दमित रतिपति करय नं शर।
ललित खँजन गति सुघर सहित अंजन-पिय मनहर।[1]

अथ सारिका बंध

यथा सवैया –

अरधंग उमासिव गंग धरे डमरू करवर्त सदा बिनु पाए।
रमि सोच विहाय बहाय सकोच दिगंवर वस्त्र विहीन सुभाए।
रह वाहन वैल लिए वन में ओहवावर को नित वेष बनाए।
रसरूप कहावत संक न मान मही को अकर्म मिटे जेहि ध्याए।[2]

---

1 *स्फुट छप्पय*

2 *स्फुट सवैया*
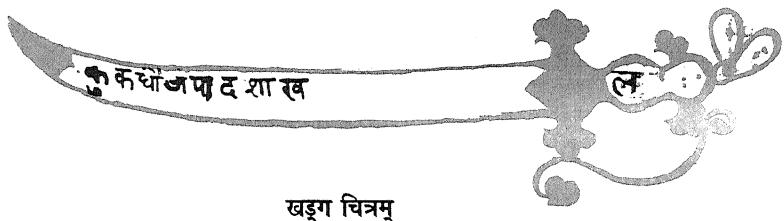
खड्ग चित्रम्
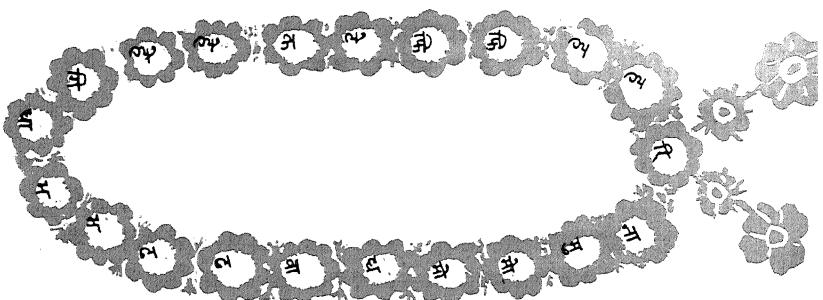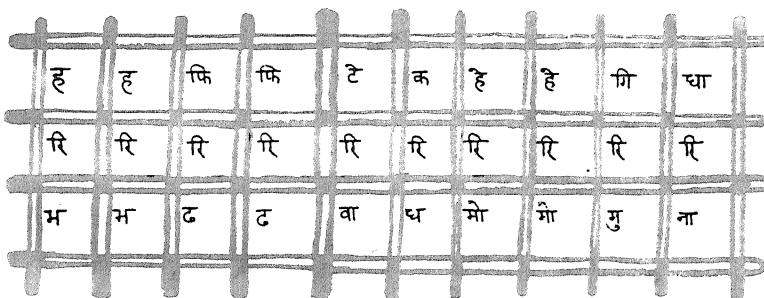
हार चित्रम्

त्रिपदी चित्रम्
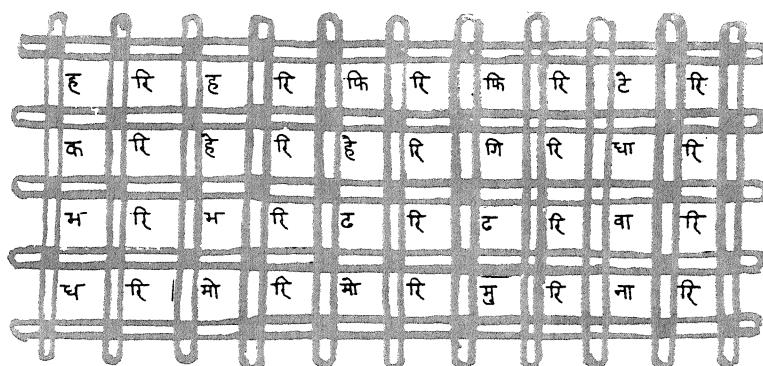
अश्वगति चित्रम्
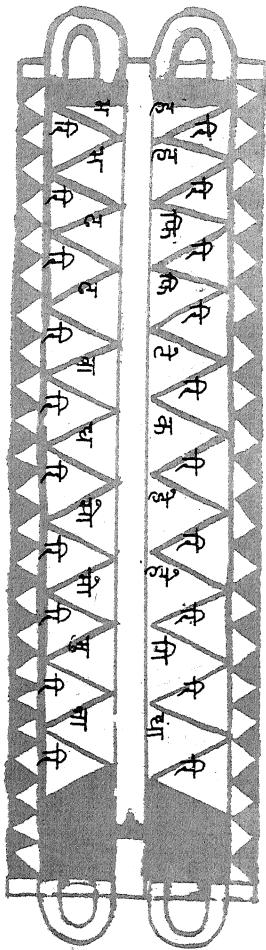
गोमूत्रिका चित्रम्
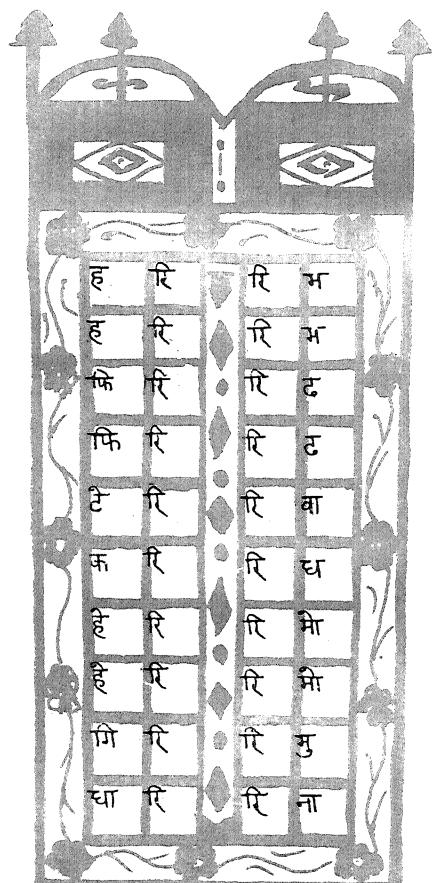
कपाट चित्रम्
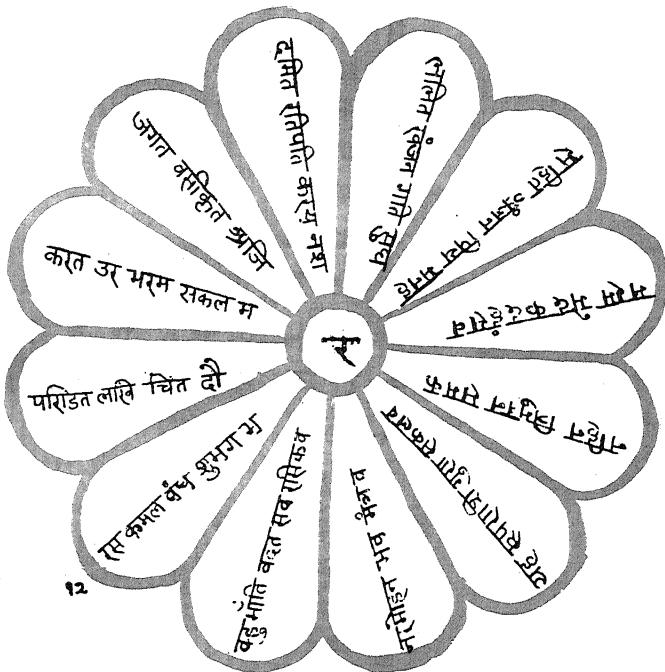
कमल चित्रम्
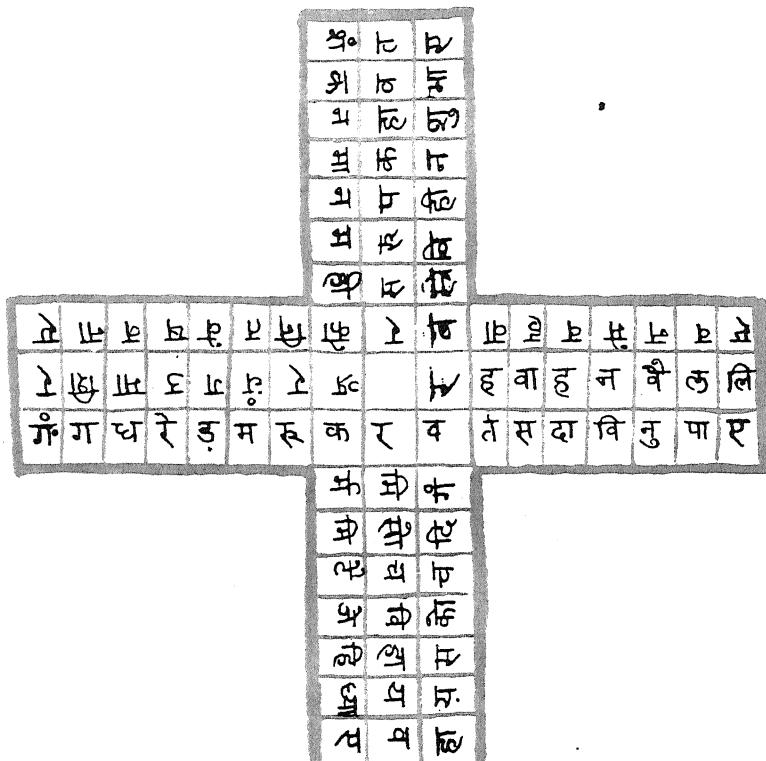
सारिका चित्रम्

अथ छत्रबंध

यथा छप्पय -

कनक दण्ड मय लसित तरणि छवि मिलि मन मोहै।
मुक्ता रजत सुहीर रचित रचना सुभ सोहै।
विसद विचित्र विसाल लषन दक्षिण कर धारिय।
वेद विप्रवर पढ़हि हितनि तन मन धन वारिय।
रसरूप भारतिहि होत श्रम मनहु दूसरो सूर उआ।
राजाधिराज रघुवंस मणि रामचंद्र सिर छत्र धुअ।।[1]।।

छत्र चित्रम्

1. स्फुट छप्पय
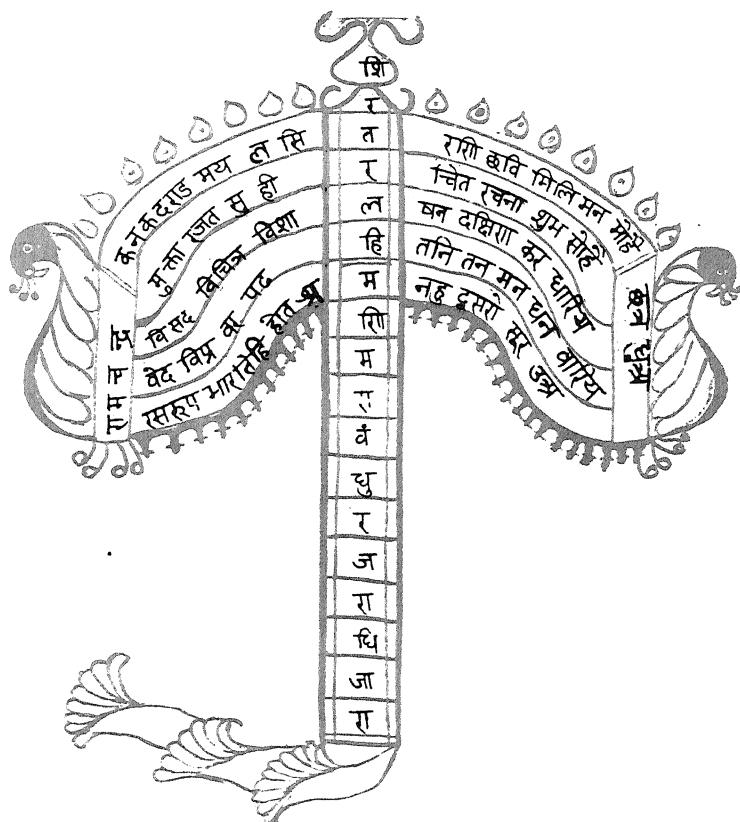
अथ शेशबंध

यथा श्लोक -

द्राक्षास्नेह क्रियाया तदनु किल कुल ज्ञानताम
प्रमाणनिष्टं मंत्रं सुगोप्य प्रहतिन मनसासंग तत्वं तु येन।
सर्प्प शेमानवेशो महतिमति युति प्राप्य राया प्रसन्नानुत्वा
तुष्टे मदर्प्येङ्घ्रिनिगणित निशंवेति सुघ्यन्ति रक्षा:।।[1]।।

शेष चित्रम्
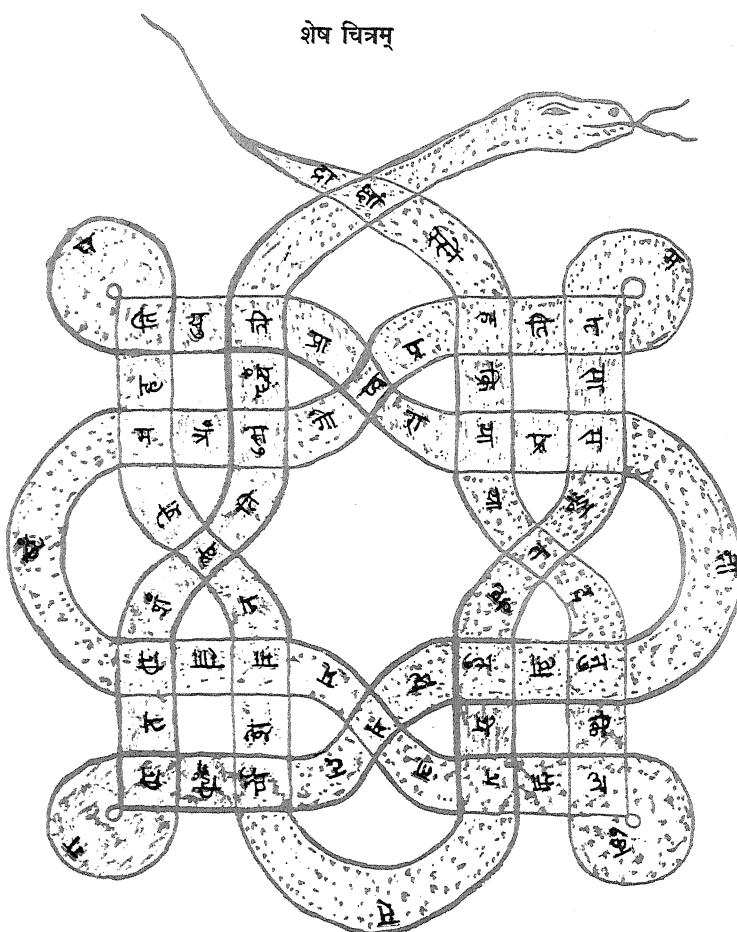
1. स्फुट श्लोक

अथ चक्रवंधोऽयम्

यथा श्लोक –

श्रीमद् राम दया सिन्धो पाहि मां शरणागतम्।
श्री सुरेश रमाधीश पाप नाश सखा वद।।[1] चक्रचित्रम्।।
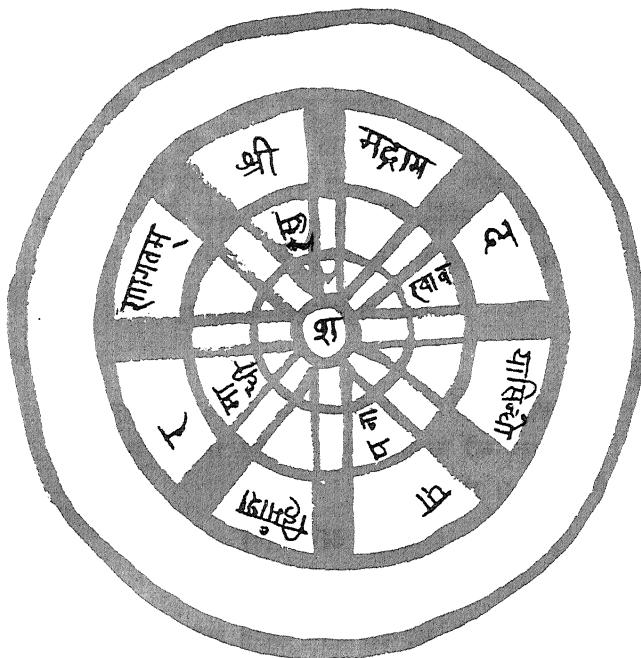
चक्र चित्रम्

---

1. स्फुट श्लोक

अथ अन्तर्ल्लापिका

यथा छप्पय –

कठिन कौन अपमान रहै कब लो यश छायो।
केहि ते सोहत चंद्र अछैधन कौन बतावो।
का सुदेश नर चहै वेदभव केहि ते भाजै।
तिय उर सालत कौन पाय धन केहिते राजै।
कहि कौन सुंदरी रूपमय कवि रसरूप उदारमति।
सुख सम्पन्न लहै न कौन जग जानि राम पग सो न रति।।[1]

अथ आद्यन्तर्ल्लापिका

यथा छप्पय –

जग जोवन रिपु कौन काहि मुनि सिद्ध सतावै।
काहि कुटिलता अधिक वारि दहि कौन बहावै।
इह कहि दल छवि कहा वारिनिधि पुत्र कौन चल।
राति कौन अति अमल यथोचित कौन देत फल।
वाणिहि विशेष चित प्रिय कहा गरल कहां नित वास कर।
कहि महादानि रसरूप को राम नाम भजि काम तर।।[2]

अथ बहिर्ल्लापिका

यथा दोहा –

क्षीण कहा तरु विरहिको कँह रह अति विषवंत।
मधुप करै काकौ नवन मृग तजि भजै वसंत।।[3]

दव विकलम् ।। इति यंत्रिका।।

अथ अनेकार्थ

यथा छप्पय –

कौन मृगनि को ईश कौन स्वाती जल चाहत।
को विरंचि को जनक कौन सुमनस रस गाहत।
कौन अगिनि को मित्र कुमुद को सुखद बषानिय।
कोन जगत को नैन काहि जग जीवन जानिय।
कहि कौन पसुन में अति चपल कौन मंद गति चित्तधरि।
रसरूप जन्म फल केहि जपे सबको उत्तर एक हरि।।[4]

---

1. रसरूप कृत छप्पय 2. रसरूप कृत छप्पय 3. स्फुट दोहा 4. रसरूप कृत छप्पय

अथ मध्याक्षरी

यथा छप्पय -		रसिकतियहि का कहिय कहा गृह सेस बषानिय।
	रसिली	विधिवाहन कहि कौन कौन विधि को पितु मानिय।
	पाताल	हर को भूषण कहा कहा विनसत रवि देषे।
	मराल	जग जीतै कहि कौन फूल के विसिष विसेषे।
	कमल	इन तीनि तिनि अच्छरनि में आदि अन्त एक एक तजि।
	भसम	रहि जाइ सो चित्त विचारि कर त्यागि सोच रसरूप भजि।।[1]
	निहार	
	मयन	

अथ गतागत चित्र

यथा सवैया -

जात सुक्यों मतु के अति ही तितिही तिअ के तुम क्यों सुतजा।
जा छन को मनु को नभ यो यो मन को तुम को न छजा।
जाल नषै लग अंजनि ओ ठठवो निज अंग लषै नल जा।
जा सहु नेम सही जहु जानन जाहु जही सम नेहु सजा।।[3]

।। अथ पदलोप चित्र ।।

यथा मनोहर छंद-

---
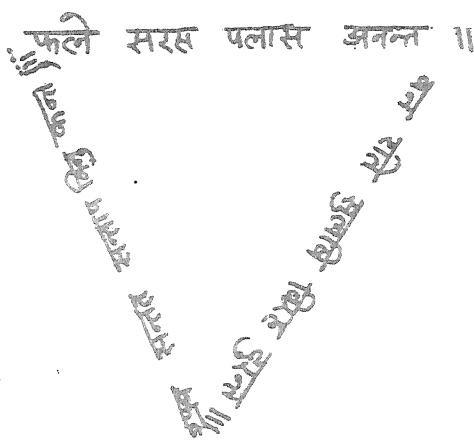
1. रसरूप कृत छप्पय 2. स्फुट सवैया 3. स्फुट मनोहर छंद

।।अन्तादिमुख चित्रम् । यथा सवैया।।[1]

1. स्फुट सवैया

अथ मातृका

यथा – मम मन घर वन रहत सरद तर।
सरद कमल सम चरण वसत हर।।[1]

अथ अदन्त

यथा दोहा– सजनी श्याम शरीर में, लसै जलज के माल।
यमुना में रसरूप जनु जुरे हंस के जाल।।[2]

अथ निरोष्ठ

यथा दोहा – आनन सुन्दर लसत चषु चंचलता के गेह।
जानौ जलज ससंक है ससि सो कियो सनेह।।[3]

चित्रशब्द

यथा दोहा – जग जीतै सर सुमन ते कौन करे यह काम।
पूजत है रसरूप वह कौन देवता वाम।।
कासीपति सेवत सदा को परहित जगजोय।
केसरि लहै न तीय तन कहा करिय गुरु लोय।।[4]

अथ कामधेनु

यथा सवैया–

काम धरै तन लाज मरै कब मानि लिए रति मान गहै रुख।
वाम वरै गण साज करै अब कानि किए पति प्राण दहै दुख।।
धाम धरै धन राज हरै तब मानि विए मति दान लहै सुख।
नाम ररै मन काज सरै सब हानि हिए मति दान लहै मुख।।[5]

(इति शब्दालंकार समाप्तः)

---

1. *स्फुट छंद*
2. *रसरूपकृत दोहा*
3. *स्फुट दोहा*
4. *स्फुट दोहे*
5. *स्फुट सवैया*
श्री काशिराज सरस्वती भंडार की एक प्रति में कामधेनु का एक अन्य उदाहरण भी दिया गया है–

श्री घनश्याम सुजान ऐ सावरे अंग सो बीन बजावत आवैं।
मोहनमूरति मैन सखाणि के संग सो तान अनेकणि गावैं।
राजत पीत दुकूल है प्रेम उमंग सो गोपिनि रीझि रिझावैं।
भूतल के सुख दैन सुरंग तरंग सो बारिज नैन नवावैं।।

।। अथ अर्थालंकार कथनम् ।।

अच्छर को संबंध करि क्रम ही सो रसरूप।
आदि बरन के नेम सो भूषन रचे अनूप।।
ॐ शून्यम्। अकारादि कथनम्।।

।। अथ आशिषालंकार लक्षणम् ।।

मातु पिता गुरुदेव मुनि आशिष देत बनाय।
ताही सो सब कहत हैं आशिष केसवराय।।1

यथा – सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। राम लखनु सुनि भये सुखारे।[1]
पुन: – होएहुँ संतत पियहिं पिआरी। चिर अहिवात असीस हमारी।[2]

अपह्नुति अलंकार षड्धा

शुद्ध हेत पर्यस्त भनि भ्रान्त छेक जिय जानि।
नहिं वाचक इन पाँच के कैतव मिसु परिमानि।।2।।

।। शुद्धापह्नुति लक्षणम् ।।

बरन मेटि अबरन कहै सुद्धापह्नुति जान।
इन्दु नहीं अरबिंद है नभ गंगा ते मानि।।

यथा –

मै जो कहा रघुबीर कृपाला।
बन्धु न होइ मोर यह काला।।[3]

कुवलयानंद :

शुद्धापह्नुतिरन्यस्यारीपार्थो धर्मनिह्नवः।
नायं सुधांशु: किं तर्हि ? व्योम गंगा सरोरुहम्।।

।। हेत्वापह्नुति लक्षणम् ।।

धर्म दुरैयै युक्ति सो हेत्वापह्नुति सोइ।
तीव्र चन्द्र नहिं रैन रबि यह बड़वानल होइ।।

---

1. *मानस 1/237/4*
2. *मानस 1/334/4*
3. *मानस 4/8/4*

यथा बरवै रामायणे –

डहकिनि है उजिअरिया निसि नहिं छाम।
जगत जरत अस लागु मोहि बिनु राम।।[1]

कुवलयानंदः –

स एव युक्ति पूर्वश्चेदुच्यते हेत्वपह्नुतिः।
नेन्दुस्तीव्रो न निष्यर्कः सिन्धोरौर्वोऽयमुत्थितः।।

।। पर्यस्तापह्नुति लक्षणम् ।।

जहं निषेध करि और मे औरहि में आरोप।
पर्यस्तापह्नुति (हैं) कहत ताहि सुमति करि चोप।।

यथा गीतावली –

मीन में नहि प्रीति सजनी पंक में नहिं प्रेम।
एक गति मति एक ब्रत यह भरत ही में नेम।।

कुवलयानन्द :

अन्यत्र तस्यारोपार्थः पर्यस्तापह्नुतिस्तु सः।
नायं सुधांशु किं तर्हि ? सुधांशुः प्रेयसीमुखम्।।

।। भ्रान्तापह्नुति लक्षणम् ।।

संका मेटै भ्रांति की भ्रान्तापह्नुति सोइ।
ताप कम्प है ज्वर नहीं सखी मदन तप होइ।।

यथा –

कहै विभीषन सुनहु कृपाला। तड़ित न होइ न बारिद माला।।
छत्र मेघडंबर सिर धारी। सोइ जनु जलद घटा अँधियारी।।
मंदोदरी श्रवन ताटंका। सोइ प्रभु जनु दामिनी दमंका।।
बाजहि ताल मृदंग अनूपा। सोइ रव मधुर सुनहु सुर भूपा।।[2]

पुनः –

कहेउ राम जनि हृदय डेराहू। असनि न लूक न केतु न राहू।।
ए किरीट दसकंधर केरे। आवत बालितनय के प्रेरे।।[3]

---

1. *बरवैरामायण–37*
2. *मानस 6/13/3–7*
3. *मानस 6/32/7–8*

पुनः -

मुनि न होहु यह निसिचर घोरा। मानहु सत्य बचन कपि मोरा।।[1]

कुवलयानंदः -

भ्रान्तापह्नुतिरन्यस्य शंकायां भ्रांतिवारणे।
तापं करोति सोत्कम्पं, ज्वरः किं ? न सखि! स्मरः।।

।। कल्पितभ्रांतिपूर्विका ।।

यथा -

हमहिं देख मृग निकर पराहीं। मृगी कहहिं तुम कहँ भय नाहीं।।
तुम्ह आनंद करहु मृग जाए। कंचन मृग खोजन ए आए।।
संग लाइ करिनी करि लेहीं। मानहुँ मोहिं सिखावन देहीं।।[2]
'मानहुँ' पद उत्प्रेक्षा को व्यंजक है,, अन्तर्गर्भ ते निर्दोष जानिए।।

चंद्रालोकः -

हृदि विशलताहारो नायं भुजंगमनायकः।
कुवलयदल श्रेणी कण्ठे न सा गरलद्युतिः।।
मलयजरजोनंदं भस्म प्रिया रहिते मयि।
प्रहरणाहर भ्रान्त्यानङ्ग क्रुधा किमुधावसि।।

कुवलयानंदः -

जटा नेयं वेणीकृत कचकलापो न गरलं।
गले कस्तूरीयं शिरसि शशिलेखा न कुसुमम्।।
इयं भूतिर्नाङ्गे प्रिय विरह जन्मा धवलिमा।
पुरां राति भ्रान्त्या कुसुमशरः। किं मां प्रहरसि।।

।। छेकापह्नुति लक्षणम् ।।

जहँ शंका ते और की सत्य छपैये बात।
अर्थ शब्द योजन किये सो छेका अवदात।।

---

1. *मानस 6/58/2*
2. *मानस 3/37/5-7*

अर्थ योजन

यथा –

देखहु नारि सुभाउ कुभाऊ। भय बस सिव सन कीन्ह दुराऊ।।[1]
कछु न परीछा लीन्ह गोसाईं। कीन्ह प्रनामु तुम्हारिहि नाईं।।[2]

कुवलयानंदः –

छेकापह्नुतिन्यस्य शङ्कातसाध्य निह्नवेः।।
प्रजल्पन्मत्पदे लग्नः कान्तः किं ? नहि नूपुरः।।

।। शब्द योजना द्विधा लक्षणम् ।।

विषयान्तर शब्द योजना

यथा – अलंकार दर्पणे –

सदा पयोधर मन बसै नाग भोग सो प्रीति।
सखि मनमोहन की रहनि नहि मयूर की रीति।।

विषयैक्यशब्दावस्थाभेद योजना

यथा –

पद्मामृदु मुसुकाय करि गहे हाथ सो हाथ।
कहा कहत राधे कह्यो नहीं सपन की गाथ।।

।। कैतवापह्नुति लक्षणम् ।।

जहँ मिसु आदिक पदनि सो प्रगटत वस्तु दुराव।
तहाँ कैतवापह्नुतिहि कहत सकल कवि राव।।

यथा –

सिय मुख छवि विधु व्याज बखानी। गुर पहिं चले निसा बड़ि जानी।[3]

पुनः –

पठइ मोह मिस खगपति तोही। रघुपति दीन्हि बड़ाई मोही।[4]

---

1. *मानस 1/53/5*
   प्रचलित पाठ–
   (सती कीन्ह चह तहँहुँ दुराऊ/देखहु नारि सुभाव प्रभाऊ)
2. *मानस 1/56/2*
3. *मानस 1/238/4*
4. *मानस 7/70/4*

कुवलयानंदः -

कैतवापह्नुतिर्व्यक्तौ व्याजाद्यैर्निह्नुतैः पदैः।।
निर्यान्ति स्मरनाराचाः कान्ता दृक्पात कैतवात्।।

।। अवज्ञालंकार लक्षणम् ।।

औरहि के गुन दोष ते औरहि के गुन दोष।
जहँ न अवज्ञा होत तहँ बरनत सुकवि अदोष।।3।।

दोष ते दोष न होय -

यथा -

सोउ (खल) परिहास होइ हित मोरा। काक कहहिं कलकंठ कठोरा।[1]

गुण ते गुण न होय -

यथा -

बायस पलिअहिं (पालिय) अति अनुरागा। होहि कि निरामिष कबहुँ कि कागा।[2]

कुवलयानंदः -

ताभ्यां तौ यदि न स्यातामवज्ञालंकृतिस्तु सा।
स्वल्पमेवाम्बु लभते प्रस्थं प्राप्यापि सागरम्।।

।। अनुज्ञालंकार लक्षणम् ।।

होत अनुज्ञा दोष को जो लीजै गुन मानि।
कवि कोबिद सब कहत हैं ग्रन्थ मते अनुमानि।।4।।

यथा -

जौं अहि सेज सयन हरि करहीं। बुध कछु तिन्ह कर दोष न धरहीं।।
भानु कृसानु सर्ब रस खाहीं। तिन्ह कहं मन्द कहत कोउ नाहीं।।
सुभ अरु असुभ सलिल सब बहई। सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई।।[3]
जौ विवाह संकर सन होई। दोषउ गुन सम कह सब कोई।।[4]

यामे दोष को गुण मानिबे मुख्य है। ताते अवज्ञा अतदगुण ते भेद है।

पुनर्यथा - रामहिं चितव सुरेस सुजाना। गौतम साप परम हित माना।।[5]

---

1 मानस 1/9/1
2 मानस 1/5/2
3 मानस 1/69/5–7
4 मानस 1/69/4
5 मानस 1/317/6

पुनः

रिपु (अरि) बस दैउ जिआवत जाही। मरनु नीक तेहि जीवन चाही।।[1]
(नहिं जीवन ताही)

पुनः -

भरत भाइ नृपु मैं जन नीचू। बडे भाग अस पाइअ मीचू।।[2]

कुवलयानंदः -

दोषस्याभ्यर्थनानुज्ञा तत्रैव गुणदर्शनात्।
विपदः सन्तु नः शश्वद्यासु संकीर्त्यते हरिः।।

।। अनन्वयालंकार लक्षणम् ।।

एकहि को कहियै जहां उपमा अरु उपमेय।
ताहि अनन्वय कहत हैं पण्डित सुकवि अजेय।।5।।

यथा -

उपमा न कोउ कह दास तुलसी कतहुँ कवि कोबिद कहैं।
बल विनय विद्या सील सोभा सिंधु इन्ह सम एइ अहैं।।[3]

पुनः -

मिलत महा दोउ राज विराजे। उपमा खोजि खोजि कबि लाजे।
लही न कतहुँ हार हियँ मानी। इन्ह सम एइ उपमा उरआनी।।[4]

पुनः -

निरवधि गुन निरुपम पुरुष भरत भरत सम जानि।
कहिअ सुमेरु कि सेर सम कबिकुल मति सकुचानि।।[5]

कुवलयानंदः -

उपमानोपमेयत्वं यदेकस्यैव वस्तुनः।
इन्दिरिन्दुरिव श्रीभानित्यादौ तदनन्वयः।।

यथा -

गगनं गगनाकारं सागरः सागरोपमः।
राम रावणयोर्युद्धं राम रावणयोरिव।।[6]

---

1. *मानस 2/21/2*
2. *मानस 2/190/4*
3. *मानस 1/311/9–10*
4. *मानस 1/320/2–3*
5. *मानस 2/288*
6. *वाल्मीकीय रामायण 6/107/51*

।। असंभवालंकार लक्षणम्।।

कहै असंभव होत जहँ बिनु सम्भावन काजु।
गिरि कर धरिहैं गोपसुत को जानत है आजु।।6।।

यथा -

घोर निसाचर विकट भट समर गनहिं नहिं काहु।
मारे सहित सहाय किमि खल मारीच सुबाहु।।[1]

पुनः -

रावन नगर अल्प कपि दहई। सुनि अस बचन सत्य को कहई।।[2]

कुवलयानंदः -

असंभवोऽर्थ निष्पत्ते रससंभाव्यत्व वर्णनम्।
को वेद गोप शिशुकः शैलमुत्पाटयोदिति।।

।। अतद्गुणालंकार लक्षणम् ।।

तहाँ अतद्गुण संग को जब गुण लागे नाहिं।
प्रिय अनुरागी नहिं भये बसि रागी मन माहिं।।7।।

यथा -

खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू। मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू।[3]
अहि अघ अवगुन नहिं मनि गहई। हरइ गरल दुख दारिद दहई।।[4]

चन्द्रालोक -

संगतान्य गुणानंगीकारमाहुरतद् गुणम्
चिर रागिणि मच्चित्ते निहितोऽपि न रज्यसि।।

।। अनुगुणालंकार लक्षणम् ।।

अनुगुण संगति ते जबै पूरण गुण सरसाइ।
जलजहार हिय हास ते अधिक सेत होइ जाइ।।8।।

यथा - मज्जन फल देखिय तत्काला। काक होहिं पिक बकउ मराला।।[5]

---

1 *मानस 1/356*
2 *मानस 6/23/8*
3 *मानस 1/7/4*
4 *मानस 2/184/8*
5 *मानस 1/3/1*

बरवै रामायणे -

केहि गिनती महं गिनती जस बनघास।
राम जपत भए तुलसी तुलसीदास।।[1]

कुवलयानंदः -

प्राक्सिद्धस्वगुणोत्कर्षोऽनुगुणाः परसन्निधे।
नीलोत्पलानिदधते कटाक्षै रति नीलताम्।।

।। अमितालंकार लक्षणम् ।।

जहां साधनै भोग वै साधक की सुभ सिद्धि।
अमित नाम तासौं कहैं, जाकी अमित प्रसिद्धि।।9।।*

यथा - देखि परम पावन तव आश्रम। गयउ मोह संसय नाना भ्रम।।[2]

।। अधिकालंकार लक्षणम् ।।

अधिक जहां आधेय ते बरनत बढ़ि आधार।
बढ़ि अधेय आधार ते, द्वै विधि होत विचार।।10।।

प्रथमोयथा - ब्रह्माण्ड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
सो मम उर बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै।[3]

पुनः - सिय रघुबर कर भयउ बिवाहू। सकल भुवन भरि रह्यौ उछाहू।।[4]

द्वितीयं यथा - पढ़ि पाती पुलके दोउ भ्राता। अधिक सनेह समात न गाता।।[5]

पुनः - राम सखा सुनु स्यंदन त्यागा। चले भरत (उतरि) उमगत अनुरागा।।[6]
भये मगन छवि तासु विलोकी। अजहुँ प्रीति उर रहइ न रोकी।।[7]

---

1. *बरवैरामायण—छंद59*

* जहां साधनै भोगई, साधक की सुभसिद्धि।
अमित नाम तासों कहत जाकी अमित प्रसिद्धि।।
कविप्रिया—12वाँ प्रभाव

2. *मानस 7/64/2*
3. *मानस 1/192/9—10*
4. *मानस 1/101/6* हर गिरिजा का भयउ बिवाहु। सकल भुवन भरि रहा उछाहू।।
5. *मानस 1/291/1*
6. *मानस 2/193/1*

पुन: - मंगल मोद उछाह नित जाहिं दिवस एहि भाँति।
उमगी अवध अनंद भरि अधिक अधिक अधिकाति।[1]

कुवलयानंद: -

पृथ्वाधेयाद्यदाधाराधिक्यं तदपि तन्मतम्।
कियद्वाग्ब्रह्म यत्रैते विश्राम्यन्ति गुणास्तव।।
अधिकं पृथुलाधारादाधेयाधिक्य वर्णनम्
ब्रह्माण्डानि जले यत्र तत्र मान्ति न ते गुणाः।।

।। अल्पालंकार लक्षणम् ।।

अलप अलप आधेयते सूक्षम होइ आधार।
अँगुरी कि मुदरी हुती, कर पर करत विहार।।11।।

यथा बरवै रामायणे - अब जीवन कै है कपि आस न कोइ।
कनगुरिया कै मुदरी कंकन होइ।।[2]

कुवलयानंद: - अल्पं तु सूक्ष्मादाधेयाद्यदाधारस्य सूक्ष्मता।
मणि मालोऽर्मिका तेऽद्य करे जपवटीयते।।

।। आक्षेपालंकार लक्षणम् ।।

कारज के आरंभ ही कीजै जहाँ निषेध।
द्वादस विधि आक्षेप यह बरनत सुकवि सुमेध।।12।।

(1) प्रेमाक्षेप -

यथा - पूत परम प्रिय तुम सबही के। प्रान प्रान के जीवन जी के।।[3]
अवधि अंबु प्रिय परिजन मीना। सब कर जीवन तुमहिं अधीना।।[4]
(तुम करुनाकर धरम धुरीना)

(2) अधीरजाक्षेप -

यथा - बहुविधि विलपि चरन लपटानी। परम अभागिनि आपुहि जानी।[5]

---

7. मानस 1/50/8

1. मानस 1/359

2. बरवै रामायण– 38वाँ बरवै।

प्रेम प्रधीरज धीरजहु संशय मरण प्रकास। आशिष धर्म उपाय कहि शिक्षा केसवदास।
कविप्रिया–प्रभाव 10

3. मानस - 2/56/7

4. मानस - 2/57/2

5. मानस - 2/57/6

(3) धीरजाक्षेप –

यथा –

धरि धीरजु सुत बदनु निहारी। गदगद बचन (कंठ) कहति महतारी।।[1]
जाहु सुखेन बनहिं बलि जाऊँ। करि अनाथ जन परिजन गाऊँ।।[2]

(4) संशयाक्षेप

यथा –

राखि न सकइ न कहि सक जाहू। दुहूँ भाँति उर दारुन दाहू।।[3]

(5) मरणाक्षेप

यथा –

चलन चहत वन जीवन नाथू। केहि सुकृती सन होइहि साथू।।
की तनु प्रान कि केवल प्राना। बिधि करतब कछु जाइ न जाना।।[4]

(6) धर्माक्षेप

यथा –

राखउँ सुतहिं [तुमहिं] करउँ अनुरोधू। धरम जाइ अरु बंधु बिरोधू।।[5]
जौ सुत कहौं संग मोहि लेहूँ। तुम्हरे हृदयं होइं संदेह।।[6]
कहउँ जान बन तौ बड़िहानी। संकट सोच बिबस भइ रानी।[7]

(7) उपायाक्षेप

यथा –

जौं सुत मानहु तात नियोगू। जननिउँ तात मानिये जोगू।।[8]

(8) शिक्षाक्षेप

यथा –

बेगि प्रजा दुख मेटब आई। जननी निठुर बिसरि जनि जाई।।[9]

---

1. *मानस – 2/54/5*
2. *मानस 2/57/4*
3. *मानस 2/55/1*
4. *मानस 2/58/3-4*
5. *मानस 2/55/4*
6. *मानस 2/56/6*
7. *मानस 2/55/5*
8. *मानस – ?*
9. *मानस 2/68/6*

(9) आशिषाक्षेप

यथा –

देव पितर गुरु गनप [सब तुम्हहि] गोसाईं। राखहुँ पलक नयन की नाईं।।[1]

(10) प्रतिषेधाक्षेप लक्षणम्

कही करी निज बात को जहँ कीजै प्रतिषेध।
ताहि कहत प्रतिषेध यह पण्डित सुकवि सुमेध।।

यथा –

सिथिल सनेहँ गुनत मन माहीं। आए इहाँ कीन्ह भल नाहीं।।[2]

कुवलयानन्द :–

आक्षेपः स्वयमुक्ताय प्रतिषेधो विचारणात्।
चन्द्र! संदर्शयात्मानमथवास्ति प्रियामुखम्।।

(11) निषिद्धाक्षेप

यथा –

जौं हठ करहु प्रेम बस बामा। तौ तुम्ह दुख पाउब परिनामा।।[3]

पुन :–

अति गर्ब गनइ न सगुन असगुन स्त्रवहिं आयुध हाथ ते।
भट गिरत रथ बाजि गज चिक्करत भाजहिं साथ ते।।[4]
"अशुभ न गनिवो विभावना के बिषे संचरत है।।

(12) उक्ति विषयाक्षेप लक्षणम्।

होनिहार की उक्ति जहँ वर्तमान में होइ।
उक्ति विषयकाक्षेप यह वरणत हैं सब कोइ।।

यथा –

फिरिहि दसा बिधि बहुरि कि मोरी। देखिहउँ नयन मनोहर जोरी।।
सुदिन सुघरी तात कब होइहि। जननी जिअत बदन बिधु जोइहि।।[5]

।। इति कविकल्पलताया भेदात् ।।

---

1. मानस 2/57/1
2. मानस 2/292/2
3. मानस 2/62/3
4. मानस 6/78/1-2
5. मानस 2/68/7-8

कुवलयानंद :–

आक्षेपोऽन्यो विधौव्यक्ते निषेधे च तिरोहिते।
गच्छ गच्छसि चेत्कान्त! तत्रैव स्याज्ज निर्मम।।

पुन:–

निषेधाभासमाक्षेपं बुधा: केचन मन्वते।
नाहं दूती तनोस्तापस्तस्या: कालानलोपम:।।

।। असंगति अलंकार लक्षणम् ।। त्रिधा (13)

प्रथम यथा

तीनि असंगति काज अरु कारण न्यारे ठाम।
जलधर पीयो बिष उहाँ मूर्च्छित प्रोषित बाम।।

यथा –

जहँ [जिन्ह] बीथिन्ह बिचरहिं [बिहरहिं] द्वौ [सब] भाई।
थकित होहिं सब लोग लोगाई।।[1]

पुन :–

कटकटान कपिकुंजर भारी। दुहु भुजदण्ड तमकि महि मारी।।
गिरत दसासन उठेउ सँभारी। भूतल परेउ मुकुट षट्चारी।।[2]
[भूतल परे मुकुट अति सुंदर]

कुवलयानन्द: –

विरुद्धं भिन्नदेशत्वं कार्यहेत्वोरसंगति:।
विषं जलधरै: पीतं मूर्च्छिता: पथिकाङ्गना:।।

द्वितीय भेदो यथा

कियो चाहियै अनत ही करै अनत ही ताहि।
धरत असङ्गति भेद यह दूजो सुकवि सराहि।।

यथा –

गुनह लखन कर हम पर रोषू। कतहुँ सुधाइहु ते बड़ दोषू।।[3]

पुन:–

औरु करै अपराधु कोउ और पाव फल भोगु।
अति बिचित्र भगवंत गति को जग जानै जोगु।।[4]

---

1. *मानस 1/204/8*
2. *मानस 6/32/4 और 6*
3. *मानस 1/281/5*
4. *मानस 2/77*

पुनः –

तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा। मुएँ करइ का सुधा तड़ागा।।
का बरषा जब कृषी सुखानें। समय (चूकि) चुकें पुनि का पछिताने।।[1]

पुन :–

जौं बिधि इनहिं दीन्ह बनबासू। बादि कीन्ह सब भोग विलासू।।
ए महिं परहिं डासि तृन [कुस] पाता। सुभग सेज कत सृजत [सिरजु बिधाता]
तरुबरबास इन्हहि बिधि दीन्हा। धवल धाम रचि पचि श्रम कीन्हा।।

दोहा –

जौं ए मुनि पट धर जटिल सुंदर सुठि सुकुमार।
बिबिध भाँति भूषन बसन बादि किए करतार।।[2]

विषम ते किञ्चित भेद है। अयुक्तहू में संचरत है।।

कुवलयानन्दः–

अन्यत्र करणीयस्य ततोऽन्यत्र कृतिश्च सा।
अन्यत्कर्तुं प्रवृत्तस्य तविरुद्धकृतिस्तथा।।
अपारिजातां वसुधां चिकीर्षन् द्यां तथाऽकृथाः।
गोत्रोहार प्रवृत्तोऽपि गोत्रोद्भेदं पुराऽकरोः।।

।। तृतीय भेदः ।।

उदित और ही काम को करै काम जहँ और।
तहाँ असंगति तीसरी भाषत कवि सिरमौर।।

यथा –

राज [राउ] सुनाय दीन्ह बनबासू। सुनि हिय भयो न हरष हराँसू।।[3]

पुनः –

सुनत बचन दससीस रिसाना। मन महुँ चरन बंदि सुख माना।।[4]

।। अनुमानालंकार लक्षणम् ।।

कारज ते जहँ जानिये कारण तहँ अनुमान।
हैं हरि फिरि फिरि कुंज में सुनियत मुरली तान।।14।।

---

1 *मानस 1/261/2-3*
2. *मानस 2/119/5-8*
3. *मानस 2/149/7*
4. *मानस 3/28/16*

यथा –

पुनः – चलेउ सुमंत्रु राय रुख जानी। लखी कुचालि कीन्हि कछु रानी।।[1]
समुझि परी मोहिं उन्ह कै करनी। रहित निसाचर करिहहिं धरनी।।[2]

पुनः – मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा। कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा।।[3]

।। अर्थान्तरन्यासालंकार लक्षणम् ।।

जहँ सामान्य बिसेष में एक समर्थ्थ निहार।
अर्थन्यास के बीच में अन्तर तहाँ बिचार।।15।।

विशेष करि सामान्य को स्थापन –

कोउ बिश्राम कि पाव तात सहज संतोष बिनु।
चलै कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि-पचि मरिअ।।[4]

द्वितीय –

राज भजन बिनु मिटहिं कि कामा। थलबिहीन तरु कबहुँ कि जामा।।[5]

यह सामान्य करि विशेष को स्थापन है –

यथा –

काटेहिं पइ कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
विनय न मान खगेस सुनु डाटेहिं पइ नव नीच।।[6]
फूलइ फरइ न बेंत जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरुख हृदयं न चेत जौं गुर मिलहिं बिरंचि सत (सम)।।[7]

कुवलयानन्द :–

उक्तिरर्थान्तरन्यासः स्यात् सामान्य विशेषयोः।
हनूमानाब्धिमतरद् दुष्करं किं महात्मनाम्।।

---

1. *मानस 2/39/2*
2. *मानस 3/22/4*
3. *मानस 5/28/4*
4. *मानस 7/89*
5. *मानस 7/90/2*
6. *मानस 5/58*
7. *मानस 6/16*

पुनर्यथाः –

गुणवद्वस्तु संसर्गाद्याति स्वल्पोपि गौरवम्।
पुष्पमालानुषङ्गेण सूत्रं शिरसिधार्यते।।

।। अयुक्तालंकार लक्षणम् ।।

जैसो जहाँ न बूझिये तैसो तहाँ जु होइ।
केसव ताहि अयुक्त करि बरनत है सब कोइ।।16।।

यथा –

तपसी धनवंत दरिद्र गृही। कलि कौतुक तात न जात कही।।[1]

पुनः – सहित बिषाद परसपर कहहीं। बिधि करतब उलटे सब अहहीं।।
निपट निरंकुस निठुर निसंकू। जेहि ससि (रजनीस) कीन्ह सरुज सकलंकू।
रूख कलपतरु सागर खारा। तेहिं पठए बन राजकुमारा।।[2]

चन्द्रोदय विषै कह्यौ है –

चन्द्रेलांछनता हिमं हिमगिरौ क्षारंजलं सागरे।
वृद्धश्चन्दन पादपो विषधरैरम्भोरुहं कण्टकैः।।
स्त्रीरत्न जरा कुचेषु पतितं विद्यस्य दारिद्रता।
सर्वेरत्नमुपद्रवानि सहितान्निर्द्दोष एकोयशः।। इत्यादि।

।। अयुक्तायुक्तालंकार लक्षणम् ।।

असुभे सुभ ह्वै जात जहँ केहूँ केसवदास।
इहै अयुक्ता युक्त कबि बरनत बुद्दि बिलास।।*

यथा –

उदय केतु सम हित सब ही के। कुंसकरन सम सोवत नीके।।[3]

प्रथम पद में युक्तायुक्त है, दूजे पद में अयुक्तायुक्त है, उपमागर्भित है।।

---

1. मानस 7/101/2
2. मानस 2/119/2-4
* द्रष्टव्य – कविप्रिया 11/18/3
3. मानस 1/4/6
4. वैराग्य संदीपनी – दोहा 39

पुनः – वैराग्यसंदीपनी विषे –

तुलसी भगत् सुपच भलो भजै रैनि दिन राम।
ऊँचो कुल केहि काम को जहाँ न हरि को नाम।।[1]
अति ऊँचे भूधरनि पर भुजगनि के अस्थान।
तुलसी अति नीचे सुखद, ऊख अन्न अरु पान।[2]

या दोहा में दोऊ अलंकार हैं पूर्ववत्।।

।। अर्थपत्ती (अर्थापत्ति) अलंकार लक्षणम् ।।

अबल सबल संबन्ध ते ब्यर्थ करै कछु बस्तु।
ताहि अर्थपत्ती कहत कोविद सुमति समस्त।।18।।

यथा –

जेहिं मारुत गिरि मेरु उड़ाही। कहहु तूल केहि लेखे माहीं।।[3]

पुनः –

कोटिहुँ बदन नहि बनै बरनत जग जननि सोभा महा।
सकुचहिं कहत श्रुति सेष सारद मंदमति तुलसी कहा।।[4]

कुवलयानन्दः –

कैमुत्येनार्थ संसिद्धिः काव्यार्थपत्ति रिष्यते।
सजितस्त्वन्मुखेनेन्दुः का वार्ता सरसीरुहम्।।

।। अप्रस्तुतप्रशंसालंकार लक्षणम् ।।

जाको कछु न प्रसंग है ताहि सराहिय बाल।
तहाँ प्रसंसा प्रस्तुतहिं बरनत बुद्धि बिसाल।।19।।

यथा –

निंदहि आपु सराहहिं मीना। जीवन जासु बारि आधीना।।[5]

चन्द्रालोक –

अप्रस्तुत प्रशंसा स्यात्सा यत्र प्रस्तुतानुगा।
एकः कृती शकुन्तेषु योऽन्यं शक्रान्नयाचते।।*

---

1. *वैराग्य संदीपनी – दोहा 38*
2. *वैराग्य संदीपनी - दोहा 39*
3. *मानस 1/12/11*
4. *मानस 1/100/9-10*
5. *मानस 2/86/5*

* *यह श्लोक कुवलयानंद में भी उपलब्ध है। [छिग जीवनु रघुबीर बिहीना]*

।। अर्थपाति अलंकारलक्षणम् ।।

एक अर्थ लै छाड़िअै और अर्थ लै ताहि।
अर्थपाति तासों कहैं पण्डित सुकवि सराहि।।20।।

यथा गीतावली –

नरपति श्रीरामचन्द्र राखत नरपति को।
दीनबंधु दया सिन्धु दारत दुरगति को।।[1]

प्रथम पद में लक्ष है।

।। अन्योन्यालंकार लक्षणम् ।।

है सहाय जहँ परस पर अन्योन्या है सोइ।
निसि तें सोहत चन्द्रमा चन्द्रहिं ते निसि होइ।।21।।

यथा रामसलाका बिषे: –

भेंट गीध रघुराज सन, दुहुँ दिसि हृदयँ हुलासु।
सेवक पाइ सुसाहिबहिं, साहिब पाइ सुदासु।।[2]

कुवलयानन्दः –

अन्योन्यं नाम यत्र स्यादुपकार परस्परम्।
त्रियामा शशिना भाति शशी भाति त्रियामया।।

।। अथ इकार शून्यम् ।।

अथ उकार कथनम्। तत्र **उपमालंकार** वर्णनम्।
उपमा श्रौती आर्थी द्वै बिधि मन में ल्याइ।
पूर्णा लुप्ता भेद सों दोऊ दुबिधि गनाइ।।

श्रौती वाचक यथा –

इमि जिमि ज्यों जैसे कहत लौं जौं सो से जानि।
इव आदिक पद के दिये वाचक श्रौती मानि।।

आर्थीवाचक यथा –

सरिस तुल्य समतूल सरि तत्सम कहत समान।
धर्म्म मिलै जहँ अर्थ बल सो आरथी सुजान।।

---

1. *गीतावली – ?*
2. *रामाज्ञा प्रश्न 2/7/5*

अथ पूर्णोपमा लक्षणम् –

वाचक साधारण धरम उपमा अरु उपमेय।
ए चारो जहँ वरणिए पूरणोपमा गेय।।

श्रौती पूर्णोपमा यथा –

सेवहिं लखनु सीय रघुबीरहिं।
जिमि अबिबेकी पुरुष सरीरहि।।[1]

पुनः –

तुम्ह पर अस सनेहु रघुबर कें। सुख जीवन जग जस जड़ नरकें।।[2]

श्रौती वाचक धर्म बलतें आर्थिहू में धरत है। इति।।

आर्थी पूर्णोपमा यथा –

स्याम सरोज दाम सम सुन्दर। प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर।।[3]

'सुन्दर' जो धर्म है सो देहरी दीपक क्रियाते दोऊ पद में लगत है।

कुवलयानन्दः –

उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः।
हंसीव कृष्ण! ते कीर्तिः स्वर्गङ्गाम वगाहते।।

लुप्तोपमा लक्षणम् –

वाचक अरु सम धर्म जहँ उपमेयो उपमान।
इनमें एक द्वै तीनि बिनु लुप्ता अष्ट बिधान।।

कुवलयानन्दः –

वर्ण्योपमानधर्माणामुपमा वाचकस्य च।
एक द्वित्र्यनुपादानैर्भिन्ना लुप्तोपभाष्टधा।।

वाचक लुप्ता यथा –

पूँछेहु रघुपति कथा प्रसंगा। सकल लोक जग पावनि गंगा।।[4]

धर्म लुप्ता यथा –

करि प्रनाम रामहिं त्रिपुरारी। हरषि सुधा सम गिरा उचारी।।[5]

---

1. *मानस 2/142/2*
2. *मानस 2/208/6*
3. *मानस 5/10/3*
4. *मानस 1/112/7*
5. *मानस 1/112/5*

उपमा (न) लुप्ता यथा –

समीर (समर) धीर नहिं जाइ बखाना। तेहि सम नहि जग भट बलवाना।।[1]

वाचक धर्म लुप्ता यथा –

ईस प्रसाद असीस तुम्हारी। सब (सुत) सुतबधू देवसरि बारी।।[2]

वाचक उपमा (न) लुप्ता यथा –

अतिबल कुंभकरन अस भ्राता। जेहि कहुँ, नहिं प्रतिभट जग जाता।।[3]

धर्मोपमा (न) लुप्ता यथा –

देखहु खोजि भुअन दस चारी। कहँ अस पुरुष कहाँ असि नारी।।[4]

वाचक धर्मोपमेय लुप्ता यथा –

भरत (दंड) प्रनामु करत मुनि देखे। मूरतिमंतभाग्य निज लेखे।।[5]

वाचक धर्म उपमा (न) लुप्ता यथा –

अहै अनूप राम प्रभुताई। बुधि बिवेक करि तर्कि न जाई।।[6]

।। श्रौती आर्थी पूर्ववत् ।।

कुवलयानन्दः –

तडिद्गौरीन्दु तुल्यास्या कर्पूरन्ती दृशोर्मम।
कान्त्या स्मरवधूयन्ती दृष्टा तन्वी रहो मया।।
यत्तया मेलनं तत्र लाभो मे यश्च तद्रतेः।
तदेतत्काकतालीयमवितर्कित संभवम्।।

।। अन्य प्रकार उपमाभेदाः ।।

घटि बढ़ि सम समता मिलै रूप सील गुन आनि।
उपमा **षोडस भाँति** की कल्पलता मे जानि।

रसनोपमा (रशनोपमा) लक्षणम्

जहाँ प्रथम उपमेय पुनि होत जात उपमान।
ताही सो रसनोपमा पण्डित करत बखान।।

---

1. *मानस 1/180/6 [तेहि सम अमित बीर बलवाना]* पाठांतर
2. *मानस 2/282/1*
3. *मानस 1/180/3*
4. *मानस 2/120/4*
5. *मानस 2/206/4*
6. *मानस – ?*

यथा गीतावली विषे –

मुकुर सम बिधु बिधु सरिस मुख मुख समान सरोज।
जमुन सम घन घन सरिस तन तन समान मनोज।।[1]

।। प्रतिवस्तूपमा लक्षणम् ।।

एक अर्थ द्वै शब्द सों जहँ कहिअै द्वै बार।
जहाँ वस्तु प्रति बस्तु यह कहिअ सुबुद्धि बिचार।।

यथा –

बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं। गिरि निज सिरनि सदा तृन धरहीं।।[2]

पुनः –

उदित अगस्ति पंथ जल सोषा। जिमि लोभहिं सोषइ संतोषा।।[3]
आक जवास पात बिन भयऊ। जस सुराज खल उद्यम गयऊ।।[4]

कुवलयानन्दः –

वाक्योरेकसामान्ये प्रतिवस्तूपमा मता।
तापेन भ्राजते सूरः शूरश्चापेन राजते।।

।। उपमेयोपमा लक्षणम् ।।

उपमा लगे परसपर सो उपमेयोपमान।
खंजन से तुव दृग लसै, दृग से खंजन जान।।

यथा –

वे तुम सम तुम उन सम स्वामी। मैं जन नीच नाथ अनुगामी।।[5]
याको परसपर उपमाहूँ कहत हैं।

चन्द्रालोक –

पर्यायेण दूयोस्तच्चे दुपमेयोपमा मता।
धर्मोऽर्थ इव पूर्णाश्रीरर्थो धर्म इव त्वयि।।

।। गुणाधिकोपमालक्षणम् ।।

अधिकनहूँ ते अधिक गुण जहाँ वरणियत होइ।
ताहि गुणाधिक कहत हैं सुकबि सयाने लोइ।।*

---

1. *गीतावली – ?*
2. *मानस 1/167/7*
3. *मानस 4/16/3*
4. *मानस 4/15/3*
5. *मानस – ?*

* *कविप्रिया प्रभाव – 14*

यथा -

राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी।।
भंजेउ राम आपु भवचापू। भव भय भंजन नाम प्रतापू।।
राम भालु कपि कटकु बटोरा। सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा।।
नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं। करहुँ विचार सुजन मन माहीं।।

अधिक तद्रूप तें कुछ भेद हैं।

कल्पलतायाम् -

अधिकादधिकं यत्र तत्रस्याद्धिगुणाधिकः।
शशांके षोडसः कान्तिर्द्वात्रिंशति कलामुखम्।।

।। मालोपमा लक्षणम् ।।

जहँ एकै उपमेय की उपमा (उपमान) कहै अनेक।
मालोपमा सो जानिए भिन्न धर्म है एक।।

अभिन्न धर्म यथा -

वसत हृदय नृप के सुत कैसें। फनि मनि मीन सलिलगत जैसे।।[1]

पुनः -

हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहिं हरिहि श्री सागर दई।
तिमि जनक रामहिं सिय समरपी विस्व कल कीरति नई।।[2]

भिन्न धर्म यथा -

कामिहिं नारि पिआरि जिमि, लोभिहिं प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रिय लागहिं मोहिं राम।।[3]

पुनः -

आगे रामु अनुज (लखनु) बने (पुनि) पाछें। तापस बेस बने अति (बिराजत) काछें।।
उभय बीच सिय सोहति कैसें। ब्रह्म जीव बिच माया जैसे।।
बहुरि कहउँ छवि जसि मन बसई। जनु मधु मदन मध्य रति लसई।।
उपमा बहुरि कहउं जिंय जोही। जनु बुध बिधु बीच रोहिनि सोही।।[4]

काव्यप्रकाशे -

वर्ण्येनान्यस्योपमायामालायाश्च निरूपणं।
निद्रेव रमिता नयनं प्राणो वरमिता हृदी।। इति अभिन्नधर्म।।

---

1. *मानस – ?*
2. *मानस 1/324*
3. *मानस 7/130*
4. *मानस 2/123/1-4*

।। स्तवकोपमालक्षणम् ।।

स्तवकोपमा होत जहं युग्म अर्थ ठहराइ।
नायक नयन चकोर से तिया मुख लखि सुख पाइ।।

यथा गीतावली –

मुख देखि देखि प्रभु को रसाल।
भये भँवर सिय लोचन बिसाल।।[1]

मुख को कमल अर्थ युग्म है। लक्षण ते मुख में लोप है। ताते स्तवक कहै गुच्छ है।।6।।

।। दूषणोपमा लक्षणम् ।।

भूषण भेद दुराय जहं, बरनिय दूषण भाय।
दूषणोपमा होत तहँ कहत महाकबि राय।।*

यथा –

बिष्नु चारि भुज बिधि मुख चारी। बिकट बेष मुख पंच पुरारी।।
अपर देव अस सुनियत नाहीं। राम लखन जेहिं पटतर जाहीं।।[2]
(यह छबि सखी पटतरिअ जाहीं)

पुनः –

गिरि मुखर तन अरध भवानी। रति अति दुखित अतनु पति जानी।।
बिष बारूनी बंधु प्रिय जेही। कहिअ रमा सम किमि बैदेही।।[3]

अन्त पद चतुर्थ प्रतीप ते अभेद है।।7।।

।। भूषणोपमा लक्षणम् ।।

दूषन दूरि दुराय जहँ बरिनिय भूषन भाव।
भूषणोपमा कहत तेहि पण्डित कबि कबिराव।।*

यथा गीतावली – चित्रकूट परब्रह्म समान।
हरि अरु नीलकण्ठ कमलासन सेवत बिबुध करत गुणगान।

---

1. *गीतावली – ?*

* *द्रष्टव्य – कविप्रिया में वर्णित दूषणोपमा, भूषणोपमा, अद्‌भुतोपमा, नियमोपमा और अभूतोपमा अलंकारों का स्वरूप।*

2. *मानस 1/220/1-8*
3. *मानस 1/247/5-6*

जटी रसाल रम्भ जहं आश्रित देत सबन कहं फल बरदान।।
जासु सुजस ते भै पुनीत श्रुति सर्व भूतमय मोद निधान।।[1]

श्लेष गर्भित है।।8।।

।। नियमोपमा लक्षणम् ।।

एकै सुभ जहँ बरनिये मन क्रम बचन बिलास।।
नियमोपमा होत तहँ बरनत केसवदास।।*

यथा बरवै रामायणे -

भाल तिलक सर सोहत भौंह कमान।
मुख अनुहरिया केवल चंद समान।।[2]

प्रथम पद में रूपक होत है। समान पद की अर्थावृत्त करि रूपक को निवारण है।9

।। अभूतोपमालक्षणम् ।।

उपमा जाइ कही न कछु जाकौ रूप निहारि।
सो अभूत उपमा कहै केसवदास बिचारि।।*

यथा गीतावली-

उपमा एक अभूत भई तब जब जननी पटपीत ओढ़ाए।
नील जलद पर उडुगन निरखत तलि सुभाव मनोतड़ित छपाए।।[3]

।। अद्‌भुतोपमा लक्षणम् ।।

जैसो भयो न होत अब आगे कहै न कोइ।
केसव ऐसे बरणिअै अद्‌भुतोपमा होइ।।*

यथा गीतावली -

जब मुकुर मध्य मुसुकानि होइ। तब राम बदन सम कहिय सोइ।।
जब खंजन पाइअ सीलवान। तब कहिय राम लोचन समान।।[4]

---

1. *गीतावली – ?*
2. *बरवैरामायणे – 3*
3. *गीतावली – 1/26/5*
4. *गीतावली – ?*

* *जैसी भईन होत अब, आगे कहै न कोय।*
केशव ऐसी बरणिये, अद्‌भुत उपमा होय।। कविप्रिया-प्रभाव 14

* *द्रष्टव्य – निर्णयोपमा, लक्षणोपमा, विरोधोपमा, अतिशयोपमा आदि –*
कविप्रिया-प्रभाव – 14

।। निर्णयोपमा लक्षणम् ।।

जहँ उपमेय उपमान को गुण अरु दोष बखान।
निर्णयोपमा होत तहँ पण्डित मण्डित ज्ञान।।*

यथा बरवै रामायणे –

कमल कंटकित सजनी कोमल पाइ।
निसि मलीन यह प्रफुलित नित दरसाइ।।[1]

अधिक तद्रूप ते कछु भेद है।।12।।

।। लक्षणोपमा लक्षणम् ।।

लच्छन लच्छि जो बरनिये बुधि बल बचन बिलास।
लक्षणोपमा होत तहँ बरणत केशवदास।।*

यथागीतावली --

काम मनमथ जगत जन इत राम मनमथ रंग।
वह अनंग सुभाय इन्ह कहँ कहत बेद अनंग।।[2]

सम तद्रूप ते कछु भेद है।।13।।

।। विरोधोपमा लक्षणम् ।।

जहँ उपमा उपमेय सो आपुस माँझ बिरोध।
सो बिरोध उपमा कहत केशव जिनहिं प्रबोध।।*

यथा गीतावली –

सुनियै सीय गति रघुवीर।
रह्यौ देह सुगन्ध गाहत विसद सुरभि समीर।
बिरह प्रभु के अंग अंग सो अधिक करत अधीन।
देखि पूरन कान्ति मुख की चन्द हुतो मलीन।
नाथ विषम वियोग सो मुख तिन कियो अति दीन।। इति।।14।।[3]

---

1. *बरवै रामायण – 26*
2. *गीतावली – ?*
3. *गीतावली – ?*

* *द्रष्टव्य – निर्णयोपमा, लक्षणोपमा, विरोधोपमा, अतिशयोपमा आदि – कविप्रिया–प्रभाव–14*

।। अतिशयोपमालक्षणम् ।।

एक कछु एकहि बिषे सदा होइ रस एक।
अतिशयोपमा होत तहँ बरणत सहित बिवेक।।*

यथा गीतावली –

मुख अनुरूप कहियै काहि।
लगत लघु उपमा अनेकनि देखिए दिसि जाहि।
लसत कर कर मुकुर जहँ तहँ बसत सरसर कंज।
प्रगट परम प्रकास तुलसी एक रस मुख मंजु।।[1]

प्रथम पद प्रतीप के भेद ते मिलत है।।15।।

।। विपरीतोपमा लक्षणम् ।।

पूरब पूरे गुणनि के तेई कहियत हीन।
तासो विपरीतोपमा कहत समस्त प्रबीन।।

यथा रामशलाकायां –

त्यागि बसन कृत बसन वन असन मूल फल होइ।
ये रघुबरनृपमनिहु ते ते मुनि मनि अब जोइ।।16।।[2]

।। संकीर्णोपमायां प्राचीनोदितम् ।।

जहँ संकीरण अर्थ है तहँ संकीरण मानि।
अवली बालक तारसम तरुणी केशव खानि।।

।। इति उपमा ।।

।। अथ उक्त्यालंकार लक्षणम् ।।

उपजत बुद्धि बिबेक बल बिबिध तर्क जेहि ठौर।
अष्टाविंशति उक्ति है कहैं सुकबि सिरमौर।।23।।†

।। रूपकातिशयोक्तिलक्षणम् ।।

होइ जहाँ उपमेय को उपमानहिं ते ज्ञान।
रूपकातिशयोक्ति तहँ कहत भरत मतिमान।।1।।

---

1. *गीतावली – ?*
2. *रामशलाका (रामाज्ञाप्रश्न) – ?*

† *बुद्धि विवेक अनेक बिधि उपजत तर्क अपार।*
तासो कवि कुल उकि कहि बरणत विविध प्रकार।। कविप्रिया-प्रभाव – 12

* *द्रष्टव्य - निर्णयोपमा, लक्षणोपमा, विरोधोपमा, अतिशयोपमा आदि - कविप्रिया-प्रभाव-14*

यथा –

अरुन पराग जलज भरि नीके।
ससि भूषत (ससिहि भूष) अहि लोभ अमी के।।[1]

यह विरुद्ध रूपक ते मिलतु है।

पुनः .–

खंजन सुक कपोत मृगमीना। मधुप निकर कोकिला प्रबीना।।
कुंद-कलीं दाड़िम दामिनी। कमल सरद ससधर (ससि) अहिभामिनी।।
बरुनपास मनसिज (मनोज) धनु हंसा। गज केहरि निज सुनत प्रसंसा।।
श्रीफल-कनक कदलि हरषाहीं। नेकु न संक सकुच मन माहीं।।
सुनु जानकी तोहिं बिनु आजू। हरषे सकल पाइ जनु राजू।।[†]
किमि सहि जात अनरव तोहिं पाहीं। प्रियाबेगि प्रगटसि कस नाहीं।।[2]

यह दोहा-चौपाई कल्पित भ्रान्ति ते मिलतु है। इहाँ अर्थ सम्बन्ध के हेतु संग्रह कियो।।

रूपकातिशयोक्तिः स्यान्निगीर्याध्यवसानतः।
पश्य नीलोत्पल द्वन्द्वान्निः सरन्ति शिताः शराः।।

।। भेदकातिशयोक्ति लक्षणम् ।।

भेदकातिशयोक्ति जहँ वहै और ठहराइ।
याके दृग औरे लसै भरे अनेकनि भाइ।।2।।

यथा गीतावलीः –

औरे हसनि बिलोकनि चितवनि औरे बचन उदार।
तुलसी ग्रामबधू बिथकित भइ देखि न रहेउ सँभार।।[3]

---

1. *मानस 1/325/9*
   यहाँ अरुणपराग = सेंदुर, जलज = शंख या कमल, ससि = सीता जी का मुख, अहि = राम जी का हाथ।
2. *मानस 3/30/10-15*

† *खंजन = नेत्र, सुक = नाक, कपोत = ग्रीवा, मृग-मीन = नेत्र, मधुप = बाल, कोकिला = वाणी, कुंदकली = दाँत, दामिनी = मुसकान, सरदकमल, स्वाति = मुख, अहिभामिनी = वेणी, वरुणपास = नेत्र के कटाक्ष, मनोजधनु = भौहें, गज = चाल, केहरि = कटि, श्रीफल = कुच, कनक कदलि = जंघा।*

3. *गीतावली – ?*

अन्य प्रकारेण लक्षणम् :

अन्य वाक्य नहि होइ जहँ अर्थ होइ तहँ सोइ।
बालकृष्ण यह दूसरी अतिशयभेदक जोइ।।

यथा –

पसु सुरधेनु कल्पतरु रूखा। अन्न दान पुनि रस कि पियूषा।।
बैनतेय खग अहि सहसानन। चिन्तामनि पुनि उपल दसानन।।
सुनि मतिमंद लोक बैकुंठा। लाभ कि रघुपति भगति अकुण्ठा।।
धन्वी काम नदी पुनि गंगा। राम मनुज कसरे सठ बंगा।।
सेन सहित तव मान मथि बन उजारि पुर जारि।
कस रे सठ हनुमान कपि गयउ जो तव सुत मारि।।[1]

कुवलयानन्दः –

भेदकातिशयोक्तिस्तु तस्यैवान्यत्व वर्णनम्।
अन्य देवास्य गांभीर्य मन्यद्धैर्न्य महीपतेः।।

।। अक्रमातिशयोक्ति लक्षणम् ।।

कारन कारज संग ही उपजत जहँ मतिमान।
अक्रमातिसयोक्ति को कीजै तहाँ बखान।।3।।

यथा गीतावली –

गति करतल मुनि पुलक सहित, कौतुकहि उठाइ लियो।
आकरष्यो सिय-मन समेत हरि, हरष्यो जनक हियो।।
नृपगन-मुखनि समेत नमित करि सजि सुख सबहि जियो (दियो)।
भंज्यौ भृगुपति-गरब सहित तिहुँ लोक बिमोह कियो।।[2]

कुवलयानन्दः –

अक्रमातिशयोक्तिः स्यात्सहत्वे हेतु कार्ययोः।
आलिङ्गति समं देव। ज्यां शराश्च पराश्चते।।

।। चपलातिशयोक्ति लक्षणम् ।।

चपल उक्ति अतिसय वहै होत बेग ही काज।
ग्रंथ मते बरनत सबै पंडित सुकबि समाज।।4।।

---

1. *मानस – 6/26/5-8 (प्रचलित पाठ से क्रम-विपर्यय)*
2. *गीतावली – 1/90/6-7*

यथा – तब सिव तीसर नयन उघारा। चितवत काम भयउ जरि छारा।।[1]

पुनः – भानु प्रतापहि बाजि समेता। पहुँचाएसि छन माझ निकेता।।[2]

पुनः – सुनत बचन मुनि चितबा जबही। भये भस्म छिन महँ सब तबही।।[3]

पुनः – रिष्ट पुष्ट तन भए सुहाए। मानहुँ अबहिं भवन ते आए।।[4]

'जानहु' उत्प्रेक्षा व्यंजक है।

बालकृष्ण –

काग उड़ावन धानि लगी आये कंत झरक्कि।
आधी चूरी काग गल आधी गई तरक्कि।।[5]

चन्द्रोदये –

क्रोधं प्रभो संहर संहरेति यावद्गिरः खे मरुतां चरन्ति।
तावत्स वह्निर्भवनेत्रजन्मा भस्मावशेषं मदनं चकार।।[6]

कुवलयानन्दः –

चपलातिशयोक्तिस्तु कार्य हेतु प्रसक्तिजे।
यास्यामीत्युदिते तन्व्या वलयोऽभवदूर्मिका।।

।। अत्युक्ति लक्षणम् ।।

बरनिय अतिसय रूप जहँ आधिक्यता अपार।
ताहि कहत अति उक्ति सब पण्डित बुद्धि उदार।।5।।

यथा –

(प्रभु) तव प्रताप बड़वानल भारी। सोषेउ प्रथम पयोनिधि बारी।।
तव रिपु नारि रुदन जल धारा। भरेउ बहोरि भयउ तेहिं खारा।।
सुनि अति उकुति पवनसुत केरी। हरषे कपि रघुपति तन हेरी।।[7]

पुनः –

मोरि सुधारिहिं सो सब भाँती। जासु कृपाँ नहि कृपाँ अघाती।।[8]

---

1. *मानस 1/87/6*
2. *मानस 1/171/1*
3. *मानस – गंगोत्पत्ति प्रसंग क्षेपक*
4. *मानस 1/145/8*
5. *स्फुट दोहा –*
6. *कुमारसंभव – 3/72*
7. *मानस 6/1/2-3*
8. *मानस 1/28/3*

पुनः –

देखत दुख दुखहू दुख लागा। धीरजहू कर धीरज भागा।।[1]

पुनः –

सुंदर स्याम गौर दोउ भ्राता। आनँदहू के आनँद दाता।।[2]

पुनः –

जासु त्रास डर कहुँ डर होई। भजन प्रताप देखावत सोई।।[3]

पुनः –

सील सनेह सकल दुहु ओरा। द्रवहिं देखि सुनि कुलिस कठोरा।।[4]

पुनः –

अधिक (महा) भीर भूपति के द्वारें। रज होइ जाइ पपान पवारें।।[5]

कुवलयानन्दः –

अत्युक्तिरद् भूतातथ्य शौर्यौदार्यादिवर्णनम्।
त्वयि दातरि राजेन्द्र! याचकाः कल्पशाखिनः।।

।। अत्यन्ताशयोक्ति लक्षणम् ।।

उक्ति सो अत्यन्तातिसय पूरब पर क्रम नाहिं।
बान न पहुँचो अंग लो अरि पहिले मरि जाहिं।।6।।

यथा –

पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार।।[6]

पुनः –

बिनु पूछें मगु देहिं दिखाई। जेहि बिलोकि सोइ जाइ सुखाई।।[7]

पुनः –

पहिले (कहकपि) मुनि गुरदछिना लेहू। पाछें हमहिं मंत्र तुम्ह देहू।।[8]

---

1. *मानस 2/152/8*
2. *मानस 1/217/2*
3. *मानस 1/225/7*
4. *मानस 2/281/5*
5. *मानस 1/301/3*
6. *मानस 2/101*
7. *मानस 6/18/10*
8. *मानस 6/58/4*

कुवलयानन्दः –

अत्यन्तातिशयोक्तिस्तु पौर्वापर्य व्यतिक्रमे।
अग्रे मानो गतः पश्चादनुनीता प्रियेण सा।।

याको अभाव हेतुहू नाम है।।6।।

।। सम्बन्धातिशयोक्ति लक्षणम् ।।

करि कल्पना अयोग को जहाँ कीजिअत योग।
अतिसयोक्ति संबन्ध तहँ बरनत पंडित लोग।।7।।

यथा –

धवलधाम ऊपर नभ चुंबत। कलस मनहुँ रवि ससि दुति निंदत।।[1]

'निंदत' पद ते प्रतीप गर्भित है।

कुवलयानन्दः –

सम्बन्धातिशयोक्तिः स्यादयोगे योगकल्पनम्।
सौधाग्राणी पुरस्यास्य स्पृशान्ति विधुमण्डलम्।।

।। असम्बन्धातिशयोक्ति लक्षणम् ।।

जोगहिं करिअ अजोग जहँ करि कितहू संबन्ध।
असंबन्ध अतिसयोक्ति कवितन कियो प्रबंध।।8।।

यथा –

देखि जनक की नगर निकाई। लघु लागी बिरंचि निपुनाई।।[2]

प्रतीप गर्भित है।

पुनः –

जे पुरगाँव बसहिं मग माहीं। तिन्हहि नाग सुर नगर सिंहाहीं।।[3]
जे सर सरित राम अवगाहहिं। तिन्हहिं देवसर सरित सराहहिं।।
जेहि तरुतर प्रभु बैठहिं जाई। करहिं कलपतरु तासु बड़ाई।।[4]

पुनः –

उदय अस्त गिरिवर कैलासू। मंदर मेरु सकल सुरबासू।
सैल हिमाचल आदिक जेते। चित्रकूट जसु गावहिं तेते।।[5]

---

1. *मानस 7/27/7*
2. *मानस – पुर सोभा अवलोकि सुहाई। लघु लागी निरंचि निपुवाई।। 1/94/8*
3. *मान 2/113/1*
4. *मानस 2/113/6-7*
5. *मानस 2/138/6-7*

कुवलयानन्दः –

योगेऽप्ययोगोऽसंबन्धातिशयोक्तिरितीर्यते।
त्वयि दातरि राजेन्द्र! स्वर्द्रुमान्नाद्रियामहे।।

।। अन्योक्ति लक्षणम् ।।

औरहिं सो जो भाषिए कछू और की बात।
अन्योक्ति सब ताहिं सों बरनत मति अवदात।।9।।

यथा गीतावली: –

नहिं सुगंध न सुमन तरु नहिं पत्रछाया ठौर।
हेतु बिनु बिरही यहाँ तू क्यों भवतु है भौंर।।

काव्य प्रकाशे –

यत्रान्य परिमानाहुरन्योक्तिसात्र कथ्यते।।9।।*

।। सहोक्ति लक्षणाम् ।।

कारन कारज संग बिनु जहँ बरनिय एक साथ।
तेहि सहोक्ति अस कहतु हैं मम्मट विद्यानाथ।।10।।

यथा –

बल प्रताप बीरता बड़ाई। नाक पिनाकहिं संग सिधाई।।[1]

पुनः –

कोटि कोटि गिरि सिखर प्रहारा। करहिं भालु कपि एक एक बारा।।[2]

कुवलयानन्दः –

सहोक्तिसहभावश्चेद्भासते जनरञ्जनः।
दिगन्त्र मगमत्तस्य कीर्तिः प्रत्यार्थिभिः सह।।

।। व्याधिकरणोक्ति लक्षणम् ।।

औरहिं में कीजै प्रगट औरहिं के गुण दोष।
उक्ति इहै व्यधिकरन की सुनत होइ संतोष।।11।।†

---

1. *मानस 1/266/1*
2. *मानस 6/65/5*

* *प्रस्तुत लक्षण काव्य प्रकाश में नहीं है क्योंकि काव्य प्रकाश के 61 अलंकारों में अन्योक्ति की गणना नहीं है। भाषा का लक्षण कविप्रिया के लक्षण से तुलनीय*

औरहिं प्रति जु बखानियें कछू और की बात।
अन्य उक्ति यह कहत है वरनत कवि न अघात।। कविप्रिया 12/8

† *तुलनीय : औरहिं में कीजै प्रगट औरहिं को गुणदोष।*
उक्ति यहै व्यधिकरन की सुनत होत संतोस।। कविप्रिया 12/3

यथा –

पूछेसि लोगन्ह कहा उछाहू। रामतिलक सुनि भा उर दाहू।।[1]

उल्लास के भेद ते मिलतु है जहाँ गुण ते दोष होइ।।

।। विशेषोक्ति लक्षणम् ।।

विद्यमान कारण जहाँ कारज होइ न सिद्ध।

सोई उक्ति विशेषमय केसवदास प्रसिद्ध।।12।।

यथा –

पिता जनक जग विदित प्रभाऊ। ससुर सुरेस सखा रघुराऊ।।

रामचन्द्र पति सो बैदेही। सोवत महि बिधि बाम न केही।।[2]

पुनर्यथा –

मोसन कहहु (कहत) भरत मति फेरू। लोचन सहस न सूझ सुमेरु।।[3]

कुवलयानन्द: –

कार्याजनि विशेषोक्ति: सति पुष्कल कारणे।

हृदि स्नेह: क्षयो नाभूत: स्मरदीपे ज्वलत्यपि।।

।। बिनोक्ति लक्षणम् ।।

जहाँ कछू काहू बिना सोभ न होइ न होइ।

सो बिनोक्ति द्वै भाँति की बरनत ग्रंथ बिलोइ।।13।।

प्रथम यथा –

अति पुनीत (सरितासर) निर्मल जल सोहा। संत हृदय जस बिनु (गत) मद मोहा।।[4]

उपमागर्भित है।

गीतावली बिपे विभीषण उवाच –

कपट बिनु मीत महिपाल सु अनीति बिनु काम बिनु धर्म इति नीति भाषै।

उचित अनुमान करि मंत्र मंत्री कहै जे न धन धान्य कुल कुसल राषै।।[5]

---

1. *मानस 2/13/2*
2. *मानस 2/91/6*
3. *मानस 2/295/4*
4. *मानस 4/16/4*
5. *गीतावली – ?*

द्वितीय यथा –

बिनु रघुपति मम जीवन नाहीं। प्रिया बिचारि देषु मन माहीं।।[1]

पुनः –

बादि बसन बिनु भूषन भारू। बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारू।।

बादि (जायँ) प्रान (जीव) बिनु देह सुहाई। बादि मोर सब बिनु रघुराई।।[2]

पुनः –

जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तरु बिनु पात पुरुष बिनु नारी।।[3]

कुवलयानन्दः –

तच्चेत्किंचि द्विना रम्यं विनोक्तिः सापि कथ्यते।

विना खलैर्विभात्येषा राजेन्द्र। भवतः सभा।।

विनोक्तिश्चेद्विना किंचित्प्रस्तुतं हीनमुच्यते।

विद्या हृद्यापि साऽवघ्द्या विना विनयसंपदम्।।

।। निरुक्ति लक्षणम् ।।

जहाँ जोग ते नाम की अर्थकल्पना और।

द्वै निरुक्ति सब्दार्थ की भाषत कबि सिरमौर।।14।।

शब्दार्थ कल्पना –

यथा – कनककसिपु अरु हाटक लोचन। भट बिजयी सुरपति मदमोचन।।[4]

पुन :–

नाम तुम्हार प्रताप दिनेसा। सत्यकेतु तव पिता नरेसा।।[5]

सलाकाबिषे –

सृंगज असन सुयुक्त जू बिहरत तीर सुधीर।

जग्य पापमय त्रान पद राजत श्री रघुबीर।।[6]

---

1. मानस 2/32/2-3 पाठान्तर।

2. मानस 2/178/4 और 6

3. मानस 2/65/7
प्रचलित पाठ– जिय बिनु देह नदी बिनु बारी।
तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।।

4. मानस 1/122/6

5. मानस 1/164/1

6. रामशलाका – ?

कृष्ण चरित्रे –

बाजत ताल आनन गुडी मंजुल देव मृदंग।
तुलसी जल में नचत हैं राधा माधव संग।।[1]

अर्थकल्पना –

आदिसृष्टि उपजीं जबहिं तब उतपति भै मोरि।
नाम एकतनु हेतु तेहि देहन धरी बहोरि।।[2]

गीतावली –

इत देखि बिलोचन भै कुरंग।
'तेहि हेतु नाम कहिअत कुरंग।।[3]

कुवलयानन्दः –

निरुक्तिर्योगतो नाम्नामन्यार्थत्व प्रकल्पनम्।
ईदृशैश्चरितैर्जाने सत्यं दोषाकारो भवान्।।

।। प्रौढ़ोक्ति लक्षणम् ।।

जो अहेत उत्कर्ष को ताहि बरवानत हेत।
प्रौढ़ोक्ति सो जानिये बरनत सबै सचेत।।15

यथा –

उरमनि माल कंबुकल गीवा। काम करभ (कलभ) कर (इव) भुज बल सींवा।।[4]

'काम करभ' यह उत्कर्ष को हेतु उपमा को संकर है।

गीतावली –

मुकुर मध्य के चन्द सरिस मुख मदन सरसि के कंज विलोचन।
बचन अधर की सुधा सरिस मधु पावस घन तन ताप बिमोचन।।[5]

कुवलयानन्दः –

प्रौढ़ोक्तिरुत्कर्षा हेतौ तद्धेतुत्व प्रकल्पनम्।
कचाः कलिन्दजातीरतमालस्तोम मेचकाः।।

---

1. *कृष्ण चरित्र – ?*
2. *मानस 1/162*
3. *गीतावली – ?*
4. *मानस 1/233/7*
5. *गीतावली – ?*

।। लोकोक्ति लक्षणम् ।।

जहाँ कहनावत्ति अनुकरण लोकोक्ति सो होइ।

बरनत ग्रंथ विचार करि कबि कोबिद सब कोइ।।16।।

यथा –

देब कहा (काह) हम तुम्हहिं गोसाँई। ईंधनु पात किरात मिताई।।[1]

पुनः –

देइ को भरतहिं दोसु सुभाए। जग बौराइ राज पद पाए।।[2]

पुनः –

गाधिसुवन (गाधिसून) कह हृदय हँसि मुनिहि हरिअरइ सूझ।

असमय खाँड़ न ऊखमय अजहुँ न बूझ अबूझ।।[3]

पुनः –

करत राज लंका सठ त्यागा (त्यागी)। होइहि जव कर कीट अभागा।।[4]

कुवलयानन्दः –

लोकप्रवादा नुकृतिर्लोकोक्तिरिति भण्यते।

सहस्व कतिचिन्मासान्मीलायित्वा विलोचने।।

।। छेकोक्ति लक्षणम् ।।

लोकोक्ति कछु अर्थ लै छेकोक्ति सो मानि।

आजु गाइ जौ फेरिहैं ताहि धनंजय जानि।।17।।

यथा बरवै रामायणे –

कमठ पीठ धनु सजनी कठिन अँदेस।

तमकि ताहि ए तोरिहिं कहब महेस।।[5]

कुवलयानन्दः –

छेकोक्तिर्यत्र लोकोक्तेः स्यादर्थान्तरगर्भिता।।

भुजङ्ग एव जानीते भुजङ्गचरणं सखे।।

---

1. *मानस 2/251/2*
2. *मानस 2/228/8*
3. *मानस 1/275*
4. *मानस 5/53/5*
5. *बरवै रामायण – 15*

।। विरोधोक्ति लक्षणम् ।।

उक्ति बिरोध जहाँ अरथ अघटित घटित बनाइ।
दिन ही में तिय मुख लखे कञ्ज गये कुँभिलाइ।।18।।

।। स्वभावोक्ति लक्षणम् ।।

दरस हास रस में बढ़ै नयन कहै चित चाव।
हाव विभाव काटाच्छ गुन लक्षण बरनि स्वभाव।।19।।
यथा –
कपट सनेहु बढ़ाइ बहोरी। बोली बिहसि नयनमुँह मोरी।।[1]

पुनः –
सहज सुभाय सुभग तन गोरे। नाम लखनु लघु देवर मोरे।।
बहुरि बदनु बिधु अंचल ढाँकी। पिय तन चितइ भौंह करि बाँकी।
खंजन मंजु तिरीछे नयननि। निज पति कहेउ तिन्हहि सियँ सयननि।।[2]

चन्द्रालोके –
स्वभावोक्ति स्वभावस्य जात्यादिषु चवर्णनम्।
कुरङ्गारुत्तरङ्गाक्षि स्तब्धकर्णीरुदीक्ष्यते।।

।। समासोक्ति लक्षणम् ।।

उपमागर्भित, श्लेष पुनि है सारुप्य समास।
समासोक्ति प्रस्तुत कहत अप्रस्तुतै प्रकास।।20।।

उपमागर्भितो यथा –
जोह आलिंगन देत है कुमुदनि को आनंद।
निसा बदन चुंबन करत उदितभयो सखिचंद।।[3]

श्लेष विशेषण समासो यथा –
श्लेष बिशेषण बल उक्ति जु कछु और की होइ।
कुबलय पति देखत फुली द्विजपति को पति जोइ।।

यथा –
कुपथ माग रुज ब्याकुल रोगी। बैद न देइ सुनहु मुनि जोगी।।[4]

---

1. *मानस 2/27/8*
2. *मानस 2/117/5-7*
3. *स्फुट दोहा*
4. *मानस 1/133/1*

सारुप्य समासो यथा –

सुनिअ सुधा देखिअहिं गरल सब करतूति कराल।
जहँ तहँ काक उलूक बक मानस सकृत मराल।।[1]

पुनः गीतावली –

प्रथम जो सरिता लखि अब अंक देखिअत तासु।
रहे बिलसत हंस जहँ तहँ काक करत बिलासु।।
देवि विधि गति बाम लखि धरि धी; अस जिय जानि।
काल कर्म सुभाव संभव फल अफल अनुमानि।।[2]
दूजे पदप्रसंग हेतु कहे हैं।

शुद्धसमास –

ग्रह ग्रहीत पुनि बात बस तेहि पुनि बीछी मार।
तेहि पिआइअ बारुनी कहहु काह उपचार।।[3]

कुवलयानन्द :–

समासोक्तिः परिस्फूर्तिः प्रस्तुतेऽप्रस्तुतस्य चेत्।
अयमैन्द्री मुखं पश्य रक्तश्चुम्बति चन्द्रमाः।।

सारुप्य यथा –

पुरा यत्र स्रोतः पुलिनमधुना तत्र सरितां
विपर्यासं यातो घनविरलभावः क्षितिरुहाम्।
बहोर्दृष्टं कालादपरमिव मन्ये वनमिदं
निवेशः शैलानां तदिदमिति बुद्धिं दृढ़यति।।[4]

।। विवृतोक्ति लक्षणम् ।।

जहाँ गूढ़ श्लेष सों सुकबि प्रकासै अर्थ।
बिबृतोक्ति तासो कहै बरनत बुद्धि समर्थ।।21।।

यथा बरवै रामायणे –

बेद नाम कहि अँगुरिन खंडि अकास।
पठयो सूपनखाहि लखन के पास।।[5]

---

1. *मानस 2/281*
2. *गीतावली – ?*
3. *मानस 2/180*
4. *उत्तररामचरित – 2/27*
5. *बरवै रामायण – 28*

बेद कहै स्तुति याते कान अरु आकास कहै नाक ताते नाक कान काटबे की संज्ञा कारी। यह गुप्त श्लेष है।

कुवलयानन्द :–

विवृतोक्तिः श्लिष्ट गुप्तं कविना विष्कृतं यदि।
वृषापेहि परक्षेत्रादि वक्ति ससूचनम्।।

।। गूढ़ोक्ति अलंकार लक्षणम् ।।

गूढ़ोक्ति मिसु और की दीजै पर उपदेस।
कालि सखी मैं जाऊँगी पूजन देव महेस।।22।।

वचन विदग्धता ते जानिए।।

पुनः अन्य प्रकारेण –

लोचन मग रामहि उर आनी। दीन्हे पलक कपाट सयानी।।[1]

सखी बचन –

बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू। भूप किसोर देखि किन लेहू।।[2]
गूढ़ गिरा सुनि सिय सकुचानी। भयउ विलम्बु मातु भय मानी।।[3]

याको व्यंग्योक्ति भी कहतु हैं।

कुवलयानन्दः –

गूढ़ोक्तिरन्योद्देश्यं चेद्यदन्यं प्रतिकथ्यते।
वृषायेहि परक्षेत्रादायाति क्षेत्र रक्षकः।।

।। व्याजोक्ति लक्षणम् ।।

बचन जो कहिए ब्याज सों व्याजोक्ति तेहि ठौर।
सखी सरीर सुबास ते दशे (दरसे) अंग अंग भौंर।।23।।

कुवलयानंदः –

व्याजोक्तिरन्यहेतूक्या यदाकारस्य गोपनम्।
सखि! पश्य गृहाराम परागैरस्मि धूसरा।।

---

1. *मानस 1/232/7*
2. *मानस 1/234/2*
3. *मानस 1/234/7*

।। उन्नतोक्ति लक्षणम् ।।

कारज ते पदवी लहै जहं कारण बहु भाय।
उन्नतोक्ति तासो सकल पण्डित देत बताय।।24।।

यथा -

जिन्हहिं बिरचि बड़ भयउ विधाता। महिमा अवधि राम पितु माता।।[1]

पुनः -

सुनहुँ महामहिपाल मनि (महीपति मुकुटमनि) तुम सम धन्य न कोइ।
राम लखनु जिन्ह के तनय, विस्व विभूषन दोउ।।[2]

उपमा गर्भित है।

।। दृढ़ातिशयोक्ति लक्षणम् ।।

सामग्री की संख कहि तब दृढ़ करै विशेष।
ता कहँ कहत दृढ़ोक्ति है भूपति सुकवि अशेष।।
ऐसो होइ तो होइयो कै पुनि होइ न होइ।
कै न होइ तो होइयो कै पुनि होइ न होइ।।25।।

यथा वैराग्य संदीपनी विषे :

महीपत्र करि सिंधु मसि तरु लेखनी बनाइ।
तुलसी लिखैं गनेश तौ महिमा लिखी न जाइ।।[3]

द्वितीयो भेदो यथा -

जौं छबि सुधा पयोनिधि होई। परम रूपमय कच्छप सोई।
सोभा रजु मंदरु सिंगारू। मथै पानि पंकज निज मारू।।
एहि विधि उपजै लच्छि जब सुंदरता सुख मूल।
तदपि सकोच समेत कबि कहहिं सीय समतूल।।[4]

---

1. *मानस 1/16/8*
2. *मानस 1/291*
3. *वैराग्य संदीपनी – 35वाँ छंद।*
4. *मानस 1/247/7-8*

तृतीयो भेदो यथा –

होहि सहस दस सारद सेसा। करहिं कल्प कोटिक भरि लेखा।।
मोर भाग्य राउर गुन गाथा। कहि न सिराहिं सुनहु रघुनाथा।।[1]

याको यद्यार्थातिरायोक्तिहु कहत हैं।।25।।

सापह्नवातिशयोक्ति लक्षणम्।

रूपकातिशयोक्ति में मिलो अपह्नुति होइ।
सापह्नवातिशयोक्ति तहाँ कहैं सब कोइ।।26।।

यथा गीतावली –

चन्द मे न पीयूष पूरन स्त्रवत हरिमुख देखु।
दास तुलसी सुफल करि जग जनम जीवन लेखु।।[2]

कुवलयानन्दः –

यद्यपह्नुतिगर्भत्वं सैव पह्नववामता।
त्वत्सूक्तिषु सुधा राजन् भ्रान्ताः पश्यन्ति तां विधौ।।

याको अपह्नुति गर्भातिशयोक्तिहू कहतु हैं।।26।।

अन्यभवातिशयोक्ति लक्षणम्।

अन्यभवागुण और को औरहि पर ठहराइ।
सुधा भरयौ यह बदन तुअ ससिहि कहत बौराइ।।

पर्यस्तापह्नुति ते 'नहीं, सब्द् को भेद है अरु सापह्नवा ते रूपकातिशयोक्ति को भेद है।।27।।

वक्रोक्ति लक्षणम्।

वक्रोक्तिः श्लेषकाकुभ्यामपरार्थ प्रकल्पनम्।
मुञ्चमानं दिनं प्राप्तं नेहनन्दी हरान्तिके।।

याको लक्षण शब्दालंकार में धरयौ है अरु अर्थालंकार में संग्रह करतु हैं। प्राचीनोदित है ताते।।28।।

।। इति उक्त्यालंकाराः ।।

---

1. *मानस 1/342/2-3*
2. *गीतावली - ?*

अथोत्प्रेक्षालंकार कथनम्।

तत्रोत्प्रेक्षाव्यंजको यथा –

निहचै प्रगटत साँच निज जानो मानो मानि।
उत्प्रेक्षा व्यंजक सबद औरो यहि बिधि जानि।।

कुवलयानन्दः –

मन्ये शङ्क ध्रुवं प्रायो नूनमित्येवमादिभिः।
उत्प्रेक्षा व्यज्यते शब्दैरिव शब्दोऽपि तादृशः।।

उत्प्रेक्षा लक्षणम्।

उत्प्रेक्षा संभावना वस्तु हेतु फलवृद्ध।
उक्तानुक्तास्पद प्रथम द्वै ये सिद्धासिद्ध।।24।।

कुवलयानन्दः –

सम्भावनास्यादुत्प्रेक्षा वस्तु हेतु फलात्मना।
उक्तानुक्तास्पदाद्यात्र सिद्धाऽसिद्धास्पदे परे।।

वस्तुहेतु फलोत्प्रेक्षा यथा –

करत बतकही अनुज सन मन सिय रूप लुभान।
मुख सरोज मकरन्द छबि करइ मधुप जनु (इव) पान।।[1]

षड्भेदो यथा – **तत्रोक्त विषय वस्तूत्प्रेक्षा –**

अवधपुरी सोहइ एहि भाँती। प्रभुहि मिलन आई जनु राती।।[2]

दिनको राति को आइबो यह अनुक्त है। अर्थ संबंध हेतु कहे हैं।।

देखि भानु जनु मन सकुचानी। तदपि बनी संध्या अनुमानी।।
अगर धूप बहुजनु अँधिआरी। उड़इ अबीर मनहुँ अरुनारी।।
मंदिर मनि समूह जनु तारा। नृप गृह कलस सो इंदु उदारा।।
भवन बेद धुनि अति मृदु बानी। जनु खग मुखर समयँ जनु सानी।।[3]

पुनः –

अधिक सनेहँ देह भै भोरी। सरद ससिहि जनु चितव चकोरी।।[4]

---

1. *मानस 1/231*
2. *मानस 1/195/3*
3. *मानस 1/195/4-7*
4. *मानस 1/232/6*

कुवलयानन्द :

धूमस्तोमं तमः शङ्के कोकी विरह शुष्पणाम्।।

अनुक्त विषय वस्तूत्प्रेक्षा यथा –

लता भवन तें प्रगट भे तेहि अवसर दोउ भाइ।
निकसे जनु जुग बिमल बिधु जलद पटल बिलगाइ।।[1]

पुनः –

राज समाज बिराजत रूरे। उडगन महुँजनु जुग बिधु पूरे।।[2]

दुइ चन्द्रमा अनुक्त हैं।

पुनः –

प्रभु बिलाप (प्रलाप) सुनि कान बिकल भए बानर निकर।
आइ गयउ हनुमान जनु करुना महँ बीर रस।।[3]

करुणा वीर रस को संसर्ग अनुक्त है।।

गीतावली –

सुमुखि! केस सुदेस सुंदर सुमन-संजुत पेषु।
ससिहि उडुगन वाह जनुगै मिलन तम तजि द्वेषु।।
(मनहुँ उडुगन निबह आए मिलन तम तजि द्वेषु।।[4])

तम के मिलबो चन्द्रमा ते अनुक्त है।

पुनः –

सुंदर नासा-कपोल, चिबुक अधर अरुन, बोल
मधुर, दसन राजत जब चितवत मुख मोरी।
कंज-कोस भीतर जनु कंजराज-सिखर निकर,
रुचिर रचित बिधि बिचित्र तड़ित रंग बोरी।।[5]

तड़ित रंग बोरिबो अनुक्त हैं।

कुवलयानन्दः –

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नमः।

।। सिद्ध विषय हेतूत्प्रेक्षा ।।

रघुबर बाल छबि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव कोटि-मनोज-साभा-हरनि।।

---

1. *मानस 1/232*
2. *मानस 1/241/3*
3. *मानस 6/61*
4. *गीतावली – उत्तरकांड 9/7-8*
5. *गीतावली – 7/7/7-8*

बसी मानहु चरन-कमलनि अरुनता तजि तरनि।
रुचिर नूपुर किंकिनी मन हरति रुनझुनु करनि।।
मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषन भरनि।
जनु सुभग सिंगार सिसु तरु फर्‌यौ है अद्‌भुत फरनि।।
भुजनि भुजग, सरोज नयननि, बदन बिधु जित्यो लरनि।
रहे कुहरनि, सलिल नभ, उपमा अपर दुरि डरनि।।
लसत कर-प्रतिबिम्ब मनि-आँगन घुटुरुवनि चरनि।
जनु जलज-संपुट सुछबि भरि भरि धरति उर धरनि।।
पुन्यफल अनुभवति सुतहि बिलोकि दसरथ-घरनि।
बसति तुलसी-हृदय प्रभु किलकनि ललित लरखरनि।।[1]

अरुनता हेतु चरन बिषे सिद्ध ही है।।

पुनः –

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि। कहत लखन सन राम हृदयँ गुनि।।
मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्हीं। मनसा बिस्व विजय कहँ कीन्ही।।[2]

धुनि हेतु विजय सिद्ध ही है।।

पुनः –

पहिरावन कहँ (सुनत जुगल कर) माल बुझाई।
प्रेम बिबस पहिराइ न जाई।।
सोहत जनु जुग जलज सनाला।
ससिहि सभीत देत जयमाला।।[3]

पहिरावन हेतु जीति को माल सिद्ध ही है।।

कुवलयानन्दः –

रक्तौ तवाङ्घ्री मृदुलौ भुवि विक्षेपराणाद् ध्रुवम्।।

।। असिद्ध विषय हेतूत्प्रेक्षा ।।

यथा –

इन्हहि देखि बिधि मनु अनुरागा। पटतर जोग बनावै लागा।।
कीन्ह बहुत श्रम ऐक न आए। तेहि इरिषा बन मनहु दुराए।।[4]

---

1. *गीतावली – बालकांड 27*
2. *मानस 1/230/1-2*
3. *मानस 1/264/6-7*
4. *मानस 2/120/5-6*

गीतावली –

भुजनि भुजग, सरोज नयननि, बदन बिधु जित्यौ लरनि।

रहे कुहरनि, सलिल, नभ, जनु अपर उपमा डरनि।।[1]

कुवलयानन्दः –

त्वन्मुखाभेक्षयानूनं पद्मैवैर्रायते शशी।।

।। सिद्ध विषयफलोत्प्रेक्षा ।।

यथा – धाए धाम काम सब त्यागे (त्यागी)। मनहुं रंक निधि लूटन लागे।[2]

पुनः – सीय सुखहि बरनिअ केहि भाँती। जनु चातकी लह्यौ (पाइ) जलुस्वाती।[3]

पुनः – दीन्ह असीस मुनीस उर अति अनंदु अस जानि।

लोचन गोचर सुकृत फल मनहुँ किए बिधि आनि।।[4]

कुवलयानन्दः –

मध्यः किं कुचयोर्धृत्यैर्वद्धः कनक दामभिः।।

।। असिद्ध विषय फलोत्प्रेक्षा ।।

यथा गीतावलीः –

सेवत घन तमाल। मरकत मनि सैल जाल।।

रघुबर तन दुति अनूप। चहत मनहुँ अधिक रूप।।[5]

कुवलयानन्दः –

प्रायोब्जं त्वत्पदेनैक्यं प्राप्तुं तोये तपस्यति।।

वाच्योत्प्रेक्षा एक है व्यंजक पद जेहि ठौर।

प्रतीयमाना कहत हैं बिनु व्यंजक सो और।।

याको लुप्तोत्प्रेक्षा हू कहतु हैं।।

उर्ज्जस्वी अलंकार लक्षणम ।।

उर्ज्जस्वी जहँ कोप ते अहंकार अति होइ।

वरनत कबि कोबिद सबै अलंकार यों सोइ।।25।।

---

1. *गीतावली –1/27/7-8*
2. *मानस 1/220/2*
3. *मानस 1/263/6*
4. *मानस 2/106*
5. *गीतावली – ?*

यथा –

जौं तुम्हारि अनुसासन पावौं। कंदुक इव ब्रह्माण्ड उठावौं।।
काचे घट जिमि डारौं फोरी। सकउँ मेरु मूलक जिमि तोरी।।
कमल नाल जिमि चाप चढ़ावौं। जोजन सत प्रमान लै धावौं।।
तोरौं छत्रक दंड जिमि तव प्रताप बल नाथ।
जौं न करौ प्रभु पद सपथ कर न धरौं धनुभाथ।।[1]

उपमा गर्भित है।।

पुनः –

आए उतरि काल के मारे। राम लखन ए मनुज बिचारे।।[2]

गीतावली –

जौ हौं अब अनुसासन पावौं।
तौ चन्द्रमहिं निचोरि चैल ज्यौं, आनि सुधा सिर नावौं।।
कै पाताल दलौं व्यालावलि अमृतकुंड महि लावौं।
भेदि भुवन करि भानु बाहिरो तुरत राहु दै तावौं।।
बिबुध-बैद बरबस आनौ धरि, तौ प्रभु अनुग कहावौं।
पटकौं मीच नीच मूषक ज्यौं, सबहिं को पापु बहावौं।।
तुम्हरिहि कृपा, प्रताप तिहारेहि नेकु बिलम्ब न लावौं।
दीजै सोइ आयसु तुलसी प्रभु जेहि तुम्हरे मन भावौं।।[3]

कबित्त रामायणे –

आजुहि कोसलराज के काज त्रिकूट उपारि लै बारिधि बोरौं।
या (महा) भुज दंड द्वै अंडकटाह चपेट की चोट चटाक दैं फोरौं।।
आयसुभंग तें जौं न डरौं सब मींजि सभासद सोनित खोरौं।
बालि को बालक जौ तुलसी दसहूमुख के रन में रद तोरौं।।[4]

।। उन्मीलितालंकार लक्षणम् ।।

उन्मीलित सादृश्य भेद परै जब आनि।
सुबरन भूषन अंग मिलि कर छ्वै पर पहिचानि।।26।।

बरवै रामायणे – चंपक हरवा अंग मिलि अधिक सोहाइ।
जानि परै सिय हियरें जब कुँभिलाइ।।[5]

---

1. *मानस 1/253/4-8*
2. *मानस – ?*
3. *गीतावली – लंकाकांड – 8*
4. *कवितावली – लंकाकांड – 14*
5. *बरवै रामायण – 12*

कुवलयानन्दः –

भेदवैशिष्ट्योः स्फूर्तावुन्मीलिनत विशेषकौ।
हिमाद्रिं त्वद्य शोमग्नं सुराः शीतेन जानते।।

।। उल्लेषालंकार लक्षणम् ।।

।। त्रिधा।। 27।।

प्रथमभेदः –

सो उल्लेख जो एक को बहु समझै बहुरीति।
अर्थिन सुरतरु तियमदन अरि को काल प्रतीति।।

यथा –

जिन्ह कें रही भावना जैसी। प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी।।
देखहिं भूप (रूप्र) महा रनधीरा। मनहुँ बीररसु धरें सरीरा।।
रहे असुर (जे) छल नृप (छोनिप) बेषा। तिन्ह प्रभु प्रगट काल सम देषा।।
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई। नरभूषन लोचन सुखदाई।।
बिदुखनि (बिदुषन्ह) प्रभु बिराटमय दीसा। बहु मुख कर पग लोचन सीसा।।
जनक जाति अवलोकहिं कैसे। सजन सगे प्रिय लागहिं जैसे।।
रामहिं चितव भाव जेहि सीया। सो सनेहु सुखु नहिं कथनीया।।[1]

उत्प्रेक्षा को व्यंजक अरु उपमा को बाचक इन पदनि में कहुँ कछु कहे हैं ताकी शंका न करना। उल्लेख मुख्य है अन्तर्गर्भ को दोष नहीं।

पुनः गीतावली –

साधन-फल साधक जिय जानत (सिद्धनि के) लोचन फल सबही के।
मातु पिता जानत सुकृत फल जीवन फल (धन) तुलसी के।।[2]

पुनः –

कह सुग्रीव सुनहु रघुराई। ससि महुँ प्रगट भूमि कै झाँई।।
मारेउ राहु ससिहि कह कोई। उर महँ परी स्यामता सोई।।
कोउ कह बिधि जब रति मुख कीन्हा। सार भाग ससि कर हरि लीन्हा।।
छिद्र सो प्रगट इन्दु उर माहीं। तेहि मग देखिय नभ परिछाहीं।।
कोउ (प्रभु) गरल बंधु ससि केरा। अति प्रिय निज उर दीन्ह बसेरा।।
बिष संजुत नर निकर पसारी। जारत बिरहवंत नर नारी।।

---

1. *मानस 1/241 (4,5,7,8), 242/1, 2*
2. *गीतावली 1/56/7*

दोहा –

कह मारुत सुत (हनुमंत) सुनहु प्रभु ससि तुम्हार प्रिय दास।
तब मूरति बिधु उर बसति सोइ स्यामता अभास।।[1]

यह निर्णयालंकार ते मिलतु है।।

कुवलयानन्दः –

बहुभिवतुधोल्लेखादेकस्योल्लेख इष्यते।
स्त्रीभिः कामोऽर्थिभिः स्वर्द्रुः कालः शत्रुमिरैक्षिसः।।

।। द्वितीय भेदः ।।

बहु बरनत है एक को बहु गुण सो उल्लेख।
तू रन अर्जुन तेज रबि सुर गुर बचन बिसेख।।

यथा – तेज कृसानु रोष महिषेसा। अघ अवगुन धन धनी धनेसा।।[2]

पुनः – राम काम सत कोटि सुभग तन। दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन।

सक्र कोटि सत सरिस बिलासा। नभ सत कोटि सरिस (अमित) अवकासा।।

प्रभु अगाध सत कोटि पताला। समन कोटि सत सरिस कराला।।

गिरिसत (हिमगिरि) कोटि अचल रघुबीरा। सिंधु कोटि सत अमित (सम) गंभीरा।

मरुत कोटि सत बिपुल बल रबि सत कोटि प्रकास।
ससि सत कोटि सुसीतल समन सकल भव त्रास।।
काल कोटि सत सरिस अति दुस्तर दुर्ग दुरंत।
धूमकेतु सत कोटि सम दुराधरष भगवंत।।[3]

उपमा के बाचक इन पदनि में अन्तर्गर्भ है।।

कुवलयानन्दः –

एकेन बहुधोल्लेखेऽप्यसौ विषयभेदतः।
गुरुर्वचस्यर्जुनोऽयं कीर्तौ भीष्मः शरासने।।

।। तृतीय भेदः शुद्धोल्लेखः।।

कहै एक मे विषय बहु धर्म सहित अनुमानि।
कहत सुद्धोल्लेख तेहि तीजो भेद बखानि।।

यथा – बिकट भृकुटि सम श्रवन सुहाए। कुंचित कचमेचक छबि छाए।।[4]

ललित कपोल मनोहर नासा। सकल सुखद ससि कर सम हासा।।[5]

---

1. *मानस 6/12/5-10*
2. *मानस 1/4/5*
3. *मानस 7/91-92*
4. *मानस 7/77/6*
5. *मानस 7/77/4*

कुवलयानन्दः –

अकृशं कुचयोः कृशं विलग्ने विपुलं चक्षुषि विस्तृतं नितम्बे।
अधरेऽरुण मा विरस्तु चित्ते करुणा शालि कपालि भागधेयम्।।

।। उत्तरालंकार लक्षणम् ।।

व्यंग सहित उत्तर जहाँ गूढ़ोत्तर सो होइ।
पुनि उत्तर ते प्रश्न को ज्ञान सो उत्तर होइ।।28।।

प्रथमो यथा – सीतै चितै कही प्रभु बाता। अहै कुमार मोर लघु भ्राता।।[1]

सीता को चितै करि उत्तर दियो यह ब्यंग जो हम स्त्रीजुत हैं। अथवा सीता प्रति हास्य कर्‌यौ जो तुम पर सौति आवति है। ये व्यंग सो अनुकूल नायक को दूसरो बिबाह उचित नाहीं। ताते लक्ष्मण कुमार हैं। अहो रामचंद्र असत्य कह्यो लक्ष्मण को बिबाह भयौ है। कुमार कैसे भये। तहाँ षट बैस विषै आठ ते पन्द्रह पर्यन्त कुमार बैस कहत हैं। याते ब्यंग करि कै बचन सत्य है।।

पुनः – प्रभु समरथ कोसलपुर राजा। जो कछु करहिं उनहिं सब छाजा।।[2]

प्रभु हैं स्वतंत्र हैं काहू की भय नाही। बिबाह करहि तो कोऊ बरज़निहार नहीं। बहुरि समर्थ्थ हैं समर्थ्थ को दोष न लगै। बहुरि कोसलपुर अजोध्या के राजा हैं। ह्याँ के राजा सगर सहस्र बिबाह कर्‌यो। राजा दसरथ पिता तीनि सौ साठि बिबाह कर्‌यो जामे तीनि पाटमहिषी हैं। श्री रघुनाथ जी दो बिबाह करैंगे तो कौन आश्चर्य है जोग्य ही है। अरु ये ईश्वर हैं जोइ कछु करै सो इच्छा जे समस्त सृष्टि इनही की है। इनकी निन्दा कोउ न करै। औ हम सेवक पराधीन हमको सर्वथा अजोग्य है। न हम प्रभु हैं न समरथ हैं। न अवध के राजा हैं। पराधीन हैं।।1।।

द्वितीय भेदो यथा – बरवै रामायणे मंथरा बचनम्।

सात दिवस भै साजत सकल बनाउ।
का पूछहु सुठि राउर सरल सुभाउ।।[3]

कुवलयानन्दः गूढ़ोत्तर यथा –

किञ्चिदाकूत सहितं स्याद्गूढ़ोत्तर मुत्तमम्।
यत्रासौ वेतसी पांथ। तत्रेयं सुतरासीत्।।

---

1. *मानस 3/17/11*
2. *मानस 3/17/14*
3. ***बरवै रामायण** – 20*

।। उदात्तालंकार लक्षणम् ।।

महा ऋद्ध के चरित जहँ अरु उपलक्षण और।
बरनत सो उदात्त हैं कबितन के सिरमौर।।29।।

यथा गीतावली –

जो सुख सिन्धु सकृत सीकर ते सिव बिरंचि प्रभुताई।
सोइ सुख अवध उमँगि रह्यो दस दिसि, कवन जतन कहौं गाई।।[1]

पुनः – कंत समर जीतब रघुनायक। जाके हनूमान से पायक।।[2]

पुनः – कबहुँ कि होय पराजय ताके। अंगद हनुमत अनुचर जाके।।[3]

कुवलयानन्दः –

उदात्तमृद्धेचरितं श्लाध्यं चान्योपलक्षणम्।
सानौ यस्याभवद्युद्धं तद्धूर्जटिकिरीटिनोः।।
रत्नस्तम्भेषु संक्रान्तैः प्रतिबिम्ब शतैर्वृतः।
ज्ञातो लंकेश्वरः कृच्छादाञ्जनेयेन तत्त्वतः।

।। उल्लासालंकार लक्षणम् ।।

औरहिं के गुन दोष ते औरहि के गुण दोष।
चारि भाँति उल्लास है बरनत बुद्धि अदोष।।30।।

गुण ते गुण यथा – दोष ते दोष यथा –

जे हरषहिं पर संपत्ति देखी। दुखित होंहिं पर बिपति बिसेषी।।[4]

गुण ते दोष यथा –

खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी। जरहिं सदा पर संपति देखी।।[5]
काहू की जौं सुनहिं बड़ाई। स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई।।[6]

उत्प्रेक्षा व्यंजक गर्भित है।।

---

1. *गीतावली – बालकाण्ड-पद 1, पंक्ति 11-12*
2. *मानस 6/63/3 [प्रचलित पाठ – हैं दस सीस मनुज रघुनायक।
जाके हनूमान से पायक।।]*
3. *मानस 6/37/4 [अंगद हनुमत अनुचर जाके। रन बाँकुरे बीर अति बाँके।।]*
4. *मानस 2/130/7*
5. *मानस 7/39/2*
6. *मानस 7/40/2*

कुवलयानन्दः –

एकस्य गुणदोषाभ्यामुल्लासोऽन्यस्य तौ यदि।
अपि मां पावयेत् साध्वी स्नात्वेतीच्छति जाह्नवी।।

द्वितीय श्लोकः – काठिन्यं कुचयोः स्रष्टुं वाञ्छन्त्यः पादपझयोः।
निन्दन्ति च विधातारं त्वद्धाटीष्वरियोषितः।।

तृतीय श्लोकः – तदभाग्यं धनस्यैव यन्नाश्रयति सज्जनम्।
लाभोऽयमेव भूपाल सेवकानां ने च द्रुधः।।

।। अथ एकारादिकथनम् ।।

।। एकावली अलंकार लक्षणम् ।।

ग्रहित मुक्त पद रीति जहँ एकावली सो मान।
दृग श्रुति पर श्रुति बाँह पर बाहु जंघ पर जान।।31।।

यथा – भरत सरिस को राम सनेही। जग जपु राम राम जपु जेही।।[1]

क्रमालंकार में आदि अंत को नेम है। कारणमाला में कारज कारण को भेद है एकावली साधारण नेम रहित है।

कुवलयानन्दः –

गृहीत मुक्तरीत्यर्थ श्रेणिरेकावलिर्मता।
नेत्रे कर्णान्त विश्रान्ते कर्णो दोः स्तम्भदोलितौ।।

।। अथ यकार शून्यम् ।।

।। अथ रकारादिकथनम् ।।

।। रूपकालंकार लक्षणम् ।।

विषयी ते जहँ विषय को है अभेद तद्रूप।
अधिक नून (न्यून) सम दुहुनि मिलि **षटरूपक के रूप**।।32।।

कुवलयानन्दः –

विषय्यभेदताद्रूप्यरञ्जनं विषयस्य यत्।
रूपकं तत्त्रिधाधिक्य न्यूनत्वानुभयोक्तिभिः।।

।। अभेदरूपकम्।।तेहि अभेद रूपक कहैं जे बुधजन सिरताज।
साक्षात् राजत महा हैं महेस महराज।।1।।

---

1. *मानस 2/218/7*

अधिक अभेद रूपक

यथा गीतावली –

निकट मुनिवर मंच पर मुख रंच सकुच न संक।
देषु रहित कलंक सजनी भयो उदित मयंक।।2।।[1]

समअभेद रूपक

परद्रोही पर दार रत पर धन पर अपवाद।
ते नर पाँवर पापमय देह धरें मनुजाद।।

न्यूनअभेद

यथा –

अस प्रभु छोड़ि भजहिं जे आना।
ते नर पसु बिनु पूँछ बिषाना।।[2]

न्यूनाधिक रूपक यथा – कवित्त रामायणे –

तुलसी जेहि राम सों नेह नहीं सो सही पसु पूँछ बिखानन द्वै।
तिन्हतें खर सूकर स्वान भले जड़ता बस ते न कहैं कछु वै।।5।।[3]

तद्रूपक

यथा –

या बिधि तद्रूपक कहैं सबै सुकबि सानंद।
सुखद सुधाधर तियबदन अहै दूसरो चन्द।।6।।

अधिक तद्रूपक

यथा –

भोगवती (भोगावति) जहँ (जसि) अहिकुल बासा।
अमरावति जहँ (जसि) सक्र निवासा।।
तिन्ह तें अधिक रम्य अति बंका।
जग बिख्यात नाम तेहि लंका।।7।।[4]

---

1. *गीतावली – ?*
2. *मानस 5/50/1*
3. *कवितावली – उत्तरकाण्ड – छंद – 40*
4. *मानस 1/178/7-8*

सम तद्रूपक

यथा कृष्ण चरित्रे –

बरनो अवध गोकुल ग्राम।
इहाँ राजत जानकी बर उहाँ स्यामा स्याम।।
इहाँ सरजू बहत अद्भुत उहाँ जमुना नीर।
हरत किल्विष दोउ दुहु दिसि दुखित जन की पीर।।
भक्त के सुख रास कारन लिए द्वै अवतार।
दास तुलसी सरन आयो कोउ उतारै पार।।8।।[1]

न्यूनतद्रूपक

यथा –

राम मात्र लघु नाम हमारा। परसु सहित बड़ नाम तुम्हारा।।[2]

द्वै भुज करि हरि रघुबर सुंदर बेष। एक जीभ कर लछिमन दूसर सेष।।[3]

कुवलयानन्दे षटरूपकं – अयं हि धूर्जटिः साक्षाद्येन दग्धाः पुरः क्षणात्।

अथ न्यूनाभेद रूपकम् – अयमासो विना शम्भुस्तार्तीयीकं विलोचनम्।

अधिकाभेद रूपक – शम्भुर्विश्वमवत्यद्य स्वीकृत्य समदृष्टिताम्।

अथ समतद्रूपकम् – अस्या मुखेन्दुनालब्धे नेत्रानन्दे किमिन्दुना।

अथ न्यूनतद्रूपकम् – साध्वीयमपरा लक्ष्मीरसुधा सागरोदिता।

अथाधिकतद्रूपकम् – अयं कलंकिनश्चन्द्रान्मुख चन्द्रोऽतिरिच्यते।।

।। अथान्य प्रकारेण त्रिविध रूपकम् ।।

उपमा ही के रूप सो मिलो वरणिए रूप।
ताही सो सब कहत हैं केसव रूपक रूप।।*

यथा –

बदन चंद लोचन कमल, बाहु बिशनि उर आनि।
कर पल्लव अरु भ्रूलता बिंबाधरणि बखानि।।
सो रूपक है तीन बिधि, तिनकी सुनहु सुभाव।
अद्भुत एक बिरुद्ध पुनि रूपक रूपक नाव।।†

---

1. *कृष्ण चरित्र – ?*
2. *मानस 1/282/6*
3. *बरवै रामायण – 27*

* *कविप्रिया-प्रभाव – 13*

† *कविप्रिया 13/13, 14*

अद्‌भुत रूपक लक्षणम् -

सदा एक रस बरणिए औरन ताहि समान।
अद्भुत रूपक होत तहँ बरनत बुद्धि निधान।।

यथा -

नव बिधु बिमल तात जस तोरा। रघुबर कृपा (किंकर) सुकुमुद चकोरा।।
उदित सदा अँथइहि कबहूँ ना। घटिहिं न जग नभ दिन दिन दूना।।
कोक तिलोक प्रीति अति करहीं। राम प्रताप रबि छबिहि न डरहीं (हरिही)।।
निसिदिन सुखद सदा सब काहू। ग्रसिहि न कैकइ (कयकै) करतब राहू।।[1]
कीरति बिधु तुम कीन्ह अनूपा। जहँ बस राम पेम मृगरूपा।।[2]

अधिक रूपक बिसे जैसी आश्चर्यता नहीं है।।1।।

।। विरुद्ध रूपक लक्षणम् ।।

जहँ अनमिल रूपहिं बरणि सुमिल सकल विधि अर्थ्थ।
सो विरुद्ध रूपक कहै जिन्हकी बुद्धि समर्थ्थ।।[†]

यथा -

अरुन पराग जलज भरि नीकें। ससिहि भूष अहि लोभ अमीं के।।[3]
रूपकातिशयोक्ति ते मिलतु है।।2।।

रूपक रूपक लक्षणम्।।

रूप भाव सब बरनिए, कौनहु बुद्धि विशेष।।
रूपक रूपक कहत हैं तोसों सुकवि असेष।।*

यथा -

बरषा रितु रघुपति भगति तुलसी सालि सुदास।
राम नाम बर बरन जुग सावन भादव मास।।[4]

याको समस्त विषय रूपकहू कहत हैं।

---

1. *मानस 2/209/1-4*
2. *मानस 2/210/1*
3. *मानस 1/325/9*
4. *मानस 1/19*

† *कविप्रिया – प्रभाव 13*

* *कविप्रिया-प्रभाव 13*

पुनः –

लछिमन देषहु (देखत) काम अनीका।
रहहिं धीर जिन्हके (तिन्हके) जगलीका।।
लता विशाल बिटप अरुझानी। बिबिध बितान दिए जनु तानी।।
कदलि ताल बर धुजा पताका। देखत डरै बिरह मन जाका।।
कहुँ कहुँ सुंदर बिटप सुहाए। बस बानैत बिलग होइ आये।
मोर चकोर कीर बर बाजी। पारावत बसंत (मराल) सब ताजी।।
तितिर लावक पदचर जूथा। बरनि न जाय मनोज बरूथा।।
कूजत पिक मानहु गजमाते। ढाक (ढेक) मधूक (महोरव) ऊँट बेसराते।।
रथ गिरि सिला दुंदुभी झरना। चात्रिक (चातक) बंदी गुन गन बरना।।
चतुरंगिनी अनी (सेन) संग लीन्हे। बिचरत सबहिं चुनौती दीन्हें।।[1]

याही को सांगरूपक कहतु हैं।3

।। अन्यथा प्रकारेण पंचरूपकम् ।।

सुद्ध सांग पुनि दोइ विधि परंपरित कहि देत।
एकदेश बैवर्त पुनि माला कहत सचेत।।

।। शुद्ध रूपक लक्षणम् ।।

कहिए रूपक मुख्य ही अंगनि में नहिं होइ।
ताहि सुद्ध रूपक कहत बदन चंद है सोइ।।1।।

।। सांग रूपक लक्षणम् ।।

जोरो हित बहु विषय को उपराजक जहँ होइ।।
सो समस्त विषयक कहैं सांग होत है सोइ।।2।।

यथा – पूर्व बद्ध संत बरनन बिषे।।

।। परंपरित रूपकं द्विधा लक्षणम् ।।

रूपक रूपक मूल जँह परंपरित है सोइ।
श्लेष शुद्ध द्वै भेद सों बरनत ग्रंथ बिलोइ।।

---

1. *मानस 3/38/-1-10 इस उद्धरण की पंक्तियों में प्रचलित पाठ से क्रम विपर्यय है।*

श्लेष परंपरित

यथा -

जीवन दायक स्याम घन गोपी पद्मिनि मित्र।
हरे कलानिधि सघनतम श्री गोविंद विचित्र।।[1]

शुद्ध परंपरित यथा -

मोह बिपिन घन दहन कृशानुः। संत सरोरुह कानन भानुः।।
निसिचर करि बरूथ मृगराजम्। त्रातु सदा मनसिज (नोभव) खग बाजम्।।
अरुण नयन राजीव सुवेशं। सीता नयन चकोर निशेशं।।
संशय सर्व ग्रसन उरगादम्। शमन सोक संकर्ष (सुकर्कश) बिषादम्।।[2]

।। एकदेश विवर्तिकाल रूपक लक्षणम् ।।

कछु रूपक हैं सब्द ते कछुक अर्थ ते जानि।
बर्तमान एक देश नहिं बहै बिबर्त बखानि।।

यथा-

सरद सुसिंहासन चँवर कास जलज को अत्र।
किरण माल मुक्तावली बिधु अनंग सिर छत्र।।[3]

अनंग अरु सरद सब्द मात्र है रूप वर्तमान नहीं है।।4।।

।। माला रूपक लक्षणम् ।।

माला रूपक सुद्ध की केवल अंग जो होइ।
मुख मयंक लोचन कमल अधर बिम्ब है सोइ।।

यथा विनैपत्रिका -

नवकञ्ज लोचन कञ्ज मुख कर कञ्ज पद कञ्जारुणं ।।इति 5।।[4]

।। अथान्य प्रकारेण रूपकं द्विधा ।।

निरवयव केवल कहत मूरत पूरण जानि।
बहु मूरति माला किए दूजो भेद बखानि।।

---

1. *स्फुट दोहा*
2. *मानस 3/11/5-9*
3. *स्फुट दोहा*
4. *विनय पत्रिका - 45/2*

।। निरवयव केवल रूपक ।।

यथा बरवै रामायणे -

हेमलता सिय मूरति मृदु मुसुकाइ।
हेम हरिण कहँ दीन्हेंउ प्रभुहिं देखाइ।।1।।[1]

।। निरवयव माला रूपक ।।

यथा बरवै रामायणे -

कनक सलाक कला ससि दीप सिखाउ।
तारा सिय कहँ लछिमन मोहि बताउ।।[2]

निरवय कहैं बिना अंग अंग।।2।। रूपक के बहुत भेद लुप्तोपमा के बिषे संचरत हैं। सूक्ष्म बिचार ते जान्यो जातु है।।

।। इति रूपक ।।

।। रसवदालंकार लक्षणम् ।।

कहे मुख्यशृंगार रस तहँ अनमिल मिलि जाइ।
रस को अँग रस बरणिए रसवद ताँहि बताइ।।33।।

यथा बरवै रामायणे -

राज भवन सुख बिलसत सिय संग राम।
बिपिन चले तजि राज सो बिधि बड़ बाम।।[3]

।। रूपाभासालंकार लक्षणम् ।।

औरहिं जे भासे जहाँ औरहिं रूप अनूप।
बरनत रूपाभास जो जे कबितन के भूप।।34।।

यथा बरवै रामायणे -

कुंकुम तिलक भाल श्रुति कुंडल लोल।
काक पच्छ मिलि सखि कस लसत कपोल।।[4]

।। रत्नावली अलंकार लक्षणम् ।।

रत्नावलि प्रस्तुत अरथ क्रम ते औरे नाम।
रसिक चतुरमुख भूमिपति सकल ग्यान को धाम।।35।।

---

1. *बरवै रामायण – 29*
2. *बरवै रामायण – 31*
3. *बरवै रामायण – 21*
4. *बरवै रामायण – 2*

यथा -

धरम धुरंधर नीति निधाना। तेज प्रताप सील बलवाना।।[1]

कुवलयानंद: -

क्रमिकं प्रकृतार्थानां न्यासं रत्नावलीं विदुः।
चतुरास्यः पतिर्लक्ष्म्याः सर्वज्ञस्तवं महीपतेः।।

।। अथ लकारादि वर्णनम् ।।

।। लेशालंकार लक्षणम् ।।

दोषहिं ते गुण होत है गुण ते दोष बखानि।
सुक पिंजर बंधन परभौ मधुर बचन अनुमानि।।36।।

कुवलयानंद: -

लेशः स्याद्दोष गुणर्योगुणःद्दोषत्व कल्पनम्।
अखिलेषु बिहंगेषु हंत स्वच्छन्दचारिषु।।
शुक ! पंजर बंधनस्ते मधुराणां गिरां फलम्।।

।।अथ वकार सून्यम्।।

।।अथ सकारादि कथनम्।।

।। सामान्यालंकार लक्षणम् ।।

भिन्न रूप सादृश्य ते जानि परे न बिशेष।
सो सामान्या कहत है पण्डित सुकबि अशेष।।37।।

यथा -

भरत रामही की अनुहारी। सहसा लखि न सकहि नर नारी।।[2]

पुनः -

बेनु हरित मनिमय सब कीन्हें। सरल सपरब परहि नहिं चीन्हें।।
कनक कलित अहिबेलि बनाई। लखि नहिं परइ सपरन सुहाई।।[3]

कुवलयानंद: -

सामान्यो यदि सादृश्याद्विशेषो नोपलक्ष्यते।
पद्माकरं प्रविष्टानां मुखं नालक्षि सुभ्रुवाम्।।

---

1. *मानस 1/153/3*
2. *मानस 1/311/6*
3. *मानस 1/288/1-2*

।। सूक्ष्मालंकार लक्षणम् ।।

कौनहुं भाव प्रभाव ते जानै मन की बात।
तासो सूक्षम कहत हैं केसव मति अवदात।।38।।*

यथा -

सिव अंतरजामी भगवाना। उमा चरित्र सकल जिय जाना।।[1]

पुनः सतसैया -

लखि गुरु जन बिच कमल सों सीस छुवायो स्याम।
हरि सन्मुख करि आरसी हिये लगाई बाम।।[2]

कुवलयानंदः -

सूक्ष्मं पराशयाभिज्ञेतर साकूत चेष्टितम्।
मनि पश्यति सा केशैः सीमन्त मणि मा वृणोत्।।

।। स्मृतालंकार (स्मृत्यलंकार) लक्षणम् ।।

सदृश्य वस्तु देखत जहां देखै की सुधि होइ।
स्मृत नाम तासों कहैं कबि कोबिद सब कोइ।।39।।

यथा -

बीच बासि कर जमुनिंह आए। नीर निरखि लोचन जल छाए।।[3]

कुवलयानंदः -

स्यात्स्मृति भ्रांति सन्देहैस्तदङ्कालंकृतित्रयम्।
पङ्कजं पश्यतः कान्तामुखं मे गाहते मनः।।

।। सारालंकार लक्षणम् ।।

एक ते अधिक जहं एक एक ते घाटि।
सारालंकृत भाति द्वै भाषत सुकबि निपाटि।।40।।

---

* *कौनहु भाव प्रभाव ते जानै जिय की बात।*
इंगित तें आकार तें कहि सूक्षम अवदात।।
कविप्रिया 11/13

1. *मानस – ? अन्य रूप में [तब संकट देखेउ धरि ध्याना।*
सती जो कीन्ह चरित सबु जाना] 1/56/4

2. *बिहारी बोधिनी – 451*

3. *मानस 2/220/8*

प्रथम भेदो यथा –

सब मम प्रिय सब मम उपजाए। सबतें अधिक मनुज मोहि भाए।।
तिन महुँ द्विज द्विज महँ श्रुतिधारी। तिन महुं निगम धरम अनुसारी।।
तिनते प्रिय विरक्त मुनि ज्ञानी। ग्यानिहुँ ते अति प्रिय विग्यानी।।
तिन महँ प्रिय पुनि मोंहि निज दासा। जेहि गति मोहि न दूसरि आसा।।[1]

पुनः –

नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी। कोउ एक होइ धर्म व्रत धारी।।
धर्मसील सहसन (कोटिक) कोई। विषय विमुख विराग रत होई।।
सहस विरक्त मध्य श्रुति कहई। सम्यक् ज्ञान सकृत कोउ लहई।।
ज्ञानवंत सहसन (कोटिक) महँ कोई। जीवन मुक्त सकृत जग सोऊ।।
तिन्ह सहस्र महुँ सब सुख खानी। दुर्लभ ब्रह्मलीन मुनिग्यानी (विग्यानी)।।
तिनते (सबतें) दुर्लभ सुनु सुरराया। राम भगति रत गत मद माया।।
सो हरिभगति काग किमि पाई। बिस्वनाथ मोहि कहहु बुझाई।।[2]

एकावली अनुक्रमालंकार बिषे एक ते अधिक नहीं है। अरु कारण माला में कारण कारज को भेद है। अरु माला दीपक ते वर्ण्यावर्ण्य को भेद जानिए।।

द्वितीय भेदो यथा –

काने खोरे कूबरे कुटिल कुचाली जानि।
तिय बिसेषि पुनि चेरि कहि भरत मातु मुसुकानि।।

पुनः –

अधम ते अधम अधम अति नारी। तिन्ह महँ मैं मतिमंद गँवारी।।

कुवलयानंदः –

उत्तरोत्तर मुत्कर्षरसार इत्यमिधीयते।
मधुरं मधु तस्माच्च सुधा तस्याः कवेर्वचः।।

।। संदेहालंकार द्विधा लक्षणम् ।।

होइ जहाँ कछु वस्तु में सदृश वस्तु संदेह।
निश्चययान्त निश्चय गरभ द्वै विधि सो गुण गेह।।41।।

1. *मानस 86/4-7*
2. *मानस 7/54/1-8*

निश्चयगर्भ यथा -

सानुज भरत देखि मग माहीं। रामु लखनु सखि होहिं कि नाहीं।।
बय वपु बरन रूप सोइ आली। सीलु सनेहु सरिस सम चाली।।
बेषु न सो सखि सीय न संगा। आगे अनी चली चतुरंगा।।
नहिं प्रसन्न मुख मानस खेदा। सखि सन्देहु होइ एहिं भेदा।[1]

पुनः -

लरिकन्हि जाइ कही यह बाता। जम कर धार किधौं बरिआता।।[2]

गीतावली बिषे -

मुनि सुत किंधौं भूप बालक, किधौं ब्रह्म जीव जग जाए।
रूप जलधि के रतन सुछबि तिया लोचन ललित सोहाए (ललाए)।।
कै (किधौं) रवि सुवन, मदन ऋतुपति, किधौं हरिहर बेष बनाए।
किधौं आपने सुकृत सुरतरु के सुफल रावरेहि पाए।।[3]

निश्चयान्त यथा -

कै (की) मैनाक कि खगपति होई। मम बल जान सहित पति सोई।।
जाना जरठ जटायू एहा। मम कर तीरथ तजिहैं (छाड़िहि) देहा।[4]

कर तीरथ रूपक गर्भित है।।

कुवलयानंदः -

पंकजं वा सुधांशुर्वेत्यस्माकं तु न निर्णयः।।

।। समाहितालंकार लक्षणम् ।।

होत न केहू होत (हेत) जहं दैव जोग ते काज।
ताहि समाहित नाम करि बरनत कबि कबिराज।।42।।*

यथा - सुनत (कहत) कठिन समुझत कठिन साधत कठिन विवेक।
होइ घुनाच्छर न्याय जौं पुनि प्रत्यूह अनेक।।[5]

उपमा गर्भित है।

बरवै रामायणे- नृप निरास भये निरखत नगर उदास।
धनुष तोरि हरि सबकर हरेउ हरास।।[6]

---

1. *मानस 2/222/1-4 पूर्वार्ध इस रूप में - कहिअ काह कहि जाइ न बाता।*
2. *मानस 1/95/7*
3. *गीतावली 1/65/2-3*
4. *मानस 3/29/13-14*

* *हेतु न क्योंहू होत जहँ, दैवयोग ते काज।*

5. *मानस 7/118*
6. *बरवै रामायण-16*

।। समाधि लक्षणम् ।।

सो समाधि कारज सुफल और हेतु मिलि होत।
उत्कण्ठा तिय को भई अथयो दिन उद्योत।।43।।

यथा –

जहँ जहँ जाहिं देव रघुराया। करहिं मेघ तहँ तहँ नभ छाया।।[1]

पुनः –

पूँछि दहन (बचन सुनत) कपि मन मुसुकाना।
भइ सहाय सारद मैं जाना।।[2]

प्रहर्षण में और हेतु को नेम नहीं है।।

राम सलाका विषे –

जलद छाँह मृदु मग अवनि सुखद पवन अनुकूल।
हरषत बिबुध बिलोकि प्रभु बरषत सुरतरु फूल।।[3]

कुवलयानंदः –

समाधिः कार्य सौकर्थं कारणान्तर संनिधेः।
उत्कण्ठिता च तरुणी जगनास्तं च भानुमान्।।

।। सिद्धालंकार लक्षणम् ।।

साधि साधि औरै मरै और भोग वै सिद्धि।
तासों कहत सुसिद्धि सब जे हैं बुद्धि समृद्धि।।44।।

यथा– बिरचे जहाँ मुनिन्ह निज बासा। तहाँ निसाचर कीन्ह निवासा।।[4]

पुनः – संत बिटप सरिता गिरि धरनी। परहित हेतु सबनि कै करनी।।[5]

।। समालंकार लक्षणम् ।।

तीनि भाँति सम तिहुँन में कहत सतासत भेद।
जथा जोग को संग जहँ बरनत प्रथम अखेद।।
दूजे कारज में जहाँ कारण को अंग जानि।
श्रम बिनु कारज सिद्धि जहँ उद्यम किए बखानि।।45।।

---

1. *मानस 3/715*
2. *मानस 5/25/3*
3. *रामाज्ञा प्रश्न 4/6/2*
4. *मानस – ?*
5. *मानस 7/125/6*

प्रथम भेदो। सत योग यथा –

एहि लालसाँ मगन सब लोगू। बर साँवरो जानकी जोगू।।[1]

।। घन दामिनी को संयोग्य है ।।

पुनः –

देखेउ सब विधि (सकल भाँति) समसाजु समाजू। सम समधी देखे हम आजू।।[2]

असतयोग यथा –

जस दूलह तसि बनी बराता। कौतुक बिबिध होंहि मग जाता।।[3]

कुवलयानंदः –

समं स्याद्वर्णनं यत्र द्वयोरप्यनुरूपयोः।
स्वानुरूपं कृतं पद्म हारेण कुच मण्डलम्।।

द्वितीय भेदो। सत योग यथा –

यह तुम्हार आचरजु न ताता। दसरथ सुअन राम लघु (प्रिय) भ्राता।।[4]

असत् योग यथा –

का आश्चर्य (आचरजु) भरत अस करहीं। नहिं बिष बेलि अमिअ फल फरहीं।।[5]

श्लोकः – (कुवलयानंदः)

सारूप्यमपि कार्यस्य कारणेन समं विदुः।
नीचं प्रवणता लक्ष्मि ! जलजाया स्तवोचिता।।

तृतीय भेदः – सतयोग यथा–गीतावली –

हुती निसिदिन पंथ जोहत सबरि सुद्ध सुभाय।
कियो प्रभु अभिलाष पूरन दिव्य दरस देखाय।।[6]

असत योग यथा –

अब (तौं) मै जाइ बैर दृढ़ करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ।।[7]

---

1. *मानस 1/249/6*
2. *मानस 1/320/6*
3. *मानस 1/94/1*
4. *मानस 2/208/2*
5. *मानस 2/189/8*
6. *गीतावली – ?*
7. *मानस 3/23/4*

श्लोक: कुवलयानंद: -

विनाऽनिष्टं च तत्सिर्द्धियमर्थं कर्तुमुद्यत:।
युक्तो वारणलाभोऽयं स्यान्न ते वारणार्थिन:।।

।। समुच्चयालंकार लक्षणम् ।।

दोइ समुच्चय भाव बहु एकहि संग समृद्धि।
जहाँ करत है हेतु बहु एक काम की सिद्धि।।46।।

प्रथमं यथा गीतावली -

सोहति मधुर मनोहर मूरति हेम हरिन के पाछे।
धावनि नवनि बिलोकनि बिथकनि बसै तुलसी उर आछे।।[1]

द्वितीयं यथा -

जप तप नियम जोग (अज्ञ) निज-धर्मा। श्रुति संभव नाना बिधि कर्मा।।
ग्यान बिरति (दया) अह (दम) तीरथ मज्जन। जहँ लगि धर्म कहत श्रुति सज्जन।।
आगम निगम पुरान अनेका। पढ़े गुने (सुने) कर फल प्रभु एका।।
तव पद पंकज प्रीति निरंतर। सब साधन कर यह फल सुंदर।।[2]

गीतावली यथा -

काम क्रोध मद लोभ कपट हठ दंभ द्वेष दिन दुख उपजावत।।
ममता मोह द्रोह अति दुस्तर बरबस नरक पंथ पहुँचावत।।[3]

कुवलयानंद: -

बहूनां युगपद् भावभाजां गुम्फ: समुच्चय:।
नश्यन्ति पश्चात्पश्यन्ति त्रस्यस्ति च भवद्द्विष:।।

पुन: -

अहं प्राथमिका भाजामेक कार्यान्वयेऽपि स:।
कुलं रूपं वयो विद्या धनं च मद्यत्यमुम्।।

।। संख्यालंकार लक्षणम् ।।

क्रम ही सो जहं जोग है बहु को बहुतनि माँह।
अलंकार है संख्य तहँ भाषत कबि कुल नाह।।

---

1. *गीतावली – 3/3*
2. *मानस 7/49/1-4*
3. *गीतावली – ?*

आदि योग एक होत है अन्त योग पुनि जानि।
बालकृष्ण यह ग्रंथ मत द्वै बिधि संख्य बखानि।।47।।

आदि योग यथा –

भल अनभल निज निज करतूती।
लहत सुजस अपलोक विभूती।।[1]

राम सतसैया –

हिय फाटहु फूटहु नयन, जरहु सो तन केहि काम।
द्रवहिं, स्रवहिं, पुलकहिं नहीं, तुलसी सुमिरत राम।।[2]

कुवलयानंदः –

यथासंख्यं क्रमैणेव क्रमिकाणां समन्वयः।
शत्रु मित्रं विपतिं च जय रंजय भंजय।।

अन्तयोगो यथा –

दन्त सैल कर नखनि नराचनि भिरत भीम तन चहुँ दिसि धावत।
बेधि बिदारि मीजि मसकत भट काटि रुधिर नद नार बहावत।।[3]

चन्द्रोदय बिषे कालिदास कृतं –

समतया वसुवृष्टि विसर्जनैवर्नियमनादसतां च नराधिपः।
अनुयमौ यम पुण्य जनेश्वरौ स वरुणां बरुणाग्रसरं रुचा।।[4]

दोहा इस ही श्लोक का –

द्रव्य दान अति करन अरि, मारण समर प्रवीन।
जम कुबेर समदीप्तिजुत बरून अरुन सर पीन।।[5]

।। सोपाधिक रूपकालंकार लक्षणम् ।।

सोपाधक रूपक कहैं सिध्य साध्य एक धर्म्म।
मयन बान वारण करण बन्यौ बिवेकै बर्म्म।।48।।

यह रूपकहिं होत है प्राचीनाज्ञा ते भिन्न है।।

।। संभावनालंकार लक्षणम् ।।

जौ यौं तौ यौं कहत जहाँ संभावना बिचार।
बकता हो तो शेष जौं तौ पावत गुन पार।।49।।

---

1. *मानस 1/5/7*
2. *रामसतसैया (दोहावली) – दोहा 41*
3. *स्फुद छंद*
4. *रघुवंश 8/6*
5. *रघुवंश के उपर्यंकित श्लोक का अनुवाद।*

यथा -

जौं पै प्रिय बियोगु बिधि कीन्हा। तौ कस मीचु (मरनु) न माँगे दीन्हा।।[1]

कुवलयानंदः -

संभावना यदीत्थं स्यादित्यूहोऽन्यस्य सिद्धये।

यदि शेषो भवेद्वक्ता कथिताः स्युर्गुणास्तव।।

दृढ़ातिशयोक्ति के भेदते कछु मिलतु है।।

।। संकरालंकार लक्षणम् ।।

दोइ तीनि भूषण मिले तहँ संकर ह्वै जात।

बिना नियम कबि बाल यों बरनत मति अवदात।।50।।

यथा–

जिन्हके जस प्रताप के आगे। ससि मलीन रबि सीतल लागे।।[2]

यामे यथासंख्य प्रतीप बिभावना को संकर है।।

पुनः -

रामचरित मानस (जसु तुम्हार मानस) बिमल हंसिनि जीहा जासु।

मुक्ताहल गुन गन चुनइ राम बसहु उर (हिंय) तासु।।[3]

यामे रूपक समालंकार को संकर है।

।। संसृष्टि अलंकार लक्षणम् ।।

अलंकार भासै जहाँ एकहि ठौर अनेक।

सोइ तौ संसृष्टि है कबि जन बिमल बिबेक।।51।।

यथा गीतावली -

ससि सो मुख मोहत चकोर लखि तड़ित विनिन्दक पीत पिछोरी।।

मुकुतमाल तन मनहुँ नखत घन अद्भुत छबि कहि जात न सो री।।[4]

यामे उपमा भ्रांति प्रतीप उत्प्रेक्षा आदि की संसृष्टि है।।

---

1. *मानस 2/86/6*
2. *मानस 1/292/2*
3. *मानस 2/128*
4. *गीतावली – ?*

।।अथषकारशकार शून्यम्।।

।अथ हकारादि कथनम्।

।। हेत्वालंकार लक्षणम् ।।

कहत सभाव अभाव पुनि द्वै विधि हेतु बिचार।
तिनके दिये उदाहरण पण्डित बुद्धि उदार।।52।।

सभाव हेतुर्यथा -

कृपासिंधु मुनि दरसन तोरें। चारि पदारथ करतल तोरें।।[1]

अभाव हेतुर्यथा -

बिबसहुं जासु नाम नर कहहीं। जनम अनेक सचित (रचित) दहहीं।।[2]

।। अन्यथाप्रकारेण हेत्वालंकार लक्षणम् ।।

हेतु संग जहँ और ही हेतु हेतु उर आनि।
उदो सीत हित चन्द्रमा कियो मान की हानि।।

कुवलयानन्दः -

हेतोर्हेतुमता सार्द्धं वर्णनं हेतु रुच्यते।
असावुदेति शीतांशुर्मानच्छेदाय सुभ्रुवाम्।।

द्वितीय भेदः।।

हेतु हेतु एक मत जहाँ वहाँ कहावत हेतु।
तूँ कुल कमल दिनेस है दिन प्रति आनंद देतु।।

परम्परित रूपक ते मिलतु है।

कुवलयानन्दः -

हेतु हेतुमतोरैक्यं हेतुं केचित् प्रचक्षते।
लक्ष्मीविलासा विदुषां कटाक्षा वेङ्कटप्रभोः (विकटप्रभोः)।।

।अथ क्षकारादि शून्यम्।

।।अथ कादि कथनम्।।

।। क्रमालंकार लक्षणम् ।।

आदि अन्त भरि बरणिए सो क्रम केसवदास।
अरु गणना सो कहत हैं जिन्हके बुद्धि प्रकास।।53।।

---

1. *मानस 1/164/7*
2. *मानस 1/119/3*

प्रथमो यथा –

एहि के हृदय बस जानकी जानकी उर मम वास है।
मम उदर भुवन अनेक लागत बान सबकर नास है।।[1]

एकावली बिषे आदि अन्त को नेम नहीं है एतो भेद

द्वितीयं यथा –

प्रथम भगति सन्तन कर संगा।
दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।

दोहा – गुरु पद पंकजसेवा तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान।।

चौपाई – मंत्र जाप मम दृढ़ विस्वासा। पंचम भजन सो बेद प्रकासा।।
छठ दम सील बिरति बहु करमा। निरत निरंतर सज्जन धरमा।।
सातवँ सम मोहिमय जग देखा। मोते संत अधिक करि लेखा।।
आठवं यथालाभ संतोषा। सपनेहुँ नहि देखइ पर दोषा।।
नवम सरल सब सन छलहीना। मम भरोस हियँ हरष न दीना।।
नव महुँ एकउ जिन्हकें होई। नारि पुरुष सचराचर कोई।।
सो ममजन मन महँ तेहि राखौं। तो सो सत्य बचन मम भाखौं।।[2]

एकादिशत पर्यंत गणना को प्रमान है।।

।। कारणमाला अलंकार लक्षणम् ।।

पूर्व हेतु जहँ बराणिए उत्तर कारज होइ।
पुनि उत्तर कारण कहे कारणमाला दोइ।।54।।

पूर्व हेतु यथा –

धर्म ते बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान मोक्षप्रद बेद बखाना।।[3]

पुनः – रामकृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई।।
जाने बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीती होइ नहिं प्रीती।।
प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई।।[4]

।।अन्तकोपद उपमा है।।

---

1. *मानस 6/99/14-15*
2. *मानस 3/35-8 3/36/1-7*
3. *मानस 3/16/1*
4. *मानस 3/89/6-9*

पूर्वकार्य यथा गीतावली –

सुमति सतसंग बिनु संग बिनु भाग पुनि भाग अनुराग बिनु कौन पायौ।
राग बिनु भक्ति अरु भक्ति बिनु हरिकृपा होत नहिं खेद करि बेद गायौ।।[1]

कुवलयानन्दः –

गुम्फः कारणमाला स्याव्यथा प्राक्प्रान्त कारणैः।
नयेन श्रीः श्रिया त्यागस्त्यागेन विपुलं यशः।।

पुनर्यथा –

भवंति नरकाः पापात् पापं दारिद्र्य संभवम्।
दारिद्र्यमप्रदानेन तस्माद्दान परो भवेत्।।

।। काव्यलिङ्गाकार लक्षणम् ।।

काव्यलिङ्ग जब युक्ति सो अर्थ समर्थन होइ।
तो मैं जीवौ मदन मो हिय मे सिव सोइ।।55।।

यथा – तहाँ न जाहिं मोह मद माना। जेहि हिय धरे रामधनु बाना।।[2]

पुनः – स्याम गौर किमि कहों बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी।।[3]

बरवै रामायणे –

बिरह आगि उर ऊपर जब अधिकाइ।
ए अँखियाँ दोउ बैरिनि देहिं बुझाइ।।[4]

याते प्राण जान नहिं पावै यह युक्ति करि प्राण को रक्षण करयौ।।

कुवलयानन्दः –

समर्थनीयस्यार्थस्य काव्यलिङ्गं समर्थनम्।
जितोऽसि मन्द! कन्दर्प! मच्चित्तेऽस्ति त्रिलोचनः।।

।।अथ ख, ग, घ, ङ् शून्यम्।।

।अथ चकारदि कथनम्।

।। चित्रालंकार लक्षणम् ।।

प्रश्नोत्तर एक सब्द में चित्र कहे सब कोइ।
फिरि दूजे बहु प्रश्न को उत्तर एकै सोइ।।56।।

---

1. *गीतावली – ?*
2. *मानस – ?*
3. *मानस 1/229/2*
4. *बरवै रामायण – 36*

शब्दालंकार बिषे दुहुन के उदाहरण धरे हैं। प्राचीनोदित हैं। ताते अर्थालंकार में संग्रह कीयो।।

कुवलयानन्दः –

प्रश्नोत्तरान्तरा भिन्नमुत्तरं चित्रमुच्यते।
के-दार पोषणरताः के खेटाः, किं चलं वयः।।

।।अथ छकार शून्यम्।।

।अथ जकरादिकथनम्।

।। जातिसुभाव लक्षणम् ।।

जाको जैसो रूप गुण कहिए तेहो साज।
तासो जाति सुभाव कहि बरनत सब कबिराज।।57।।

यथा –

विद्या विनय निपुन गुन सीला। खेलहिं खेल (राम) सकल नृप लीला।।[1]

पुनः- राजकुमारि बिनय हम करहीं। तिय सुभायें कछु पूछत डरहीं।।
स्वामिनि अबिनय छमबि हमारी। बिलग न मानब जानि गवाँरी।।[2]
स्यामल गौर सुरूप सँवारे। सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे।।[3]

पुनः- खायउँ फल प्रभु लागी भूखा। कपि सुभाव तें तोरेउ रूखा।।[4]

।। युक्तालंकार लक्षणम् ।।

जथा उचित जहँ चाहिए तैसोई तहँ होइ।
बालकृष्ण सो युक्त है बरनत कबि सब कोइ।।58।।

यथा – पावक जानि धरहिं जे प्रानी। जरहिं ते काहे न अति अभिमानी।।
जानि गरल जे संग्रह करहीं। सुनहु राम तें काहे न मरहीं।।[5]

पुनः – (तेइ) रघुनंदनु लखनु सिय अनहित लागे जाहि।
तासु तनय तजि दुसह दुख दैउ सहावइ काहि।।[6]

चन्द्रालोके – तद्युक्तं विपरीतिकारिणी तव श्रीखंड चर्चा विषम्।।

---

1. *मानस 1/204/6*
2. *मानस 2/116/6-7*
3. *मानस 2/117/1*
4. *मानस – 5/22/3*
5. *मानस ?*
6. *मानस 2/262*

।। युक्तायुक्तालङ्कार लक्षणम् ।।

इष्टा बात अनिष्ट जहँ कैसेहू ह्वै जाइ।
तासो युक्तायुक्त कहि बरनत केसवराइ।।59।।*

यथा – प्राननाथ तुम बिनु बिनु जग माहीं। मो कहुँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं।।
भोग रोग सम भूषन भारू। जम जातना सरिस संसारू।।[1]

पंचम विभावना अरु विरोध ते और विरोधाभास के भेद ते मिलतु है।।

।। युक्ति अलंकार लक्षणम् ।।

इहै युक्ति कहिए क्रियन्ह मर्म छपायो जाइ।
पीय चलत आँसू चले पोछति नयन जँभाइ।।60।।

यथा –

देखन मिस मृग बिहग तरु फिरइ बहोरि बहोरि।
निरखि निरखि रघुबीर छबि बाढ़इ प्रीति न थोरि।।[2]

पर्यायोक्ति ते कछुभेद है।।

कुवलयानन्दः –

युक्तिः परातिसन्धानं क्रियया मर्म गुप्तये।
त्वामालिखन्ती दृष्टवाऽन्यं धनुः पौष्पं करेऽलिखत्।।

।।अथ झ ञ शून्यम्।।

।।अथ तकारादि कथनम्।।

।। तद्गुणालंकार लक्षणम् ।।

तद्गुण निज गुण त्यागि करि संगी के गुण लेइ।
नासा मोती अधर मिलि पद्मराग छबि देइ।।61।।

यथा – धूमउ तजइ सहज करुआई। अगरु प्रसंग सुगंध बसाई।।[3]

बरवै रामायणे –

सिय तुअ अंग रंग मिलि अधिक उदोत। हार बेलि पहिरावौं चम्पक होत।।[4]

---

* *कविप्रिया 11/18/4*

1. *मानस 2/65/5-6 [चौपाइयों में क्रम विपर्यय]*
2. *मानस – 1/234*
3. *मानस 1/10/9*
4. *बरवै रामायण – 13*

कुवलयानन्दः –

तद्गुणः स्वगुणत्यागाद दीय गुणग्रहः।
पद्मरागायते नासा मौक्तिकं तेऽधरत्विषा।।

।। तुल्ययोगिता त्रिधा लक्षणम् ।।

क्रिया बरन अबरन जहाँ तीनो तुल्य जु होइ।
तुल्य योगिता प्रथम तहँ बरनत है सब कोइ।।62।।

बरवैरामायणेः –

नित्य नेम कृत अरुन उदय जब कीन।
निरखि निसाकर नृप मुख भए मलीन।।[1]

कुवलयानन्दः –

वर्ण्यानामितरेषां वा धर्मैक्यं तुल्ययोगिता।
संकुचन्ति सरोजानि स्वैरिणी वदनानिच।।

द्वितीय भेदः –

एक सुसमता गुण किए बहुबिधि भनत प्रकार।
गुननिधि नीके देत तूं तिय को अरि को हार।।

यथा –

असुर सेन सम नरक निकंदिनि।
साधु बिबुध कुल हित गिरिनंदिनि।।

पार्वती अरुगंगा गिरिनंदिनि को अर्थ जानिए।।

पुनः –

शत्रु मित्र सम दान कर तुल्ययोगिता और।
देत पराभव अरिन को मित्रन को सुभ ठौर।।[2]

यथा – गुरु पितु मातृ बचन अनुसारी। खल दल दलन देवहितकारी।।[3]

कुवलयानन्दः –

हिताहिते वृत्ति तौल्यंमपरा तुल्ययोगिता।
प्रदीयते पराभूतिर्मित्रशात्र वयोस्त्वया।।

---

1. बरवै रामायण – 14
2. मानस 1/31/9
3. स्फुट दोहा।

तृतीयभेदः –

उत्तम गुण सामान्य करि तुल्ययोगिता जानि।
मघवा वरुणा कुबेर से ऐसे नृपति बखानि।।

यथा कवित्त रामायणे –

सीय के स्वयंबर समाज जहाँ राजनि को,
राजनि के राजा महाराजा जानै नाम को?
पवन पुरंदर, कृसानु, भानु, धनद से,
गुण के निधान रूपधाम सोभा काम को।।[1]

कुवलयानन्दः –

गुणोत्कृष्टैः समीकृत्य वचोऽन्या तुल्ययोगिता।
लोकपालः यमः पाशी श्रीदः शक्रो भवानपि।।

।।अथ थकार शून्यम्।।

।अथ दकारादिकथनम्।

।। दीपकालंकार लक्षणम् ।।

दीपक बर्ण्यावर्ण्य जहँ धर्म एक ही मानि।
मधुकर सोहत कञ्ज जहँ नृपति नृपति जहँ जानि।।63।।

यथा –

कसें कनकु मनि पारस (पारिखि) पाएँ।
पुरुष परिखिअहिं समयँ सुभाएँ।।[2]

कुवलयानन्दः –

वदन्ति वर्ण्यावर्ण्यानां धर्मैक्यं दीपकं बुधाः।
मदेन भाति कलभैः प्रतापेन महीपतिः।।

।। अथ दीपकावृत्त लक्षणम् ।।

(आवृत्ति दीपक अलंकार)

पद अरु अर्थ पदार्थ पुनि आवृत्त दीपक जानि।
तीनि भाँति सोग्रंथ मत मम्मट गए बखानि।।

पदावृत्त लक्षणम् –

पदावृत्त तहँ होत जहँ दीपक पद बहु बार।
रति राजत राजत रभा छबि सो राजत दार।।

---

1. *कवितावली – 1/9*
2. *मानस – 2/283/6*

अर्थावृत्त उभयावृत्त लक्षणम् –

सुमन सहित फूले कदम अर्थावृत्त सुजानु।
मोरमत्त चातृक भए उभयावृत्त बखानु।।

यथा गीतावली वसंत वर्णने –

फूले पलास फूले रसाल। लहलहत लता नवदल तमाल।
कोकिला करत रव सरसभृंग। दीपत दुहुँ दिसि दीपक अनंग।।[1]

इतिकाव्यप्रकाशमते।।

कुवलयानन्दो यथा –

त्रिविधं दीपिका वृत्तौ भवेदावृत्ति दीपकम्।
वर्षत्यम्बुदमालेयं वर्षत्येषा च शर्वरी।।
उन्मीलन्तिः कदम्बानि स्फुटन्ति कुटजोद्गमाः।
माद्यन्ति चातकास्तृप्ता माद्यन्ति च शिखावलाः।।

।इति क्रमेणोदाहरणानि।।

यथा वा पदावृत्तः –

प्रगटेसि तुरत रुचिर रितुराजा। कुसुमित नवतरु राजि बिराजा।।[2]
राज राज पद एक अरु अर्थ भिन्न है ताते पद की ही आवृत्ति है।।

अर्थावृत्त यथा –

कुसुमति बिपिन बिटप बहुरंगा। कूँजहिं कोकिल गुञ्जहिं भृङ्गा।।[3]
कूँजहि गुंजहि अर्थ एक ही है।।

उभयावृत्त यथा –

पुरी बिराजत राजत रजनी। रानिन्ह कहेउ बिलोकहु सजनी।।[4]
राजत राजत सब्द अर्थ एक ही है।।

।। अन्यथा प्रकारेण दीपकं द्विधा ।।

दीपक रूप अनेक हैं मैं बरने द्वै रूप।
माणि माला तासो कहत केसब सब कबि भूप।।

---

1. *गीतावली – ?*
2. *मानस 1/86/6*
3. *मानस 1/126/2*

।। मणि दीपक कथनम् ।।

बरषा सरद बसन्त ससि सुभता सोम सुगन्ध।
प्रेम पवन भूषन भवन दीपक दीपक बन्ध।।
इनमें एक जो बरनिए कौन हुँ बुद्धि बिलास।
मणि दीपक तासो सदा कल्यित केसवदास।

बरषा यथा – घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रियाहीन डरपत मन मोरा।।[1]
पवन यथा – चली सुहावनि त्रिविध बयारी। काम कृसानु बढ़ा वनि हारी।।[2]
प्रेम यथा – सबके हृदयँ मदन अभिलाषा। लता निहारि नवहिं तरु साखा।[3]
शोभा यथा: – रंभादिक सुरनारि नवीना। सकल असमसर कला नवीना।।[4]
वसन्त यथा – तेहि आश्रमहिं मदन जब गयऊ। निज मायाँ बसंत निरमयऊ।।[5]
विबिध भाँति फूले तरुनाना। ललित मनोहर लता बिताना।।[6]

।इत्यादि ज्ञेयम्।।

।। मालादीपक कथनम् ।।

सबै मिलै जब बरणिए देश काल बुधिवंत।
माला दीपक होत है ताके भेद अनन्त।।*

पुन: –

मिलि दीपक एकावली माला दीपक होइ।
समर सहित तिय हिय लसै तिय पिय हिय मे जोइ।।

यथा गीतावली –

सहित सुखमा सोह तन तन सहित बनहिं बखानि।
सहित बन गिरि सहित छिति भई छबि को खानि।।[7]

कुवलयानन्द: –

दीपकैकावली योगान्माला दीपक मिष्यते।
स्मरेण हृदये तस्यास्तेन त्वयिकृता स्थिति:।।

---

1. *मानस 1/358/3*
2. *मानस 4/14/1*
3. *मानस 1/85/1*
4. *मानस 1/126/4*
5. *मानस 1/126/1*
6. *मानस 3/38/3 (पाठान्तर – बिबिध भाँति फूले तरु नाना। जनु बानैत बने बहु बाना।।*

* कविप्रिया प्रभाव – 13

7. *गीतावली – ?*

।। दीपकारकालंकार लक्षणम् ।।

क्रमकनि को जहँ एक में गुंफ वरणि जत होइ।
कारक दीपक ताहि सो कहत सयाने लोइ।।

यथा –

फिरि फिरि आवति जाति पुनि पूछति मृदु मुसुकाति।
बालकृष्ण को ललित मुख लखि ललचाति लजाति।।[1]

कुवलयानन्दः –

क्रमिकैकगतानां तु गुम्फः कारक दीपकम्।
गच्छत्यागच्छति पुनः पान्थः पश्यति पृच्छति।।

चन्द्रोलोके –

सा रोमाञ्चति शीत्करोति विलपत्युत्कम्पते ताम्यति।
ध्यायत्युद्भ्रमति प्रमिलति पतत्युर्य्याति मूर्छत्यपि।।

।। इत्यादि ज्ञेयम् ।।

।। अथ दृष्टान्तालंकार लक्षणम् ।।

जहाँ बिम्ब प्रतिबिम्ब है सो दृष्टान्त प्रमान।
कान्तिमान है चन्द्रमा राजा कीरतिमान।।64।।

यथा गीतावली –

सीलनिधि निसिनाथ राम सुसील निधि पहिचानि।
तापवन्त दिनेस राम प्रतापवन्त बखानि।।[2]

लक्षणोपमा ते मिलतु है।।

कुवलयानन्दः –

चेद्बिम्ब प्रतिबिम्बत्वं दृष्टान्तस्तदलं कृतिः।
त्वमेव कीर्तिमान् राजन्विधुरेव हि कान्तिमान्।।

।। अथ धकारादि कथनम् ।।

।। धन्यतालंकार लक्षणम् ।।

वरण अर्थ ते अधिक जहँ उपजावै कछु बात।
धन्यत तासों कहत हैं जाकों मति अवदात।।65।।

---

1. स्फुट छंद
2. *गीतावली– ?*

यथा -

निसि अँधेरि नहिं संग सखि ननद नाह के भौन।
पति विदेस हों एक सी ह्यां तू उतरत कौन।।[1]

।।अथ नकारादि कथनम्।।

।। निर्णयालंकार लक्षणम् ।।

जहाँ होत है एक की निर्णय बहु मुख माह।
अलंकार निर्णय कहत तासों कवि कुल नाह।।66।।

यथा बरवै रामायणे -

कोउ कह नर नारायन हरि हर कोउ।
कोउ कह बिहरत बन मधु मनसिज दोउ।।[2]

उल्लेख बिषे सुग्रीवादिक की उक्ति करि चन्द्र लाच्छन बिषे जो निर्णय कथन है सोऊ एही अलंकार जानिए।।

।। निदर्शनालंकार लक्षणम् ।। त्रिधा ।।67।।

प्रथम भेदः -

सदृश वाक्य जुग अर्थ को जहां एक आरोप।
या बिधि प्रथम निदर्शना भाषत करत न लोप।।

यथा -

जो कीरति तो मे बहै चन्द्र चन्द्रिका साथ।
जो कृपान तेरे करन्हि सोइ अर्जुन के हाथ।।[3]

कुवलयानन्दः -

वाक्यर्थयोः सदृशयोरैक्यारोपो निदर्शना।
यद्दातुः सौम्यता सेयं पूर्णोन्दोरकलङ्कता।।

द्वितीयभेदः -

जहाँ बृत्ति पद अर्थ की एक कहत कबिराज।
सोऊ होत निदर्शना समुझत सुमति समाज।।

---

1. *स्फुट दोहा*
2. *बरवै रामायण – 22*
3. *स्फुट दोहा – ?*

यथा -

जब कर गहत कमान सर देत परन्हि को भीति।
महाराज मैं पाइअै तब अर्ज्जुन की रीति।।[1]

कुवलयानन्दः -

पदार्थवृत्तिमप्येके वदन्त्यन्यां निदर्शनाम्।।
त्वन्नैत्र युगलं धत्ते लीलां नीलाम्बुजन्मनोः।।

तृतीय भेदः -

करत असत सत अर्थ को एक क्रिया सो बोध।
तीजो कहत निदर्शना जिनके अमित प्रबोध।।

यथा -

संत कृपा सुख होत है रबि ते कमल विकास।
राज बिरोधी नसत है चंद उदय तम नास।।

कुवलयानन्दः -

अपरां बोधनं प्राहुः क्रिययाऽसत्सदर्थयोः।
नश्येद्राजविरोधीति क्षीणं चन्द्रोदये तमः।।
उदयेन्नैव सविता पद्मेष्वर्षयति श्रियम्।
विमावन् समृद्धिनां फलं सुहृदनुग्रहम्।।

अथान्य प्रकारेण काव्य प्रकाशे लक्षणम्।।

असम्भवी संबंध को कछु संबंध जो होइ।
परिकल्पित उपमा किए निदर्शना है सोइ।।

यथा -

बाहनि (बोहित) ही चाहै तर्‌यौ सुन्दरि सिन्धु अपार।
जो तेरे गुण कथन को उद्यम करै बिचार।।[2]

पुनः -

सुनु खगेस हरि भगति बिहाई। जे सुख चाहहिं आन उपाई।।
ते सठ महासिंधु बिनु तरनी। पैरि पार चाहहिं जड़ करनी।।[3]

।। नियमविरोधी अलंकार लक्षणम् ।।

जहां नियम बिरुद्ध है तहाँ जो होत बिरुद्ध।
तासों नियम बिरुद्ध यह केसव मति सुद्ध।।68।।

---

1. *स्फुट दोहा – ?*
2. *स्फुट दोहा – ?*
3. *मानस 7/115/3–4*

यथा -

सिव द्रोही मम दास (भगत) कहावा। सो नर सपनेहुँ मोहिं न पावा।।[1]

गीतावली -

जद्यपि बुधि, बय, रूप, सील, गुन सम सुख (समै चारु) चार्‌यो भाई।
तदपि लोक - लोचन - चकोर - ससि राम भगत सुखदाई।।[2]

।। अथ ट, ठ, ड, ढ, ण शून्यम् ।।

।। अथ पकारादि कथनम् ।।

।। प्रतीपालंकार पञ्चधा ।।69।।

प्रथम प्रतीप लक्षण -

सो प्रतीप उपमेय की कीजै जब उपमान।
तन दृग से अम्बुज लसै मुख सो चन्द बखान।।

यथा -

बिदा किए बहु बिनय करि फिरे पाइ मन काम।
उतरि नहाए जमुन जल जो सरीर सम स्याम।।[3]

कुवलयानन्दः -

प्रतीपमुपमान स्योपमेयत्व प्रकल्पनम्।
त्वल्लोचन समं पद्मं त्वद्वक्त्र सदृशो विधुः।।

द्वितीय प्रतीप लक्षणम् -

उपमेयहिं उपमान ते आदर जबै न होइ।
मुख को गर्व कहा करै या सम चन्दहि जोइ।।

यथा गीतावली -

दृग खंजन अरु ग्रीवा कपोत। गति मंद हंसे तब हंस पोत।
निदरत सुक नासिक संकहीन। बिनु तोहि प्रिया मोहि करत दीन।।[4]

कल्पित भ्रांति ते कछु मिलतु है।

---

1. *मानस 6/2/7*
2. *गीतावली – 1/16/2*
3. *मानस 2/109*
4. *गीतावली – 2*

बरवै रामायणे -

का मुख मूँदहु नवला नारि।
चाँद सखा पर सोहत यह अनुहारि।।[1]

पुनः -

गरब करहु रघुनन्दन जनि मन माँह।
देखहु आपन मूरति सिय कै छाँह।।[2]

कुवलयानन्दः –

अन्योपमेय लाभेन वर्ण्यस्यानादरश्चतत्।
अलं गर्वेण ते वक्त्र ! कान्त्याचन्द्रोऽपितादृशः।।

तृतीय प्रतीप लक्षणम् -

अनादरित उपमेय ते त्योंही उपमा जानि।
अहे कमल गर्बत कहा तो सम नयन बखानि।।

यथा - कहँ लगि कहौं हृदय कठिनाई। निदरि कुलिस जेहिं लही बड़ाई।।[3]

कुवलयानन्दः –

वर्ण्योपमेय लाभेन तथान्यस्याप्यनादरः।
कः क्रौर्य दर्पस्ते मृत्यो ! त्वत्तुल्याः सन्ति हि स्त्रियः।।

चतुर्थ प्रतीप लक्षणम् -

उपमेयहिं उपमान जब समता लागत जाहिं।
अति उत्तम दृग मीन से कहे कौन बिधि जाहिं।।

यथा -

बहुरि विचार कीन्ह मनमाहीं। सीय बदन सम हिमकर नाहीं।।[4]

पुनः - भूपति भवन सुभायँ सुहावा। सुरपति सदन न पटतर पावा।।[5]

कुवलयानन्दः –

वर्ण्येनान्यस्योपमाया अनिष्पत्तिवचश्च तत्।
मुधापवादो मुग्धाक्षि ! त्वन्मुखाभं किलाम्बुजम्।।

पञ्चम प्रतीप लक्षणम् -

मंद बृथा कछु नहिं कहा मिथ्या के उपमान।
तो मुख देखि कमल कहा कहा मयंक बखान।।

---

1. *बरवै रामायण – 17*
2. *बरवै रामायण – छंद 18*
3. *मानस 2/179/8*
4. *मानस 1/237/8*
5. *मानस 2/90/7*

यथा सीता मंगल बिषे -

नील कमल द्युति कवनि कहा मरकत मनि।
कितिक मनोहर मेघ देखि रघुकुल मनि।।[1]

कुवलयानन्दः –

प्रतीपमुपमानस्य कैमर्थ्यमपि मन्यते।
दृष्टं चेद्वदनं तस्या किं पद्मेन किमुन्दुना।।

।। परिणामालंकार लक्षणम् ।।

बिषयी बिषय क्रिया करै सो परिणाम बिचारि।
वह बिसाल दृग कमल करि देखन हारि सुनारि।।70।।

यथा -

राम चरन पंकज प्रिय जेही (जिन्हहीं)।
बिषय भोग बस करहिं न तेही (तिन्हहीं)।।[2]

गीतावली -

सजनी हैं कोउ राजकुमार।
पंथ चलत मृदु पद कमलनि दोउ रूप सील आगार।।[3]

कुवलयानन्दः –

परिणामः क्रियार्थश्चे द्विभयी विषयात्मना।
प्रसन्नेन दृगब्जेन वीक्षते मदिरेक्षणा।।
अमरी कवरी भार भ्रमरी मुखरी कृतम्।
दूरी करोति दुरितं गौरी चरण पंकजम्।।

।। परिवृत्तालंकार लक्षणम् ।।

करत जहाँ (वौरे) औरे कछू उपजि परै कछु वौर (और)।
तासों परिवृत्त कहत हैं केसव कबि सिरमौर।।71।।

यथा -

सोचहिं दूषन दैवहिं देहीं। बिरचत हंस काग कृत जेही।।
लिखत सुधाकर गा लिखि राहू। बिधि गति बाम सदा सब काहू।।[4]

---

1. *सीता मंगल – 1*
2. *मानस 2/84/8*
3. *गीतावली – 2/29*
4. *मानस 2/55/2*

।। पर्यायोक्त (पर्यायोक्ति) अलंकार लक्षणम् ।।

पर्यायोक्त प्रकार द्वै कछु रचना सो बात।
मिस कारे कारज कीजिए जैसो जाहि सोहात।।72।।

बचन रचना यथा कवित्त रामायणे –

बिंध्य के बासी उदासी तपोब्रतधारी महा बिनु नारि दुखारे।
गौतम तीय तुलसी सो कथा सुनि भे मुनिवृंद सुखारे।।
ह्वैहैं सिला सब चंद्रमुखी परसे पद मंजुल कंज तिहारे।
कीन्हि भली रघुनायक जू करुनाकरि कानन को पगु धारे।।[1]

कुवलयानन्दः –

पर्यायोक्त तु गम्यस्य वचो भङ्ग्यन्तराम्।
नमस्तस्मै कृतो येन मुधा राहु वधू कुचौ।।

मिसु कार्य यथा बरवै रामायणे –

उठीं सखि हँसि मिसि करि कहि मृदु बैन।
सिय रघुबर के भए उनीदे नैन।।[2]

कुवलयानन्दः –

पर्यायोक्तं तदप्याहुर्य द्वयाजेनेष्ट साधनम्।
यामि चूतलतां द्रष्टुं युवाम्यामास्यतामिह।।

।। प्रहर्षणालंकार लक्षणम् ।।

जहाँ जतन बिनु होत है बाँछित फल बहु भाय।
बिन ही श्रम बाँछित सुफल ताहू ते अधिकाय।।
करिय सोध जेहि जतन को परै वस्तु सो हाथ।
कहे प्रहर्षण नीति बिधि पण्डित विद्यानाथ।।73।।

प्रथम भेदो यथा –

सोचत (चितवत) पंथ रहेउँ दिन राती।
अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती।।[3]

द्वितीय भेदः –

मरन समय (मरनसीलु) महँ (जिमि) पाव पिऊषा।
सुरतरू लहै जनम कर भूखा।।[4]

---

1. *कवितावली 2/28*
2. *बरवै रामायण – 19*
3. *मानस 3/8/3*
4. *मानस 1/335/5*

जनम रंक जस (जनु) पारस पावा।
अंधहिं लोचन लाभ सुहावा।।[1]

तृतीय भेदो यथा –

सींक धनुष हित कासि पनच (सिखन सकुचि) प्रभु लीन।
मुदित माँगि इक धनुहीं नृप हँसि दीन।।[2]

कुवलयानन्दः –

उत्कंठितार्थ संसिद्धि बिना यत्न प्रहर्षणम्।
तामेव ध्यायते तस्मै विसृष्टासैव दूतिका।।
वाञ्छितादधिकार्थस्य संसिद्धिश्च प्रहर्षणम्।
दीपमुद्योजयेद्याव तावदभ्युदितो रविः।।
यत्नादुपाय सिद्धयार्थात साक्षाल्लाभः फलस्य च।
निध्यञ्जनौषधी मूलं खनता साधितो निधिः।।

।। प्रहेलिकालंकार लक्षणम् ।।

बरनिय बस्तु दुराय जहँ कौनहुँ बुद्धि प्रकार।
तासो कहत प्रहेलिका केसवदास उदार।।74।।*

यथा – लोचन पन्द्रह पाँच मुख पसुवाहन दुर्गेस।
बसत ऊजरे कुधर पर तुलसी नमत महेस।।[3] इति कृष्णचरित्रे।।

।। पूर्वरूपकालंकार लक्षणम् ।।

पूर्वरूप लै संग गुन तजि फिरि अपनो लेतु।
दूजे जब गुन नहिं मिटै किए मिटन की हेतु।।75।।

प्रथमभेदो यथा बरवै रामायणे –

केस मुकुत सखि मरकत मनिमय होत।
हाथ लेत पुनि मरकत करत उदोत।।[4] इति अज्ञातत्व समये।

द्वितीयभेदेः – राकापति षोडस उअहिं तारागन समुदाइ।
सकल गिरिन्ह दव लाइअ बिनु रवि राति न जाइ।।[5]

कुवलयानन्दः –

पुनः स्वगुण संप्राप्तिः पूर्वरूपमुदाहृतम्।
हरकठांशु लिप्तोऽपि शेषस्त्वद्यशसासितः।।

---

1. *मानस 1/350/7*
2. *बरवै रामायण – 8*

* *कविप्रिया 13वाँ प्रभाव*

3. *कृष्ण चरित्र – 1*
4. *बरवै रामायण – 9*
5. *मानस 7/78*

पूर्ववस्थानुवृत्तिश्च विकृते सति वस्तुनि।
दीपे निर्वापितेऽप्यासीत् काञ्चीर लैर्महन्महः।।

।। प्रत्यनीकालंकार लक्षणम् ।।

तासो कछु न बसाति है जिन्ह कीन्हे अपकार।
मारै ताके निर्बलहिं प्रत्यनीक लंकार।।76।।

यथा –

रे खल का मारसि कपि भालू। मोहि बिलोकि तोर मैं कालू।।[1]

बरवै रामायणे रामवाक्यम् –

सीय बरन सम केतकि अति हिय हारि।
कहेसि भँवर कर हरवा हृदय बिदारि।।[2]

कुवलयानन्दः –

प्रत्यनीकं बलवतः शत्रोः पक्षे पराक्रमः।
जैत्रानेत्रानुगौ कर्णवुत्पत्लाभ्यामधः।।

।। परिकरालंकार लक्षणम् ।।

है परिकर आसय लिए जहाँ बिशेषण होइ।
ससिबदनी वह नायिका ताप हरत है जोइ।।77।।

यथा – सुभग राम (सोन) सरसीरुह लोचन। बदन मयंक तापत्रय मोचन।।[3]
रूपक गर्भित है।।

पुनः – सीतल निसित बहसि बरधारा। कह सीता हरु मम दुख भारा।।[4]

कुवलयानन्दः –

अलंकारः परिकरः साभिप्राये विशेषणे।
सुधांशुकलितोत्तंसस्तावं हरतु वः शिवः।।

।। परिकरांकुरालंकार लक्षणम् ।।

साभिप्राय विशेष्य जहँ परिकर अंकुर नाम।
ग्रंथ मते बरनत सवै जिनकी मति अभिराम।।78।।

---

1. *मानस 6/83/1*
2. *बरवै रामायण – 32*
3. *मानस 1/219/6*
4. *मानस 5/10/6*

यथा – झरना झरतिं सुधा सम बारी। त्रिबिध तापहर त्रिबिध बयारी।।[1]

पुनः –

चंद्रहास हरु मम परितापं। रघुपति बिरह अनल संजातं।।[2]

कह सीता सुनु विटप असोका। सत्य नाम करु हरु मम सोका।।[3]

कुवलयानन्दः –

साभिप्राये विशेष्ये तु भवेत्परिकरांकुरः।
चतुर्णां पुरुषार्थानां दाता देवश्चतुर्भुजः।।

।। प्रेमालंकार लक्षणम् ।।

कपटनिपट मिटि जाइ जहँ उपजै पूरन प्रेम।
ताही सो सब कहत हैं केसव भूषन प्रेम।।79।।*

यथा –

दसि अरु बिदिसि पंथ नहि सूझा। को मैं चलेउ कहाँ नहि बूझा।।
कबहुँक फिरि पाछे मुनि जाई। कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई।।
निर्भर प्रेम मगन मुनि ग्यानी। कहि न जाइ सो दसा भवानी।।[4]

।। प्रसिद्धालंकार लक्षणम् ।।

साधन साधै एक जहँ भोग वै सिद्धि अनेक।
तासो कहत प्रसिद्ध सब केसव सहित बिबेक।।80।।†

यथा –

मुखिया मुख सो चाहिए खानपान को एक।
पालै पोषै सकल अंग तुलसी सहित बिबेक।।[5]

उपमा गर्भित है।

गीतावली बिषे –

तुलसी दसहुँ ओर घोर धुनि भरिहै।
एकहि धनुष हानि हानि सब हरि है।।[6]

---

1. मानस 2/249/6
2. मानस 5/10/5
3. मानस 5/12/10
4 मानस 3/10/10-12
5. मानस – 2/315
6. गीतावली – ?

* *कविप्रिया प्रभाव 11/11*
† *कविप्रिया-प्रभाव – 13*

।। प्रश्नोत्तरालंकार लक्षणम् ।।

उत्तर प्रति उत्तर जहाँ तहँ प्रश्नोत्तर जानि।
को है अमृत समान सखि तेरे मुख की बानि।।81।।

यथा – पूँछी कुसल कुसल पद देखी। राम कृपाँ भा काजु बिसेषी।।[1]

पुनः – कह दसकन्ध कवन तै बंदर। मैं रघुबीर दूत दसकन्धर।।[2]

।। प्रतिषेधालंकार लक्षणम् ।।

सो प्रतिषेध प्रसिद्ध जो अर्थ निषेधहिं जाइ।
मोहन की मुरली नहीं कछु यक बड़ी बलाय।।82।।

यथा – चरन कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई।।[3]

कुवलयानन्दः –

प्रतिषेधः प्रसिद्धस्य निषेधस्यानु कीर्तनम्।
न द्यूतमेतत्कितव! क्रीड़नं निशितैः शरैः।।

।। परिसंख्यालंकार लक्षणम् ।।

एक वस्तु को एक ही ठौर नियम जहँ होइ।
सब ठौरनि ते दूरिकरि एकहिं में कहि सोइ।।
शब्द सू अर्थ निषेध ते प्रश्नाप्रश्न बखानि।
परिसंख्या हैं चारि बिधि मम्मट मत ते जानि।।83।।

शब्दगत वर्जनीया प्रश्नपूर्वक परिसंख्या –

यथा – को भवसागर तारि हैं सुख सागर रघुनंद।
को हरिहै दुखदन्द यह नटनागर नँदनंद।।[4]

अर्थगत वर्जनीया प्रश्नपूर्वक परिसंख्या –

काह न पावक जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करै अबला प्रबल, को (केहि) जग काल न खाइ।।[5]

काकु वक्रोक्ति ते मिलतु है अरु प्रथममेद प्रश्नोत्तर ते अभेद है।

---

1. *मानस 5/29/4*
2. *मानस 6/20/1*
3. *मानस 2/100/4*
4. *स्फुट दोहा।*
5. *मानस 2/47*

शब्दगत वर्जनीया अप्रश्नपूर्वक परिसंख्या –

यथा – नहिं कलि करम न भगति बिबेकू। राम नाम अवलंबन एकू।।[1]

पुनः – कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम गुन गाना।।[2]

पुनः –

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान।
जनम जनम रति राम पद यह बरदानु न आन।।[3]

अर्थगत वर्जनीया अप्रश्न पूर्वक परिसंख्या –

दंड जतिन्ह कर भेद जहँ नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहि सुनिअ अस रामचंद्र के राज।।[4]

कुवलयानन्दः –

परिसंख्या निषिध्यैक मेकस्मिन् वस्तु यंत्रणम्।
स्नेहक्षयः प्रदीपेषु न स्वान्तेषु नतभ्रुवाम्।।

।। पिहितालंकार लक्षणम् ।।

पिहित छपै पर बात को क्रिया सहित आकूत।
नील चीर रँगि पीत रंग पियहि दियो करि धूत।।84।।

यथा बरवैरामायणे –

सजल कठौता कर गहि कहत निषाद।
चढ़हु नाव पग धोइ करहु जनि बाद।।[5]

कुवलयानन्दः –

पिहितं परवृत्तान्त ज्ञातुः साकूत चेष्टितम्।
प्रिये गृहागते प्रातः कांता तल्पमकल्पयत्।।

।। पर्यायालंकार लक्षणम् ।।

क्रम ही सो बहुबस्तु में एक वस्तु जु समाय।
एक बस्तु में बस्तु बहु दुबिध होत पर्याय।।85।।

---

1. *मानस 1/27/7*
2. *मानस 7/103/5*
3. *मानस 2/304*
4. *मानस 7/22*
5. *बरवै रामायण – 25*

प्रथमं यथा गीतावली –

भाल भौंहन में अलक में तिलक झलक सुभाय।
निरखे रघुबर रूप नख सिख रह्यौ नैन समाय।।[1]

द्वितीयं यथा – उदर माझ सुनु अंडज राया। देखेउँ बहु ब्रह्माण्ड निकाया।।
अगनित (कोटिन्ह) चतुरानन गौरीसा। अगनित उडगन रबि रजनीसा।।
अगनित लोकपाल जमकाला। अगनित भूधर भूमि बिसाला।।
सागर सरि सर बिपिन अपारा। नानाभाँति सृष्टि विस्तारा।।[2]

पुनः बरवै रामायणे –

जरा मुकुट कर सर धनु संग मरीच।
चितवनि बसति कनखियनु अँखियनु बीच।।[3]

कुवलयानन्दः –

पर्यायो पर्यायेणेकस्यानेक संश्रयः।
पद्मं मुक्त्वा गता चन्द्रं कामिनी वदनोपमा (वदनप्रभा)।।
एकस्मिन् यद्यनेकं वा पर्यायः सोऽपि संमतः।
अधुना पुलिनं तत्र यत्र स्त्रोतः पुराऽजनि।।

सारुप्य समासोक्ति ते मिलतु है।

।। प्रत्यायालंकार लक्षणम् ।।

घटि अरु बढ़ि द्वै बस्तु को जहाँ पलटिबो होइ।
ताही सो प्रत्याय कहि बरनत कबि सब कोइ।।86।।

यथा –

पुनः – काँच कीर्च्व (किरिच) बदलें ते लेहीं। करतें डारि परसमनि देहीं।।[4]

यह जियँ जानि संकोचु तजि करिअ छोहु लखि नेहु।
हमहि कृतारथ करन लगि फल तृन अंकुर लेहु।।[5]

याको विनिमयालंकार भी कहत हैं।

---

1. *गीतावली – ?*
2. *मानस 7/80/3-7*
3. *बरवै रामायण – 30*
4. *मानस 7/121/12*
5. *मानस 2/250*

।। प्रतिविम्बालंकार लक्षणम् ।।

वर्ण्य वाक्य के अर्थ को जहँ दूजी प्रतिबिम्ब।
ताही सो सब कहत हैं अलंकार प्रतिबिम्ब।।87।।

यथा – पेड़ काटि तैं पालउ सींचा। मीन जिअन हित (निति) बारि उलीचा।।[1]

सुद्ध समासोक्ति तें मिलतु है।

कुवलयानन्दः –

प्रस्तुते वर्ण्य वाक्यार्थ प्रतिबिम्बस्य वर्णनम्।
ललितं निर्गते नीरे सेतुरेषा चिकीर्षति।।

पुनः –

मेरो सिख सीखै न तूँ मो सो उठति रिसाइ।
सोयो चाहत नींद भरि सेज अंगार बिछाइ।।[2]

पुनः – सो मैं कहौं कवन बिधि बरनी। भूमिनागु सिर धरइ कि धरनी।।[3]

।। परस्परालंकार लक्षणम् ।।

करै परस्पर काज कछु तहाँ परस्पर होइ।
बरनत कबि कोबिद सबै ग्रंथ समुद्र बिलोइ।।88।।

यथा – राम तुम्हहि प्रिय तुम्ह प्रिय रामहि।
यह निरदोस (निग्जोसु) दोसु बिधि बामहि।।[4]

अन्योन्य ते मिलतु है।

।। प्रस्तुतांकुरालंकार लक्षणम् ।।

प्रस्तुत करि अप्रस्तुतहिं जहँ उद्योत न होइ।
अछत मालती केतकी बिद्ध भृंग क्यों होइ।।89।।

यथा कुवलयानन्दः –

प्रस्तुतेन प्रस्तुतस्य द्योतने प्रस्तुताङ्कुरः।
किं भृङ्ग! सत्यां मालत्यां केतक्या कंटकेद्धया?।।
समासोक्ति ते मिलतु है।।

---

1. *मानस 2/161/8*
2. *स्फुट दोहा*
3. *मानस 1/355/6*
4. *मानस 2/201/8*

।।अथ थ फ शून्यम्।।

।अथ वकारादि कथनम्।

।। विचित्रालंकार लक्षणम् ।।

आछो फल विपरीत करि लहिये तहाँ बिचित्र।
नवत उच्चता को लहत जे हैं पुरुष पवित्र।।90।।

यथा – जान आदिकबि नाम प्रतापू। भयउ सुद्ध करि उलटा जापू।।[1]
नाम प्रताप (प्रभाउ) जान सिव नीको। कालकूट फल दीन्ह अमी को।।[2]

पुनः – काटइ परसु मलय सुनु भाई। निजगुन देइ सुगंध बसाई।।[3]

कुवलयानन्दः –

विचित्रं तत्प्रयत्नश्चेद्विपरीतः फलेच्छया।
नमान्ति सन्त स्त्रैलोक्यादपि लब्धुं समुन्नतिम्।।

।। व्यतिरेकालंकार लक्षणम् ।।

तामहँ आनिय भेद कछु होइ जो बस्तु समान।
सो व्यतिरेका भाँति द्वै युक्ति सहज परिमान।।91।।*

युक्ति व्यतिरेको यथा बरवैरामायणे –

सम सुबरन सुषमाकर सुखद न घोर।
सीय अंग सखि कोमल कनक कठोर।।[4]

सहज व्यतिरेको यथा –

संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह पै कहै न जाना।।
निज परिताप द्रवइ नवनीता। परदुख द्रवहिं संत सुपुनीता।।[5]

पुनः – बंदउ संत असज्जन चरना। दुखप्रद उभय बीच कछु बरना।
बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं। मिलत एक दुख दारुन देहीं।।[6]

---

1. *मानस 1/19/5*
2. *मानस 1/19/8*

* *तामें आनै भेद कछु होय जु बस्तु समान।*
सो व्यतिरेक सु भाँति द्वै युक सहज परिमान।। कविप्रिया 11/19

3. *मानस 7/37/8*
4. *बरवै रामायण – 10*
5. *मानस 7/125/7-8*
6. *मानस 1/5/3-4*

कुवलयानन्दः –

व्यतिरेकोबिशेषश्चेदुपमानोपमेययोः।
शैला इवोन्नताः सन्तः किन्तु प्रकृतिकोमलाः।।

।। अथान्यप्रकारेण व्यतिरेक लक्षणम् ।।

जहाँ अधिक उपमान ते कहियत है उपमेय।
सो व्यतिरक बखानिए ऊँच नीच गुणमेव।।
गुन कहिए उपमेय के अरु अवगुन उपमानु।
कै गुन ही कै अवगुनै के बिहीन दोउ जानु।।
सब्द अर्थ्थ आछिप्त ते तानि भेद ए चारि।
सुद्ध श्लेष दुरूप करि चौबिस भाँति बिचारि।।*

अथ शुद्धमूलक श्रौती व्यतिरेको यथा।। उपमेयोपना गुण दोष निरूपणं।

बरवै रामायणे –

सिय मुख सरद कमल जिनि किमि महि जाइ।
निसि मलीन वह निसि दिन यह बिगसाइ।।[1]

निर्णयोपमा अरु प्रतीत ते मिलतु है।

अधिक तद्रूपकतते बाचक को भेद है।।1।।

अथ उपमेय गुणोन उपमा दोष व्येक्य निरूपणं यथा –

बरवै रामायणे – तुलसी बंक बिलोकनि मृदु मुसुकानि।
कस प्रभु नयन कमल अस कहौं बखानि।।[2]

अद्भुतोपमा अरु प्रतीप ते मिलतु है।।2।।

अथ उपमादोषेणे उपमेय गुण व्यंग्यनिरूपणं यथा –

गीतावली – विसवासिनि पर दुख हेतु जानि। भयप्रद बिलोकि जेहि होत हानि।।
अति निरसन वह सोभा न रोच। कचनागिरिज्यो बरनत सकोच।।[3]

दूषणोपमा अरु प्रतीप ते मिलतु है।।3।।

---

* *उपमानाद् यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव सः। काव्य पृ. 158*
हेत्वोरुक्तावनुक्तीनां त्रये साम्ये निवेदिते।
शब्दार्थाभ्यामयाक्षिप्ते श्लिष्टे तद्वत् त्रिरष्ट तत। सूत्र 159

1. *बरवै रामायण – 11*
2. *बरवै रामायण – 4*
3. *गीतावली – ?*

अथ उपमेयोपमा गुण दोष विहीन व्यंग्य निरूपणं।।

यथा – अपर देव अस सुनिअत नाहीं। राम लषन जेहिं पटतर जाहीं।।[1]

लुप्तोपमा के भेद ते मिलतु है।।4।।

अथ शुद्धमूलक आर्थी व्यतिरेक कथनम्। उपमेयोपमागुण दोष कथनम्।।

यथा बरवै रामायणे --

काम रूप तुलसी राम सरूप। को कबि समसरि करै परै भवकूप।।[2]

निर्णयोपमा अरु प्रतीप ते भेद है।।5।।

अथ उपमेयगुणेन उपमा दोष व्यंग्य निरूपणं यथा –

रामसतसैया –

माँगत रहत न रैन दिन गृह तजि कहूँ न जात।
समता देत पपीहरहिं तुलसीदास लजात।।[3]

अद्‌भुतोपमा अरु प्रतीप ते विभेद है।।6।।

अथ उपमा दोषेण उपमेय गुण व्यंग्य निरूपणं

यथा –

जनम जलधि (सिंधु) पुनि बंधु बिष दिन मलीन सकलंक।
सिय मुख समता पाव किमि चंद बापुरो रंक।।[4]

दूषणोपमा ते अभेद है।।7।।

अथ उपमेयोपमागुण दोष विहीनं व्यंग्य निरूपणं

यथा – जौ पटतरिअ तीय सम सीया। जग असि जुबति कहाँ कमनीया।।[5]

लुप्तोपमा बिषे संचरत है।।8।।

अथ शुद्धमूलक आक्षिप्त व्यतिरेक कथनम्। उपमेयोगुण दोष निरूपणं।

यथा बरवै रामायणे –

चढ़त दसा यह उतरत जात निदान।
कहउँ न कबहूँ करकस भौंह कमान।।[6]

निर्णयोपमा ते भेद है।।9।।

---

1. *मानस 1/220/8 [अपर देउ अस कोउन आही। यह छबि सखी पटतरिअ जाही।।]*
2. *बरवै रामायण – 6*
3. *रामसतसैया [तुलसी सतसई] 1/18*
4. *मानस 1/237*
5. *मानस 1/247/4*
6. *बरवै रामायण – 5*

।। उपमेयगुणेन उपमा दोष व्यंग्य निरूपणं ।।

यथा बरवै रामायणे –

साधु सुशील सुमति सुचि सरल सुभाव। रामनीति इत काम कहा यह पाव।।[1]

अद्भुतोपमा बिषे संचरत है।।10।।

।। उपमादोषेण उपमेय गुण व्यंग्य निरूपणं ।।

यथा – घटइ बढ़इ बिरहिनि दुखदाई। ग्रसइ राहु निज सँधिहि पाई।।
कोक सोकप्रद पंकज द्रोही। अवगुन बहुत चन्द्रमा तोही।।
बैदेही मुख पटतर कीन्हे। होइ पाप (दोषु) बड़ अनुचित कीन्हे।।[2]

दूषणोपमा ते अभेद है।।11।।

अथ उपमेयोपमा गुणदोष विहीन व्यंग निरूपणं।।

यथा बरवैरामायणे –

तुलसी भइ मति बिथकित करि अनुमान। राम लखन के रूप न देखेउ आन।।[3]

लुप्तोपमा बिषे संचरत है।।12।।

।। इति शुद्ध मूलक श्रौती आर्थी आक्षिप्त व्यतिरेकाः ।।

अथ श्लेषमूलक श्रौती आर्थी आक्षिप्त व्यतिरेक गुणदोषान्यां पूर्वव द्वादश विधंज्ञातव्यम्।।

अनेकार्थ शब्द सो श्लेष अरु श्रौती आर्थी बाचक न होइ सो आक्षिप्त दोष।

अथ उपमेयोपमेय दोष गुण निरूपण श्लेष मूलक आर्थी व्यतिरेक।।

यथा बरवै रामायणे –

बिबिध बाहिनी बिलसति सहित अनंत।
जलधि सरिस को कहै राम भगवंत।।13।।[4]

।। इत्यादि ज्ञेयम् ।।

।। अथ विधि अलंकार लक्षणम् ।।

जहाँ सिद्ध ही बात को करत प्रसिद्ध विधान।
अलंकार विधि भाँति द्वै बरनत सकल सुजान।।92।।

---

1. *बरवै रामायण – 7*
2. *मानस 1/238/1-3*
3. *बरवै रामायण – 23*
4. *बरवै रामायण – 42*

प्रथम भेदो यथा –

सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोकदायक विश्रामा।।
बिस्वभरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।।
जाके सुमिरन तें रिपु नासा। नाम सत्रुहन बेद प्रकासा।।
लच्छन धाम राम प्रिय सकल जगत आधार।
गुरु बसिष्ठ तेहि राखा लछिमन नाम उदार।।[1]

द्वितीय भेदो यथा –

हंसबंसु दसरथु जनकु राम लखन से भाइ।
जननी तूँ जननी भई बिधि सो (सन) कहा बसाइ।।[2]

कुवलयानन्दः – सिद्धस्यैव विधानं यत्माहुर्विध्यलंकृतिम्।
पञ्चममोदञ्चने काले कोकिलः कोकिलोऽभूत।।

।। विपरीतालंकार लक्षणम् ।।

कारज साधक को जहाँ बाधक साधन होइ।
तासो सब विपरीत कहि बरनत बुधजन लोइ।।93।।*

यथा –

रबि ससि पवन बरुन धनधारी। अगिनि काल जहँ (जम) लगि अधिकारी।
इनहि आदि (ब्रह्म सृष्टि जहँ) लगि भट भारी (तनुधारी)।
दसमुख जीति बस्यकृत झारी (बसवर्ती नरनारी)।।[3]

पुनः –

देखि राम बलु निजधनु दीन्हा। करि बहु बिनय गवनु बन कीन्हा।।[4]

पुनः –

भव बंधनते छूटहिं नर जपि जाकर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ नागपास सोइ राम।।[5]

पुनः गीतावली यथा –

सहस सुबाहु समूह सरिस खल समर सूर भट भारे।
केलि तून धनु वान पानि धरि निदरि निसाचर मारे।।[6]

---

1. *मानस 1/197/6-8*
2. *मानस 2/161*

* *कारज साधक को जहाँ साधन बाधक होय।*
तासों सब विपरीत यों कहत सयाने लोग।। कविप्रिया-प्रभाव – 13

3. *मानस 1/182/10-12*
4. *मानस 1/293/2*
5. *मानस 7/58*
6. *गीतावली 1/60/3*

।। विनिमयालंकार लक्षणम् ।।

अधिक न्यून को पलटिबो सो विनिमय कहि देत।
सर चलाइ अरि तियनि की चितवन ही हरि लेत।।94।।

कुवलयानन्दः –

परिवृत्तिर्विनिमयो न्यूनाभ्यधिकयोर्मिथः।
जग्राहैकं शरं मुक्त्वा कटाक्षात्सरिपुस्त्रियः।।

प्रत्यायालंकार ते मिलतु है।।

।। विशेषालंकार लक्षणम् ।।

तीनि प्रकार विशेष दै अनाधार आधेय।
थोरो कछु आरंभिए अधिक सिद्ध फल देय।।
एक बस्तु को कीजिए ब़रनन ठौर अनेक।
मेरो मन तजि हीय मो तो हिय मो रह एक।।
कल्पवृक्ष देख्यौ सबनि तोको देखत नैन।
अन्तर बाहर दिसि बिदिसि तीय वहै सुख दैन।।95।।

प्रथम भेदो यथा –

लख़न जानकी सहित तब गवनु कीन्ह रघुनाथ।
फेरे सब मृदु (प्रिय) बचन कहि लिए लाइ मन साथ।।[1]

पुनः – सत्य (तत्त्व) प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा।।
सो मन सदा रहत तोहिं पाहीं। जानु प्रीतिरस एतनेहिं माहीं।।[2]

कुवलयानन्दः –

विशेषः ख्यातमाधारं विनाप्याधेय वर्णनम्।
गतेऽपि सूर्ये दीपस्थास्तमाछिन्दन्ति तत्कराः।।

द्वितीय भेदो यथा –

जे जन कहहिं राम (कुसल) हम देखे। भरत राम सम प्रिय तेहि लेखे।।[3]

पुनः – मैं निज जनम सुफल करि लेखेउँ। आज तात दसरथ कहँ देखेउँ।।[4]

पुनः – कपि तव दरस सकल दुख बीते। मिले आजु मोहि राम पिरीते।।[5]

---

1. *मानस 2/118*
2. *मानस 5/15/6-7*
3. *मानस 2/224/7*
4. *मानस – ?*
5. *मानस 7/2/11*

कुवलयानन्दः –

किञ्चिदारंभतोऽशक्य वस्त्वन्तर कृतिश्च सः।
त्वां पश्यता मया लब्धं कल्पवृक्ष निरीक्षणम्।।

तृतीयो भेदो यथा –

बिरज ब्रह्म ब्यापक अबिनासी। सबके हृदय निरंतर बासी।।[1]

पुनर्यथा –

सती दीख कौतुक मग जाता। आगे राम सहित सिय (श्री) भ्राता।
फिरि चितवा पाछे प्रभु देखा। सहित बंधु सिय सुंदर बेषा।
जहँ चितवहिं तहँ प्रभु आसीना। सेवहिं सिद्ध मुनीस प्रबीना।।[2]

कुवलयानन्दः –

विशेषः सोऽपि यद्येकं वस्त्वनेकत्र वर्ण्यते।
अन्तर्वहिः पुरः पश्चात् सर्व दिक्ष्वपि सैव मे।।

।। व्याघातालंकार लक्षणम् द्विधा ।।

जा करि काहू को करै कोऊ अन्यथा बात।
ताही करि तेहि तै सिये करै और व्याघात।।96।।

प्रथमभेदः –

यथा रामसलकायाम् –

रजनी ससि कर परसि कै जलज रहे विलखाइ।
दिनकर कर बासर लगे बहुरि उठे बिगसाइ।।[3]

स्फुटम् –

जा करि मार सुमार किय मारि मयंक मयूख।
तिनही करि पिय आइ सखि ज्याए बरषि पियूख।।[4]

कुवलयानन्दः –

स्याद्वयाघातोऽन्यथा कारि तथाऽकारि क्रियेत् चेत्।
दृशादग्धं मनसिजं जीवयन्ति दृशैवयाः।।

---

1. *मानस 3/11/17*
2. *मानस 1/54/4-6*
3. *रामशलाका – ?*
4. *स्फुट दोहा – ?*

द्वितीय भेदः –

जहाँ स्वकरता क्रिया को चाहत काज विरोध।
सो दूजो व्याघात है भाषत जिन्हहि प्रबोध।।

यथा –

सिगरे ब्रज में बात यह बरजत कहा अचेत्।
लाग्यौ जौऽब कलंक तौ हरि किन देखन देत।।[1]

कुवलयानन्दः –

सौकर्येण निवद्धापि क्रियाकार्यविरोधिनी।
दया चेद् बाल इति मय्य परित्याज्य एवते।।

।। विभावनालंकार लक्षणम् षड्वा ।।

है षट भाँति विभावना कारण बिनु ही काजु।
बिनु जावक दीन्हे चरन अरुन लखे हैं आजु।।97।।

यथा –

पग बिनु (बिनुपद) चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ बिधि नाना।
रसनारहित (आननरहित) सकल रस भोगी। बिनु बानी बकता बड़ जोगी।।[2]

पुनः – नारद बचन सत्य हम जानी। बिना पंख हम चहहिं उड़ानी।।[3]

पुनः – परिहरि सोच रहहु तुम सोई। बिनु औषध विआधि बिधि खोई।।[4]

समास या प्रतिबिम्ब या दोइ चौपाई विषे गर्भित है।।

पुनः – एक कहहिं ए सहज सुहाए। आपु प्रगट भए बिधि न बनाए।।[5]

पुनः – मुनि तापस जिन्ह ते दुख लहहीं। ते नरेस बिनु पावक दहहीं।।[6]

कुवलयानन्दः –

विभावना विनापि स्यात् कारणं कार्य जन्म चेत्।
अप्यलाक्षा रसासिक्तं रक्तं तच्चरणद्वयम्।।

---

1. *स्फुट दोहा – ?*
2. *मानस 1/118/5-6*
3. *मानस 1/78/6 (प्रचलित पाठ: नारद कहा सत्य सोइ जाना। बिनु पंखन्ह हम चहहिं उड़ाना।।)*
4. *मानस 1/171/4*
5. *मानस 2/120/2*
6. *मानस 2/126/3*

द्वितीयभेदः –

हेतु अपूरण ते जहाँ कारज पूरण होइ।
कुसुम बान कर गहि मदन सब जग जीत्यौ जोइ।।

यथा – काम कुसुम धनु सायक लीन्हे। सकल भुवन अपनें बस कीन्हे।।[1]
रबि मंडल देखत लघु लागा। उदयँ तासु तिभुवन तम भागा।।
कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा। सोखेउ सुजसु सकल संसारा।।
मंत्र परम लघु जासु बस विधि हरि सुरसर्ब।
महामत्त गजराज कहुँ बसकर अंकुस खर्ब।।[2]

पुनः –

नाम प्रताप (प्रसाद) संभु अबिनासी। बेष (साजु) अमंगल मंगलरासी।।[3]

कुवलयानन्दः –

हेतूनाम समग्रत्वे कार्योत्पत्तिश्च सा मता।
अस्त्रैरतीक्ष्ण कठिनैर्जगज्जयति मन्मथः।।

तृतीय भेदः –

प्रतिबंधक के अछत हू कारज पूरण मानि।
निसि दिन श्रुति संगति तऊ नैनराग की खानि।।

यथा –

गुरजन लाज समाजु बड़ देखि सीय सकुचानि।
लागि बिलोकन सखिन्ह गन (तन) रघुबीरहिं उर आनि।।[4]

पुनः – जो ग्यानिन्ह कर चित अपहरई। बरिआईं बिमोह मन करईं।।[5]

पुनः – कृपादृष्टि कपि सकल (भालु) बिलोके।
भए सबल (प्रबल) रन रहहिं न रोके।।[6]

कुवलयानन्दः –

कार्योत्पत्तिस्तृतीयास्यात् सत्यपि प्रतिबन्धके।
नरेन्द्रानेव ते राजन् दशत्यसि भुजंगमः।।

---

1. *मानस 1/257/1*
2. *मानस 1/256/7-8*
3. *मानस 1/26/1*
4. *मानस 1/248*
5. *मानस 7/59/5*
6. *मानस 6/52/8*

चतुर्थभेदः –

जबै अकारन बस्तु ते कारज प्रगट जो होत।
कोकिल की बानी अली बोलत सुनहु कपोत।।

यथा – अबहीं ते उर संसय होई। बेनुमूल सुत भयहु घमोई।।[1]

कुवलयानन्दः –

अकारणत् कार्यजन्म चतुर्थी स्याद्विभावना।
शङ्खाद्वीणा निनादोऽयमुदेति महद्भुतम्।।

पञ्चमभेदः –

काहू कारज ते जहाँ कारज होइ विरुद्ध।
करत मोहि संताप यह–सखी सीतकर सुद्ध।।

यथा – बूड़हि आनहिं बोरहिं जेई। भए उपल बोहित सम तेई।।[2]

कुवलयानन्दः –

विरुद्धात् कार्य संपतिर्दृष्टा काचिद्विभावना।।
सितांशु किरणास्तन्वी हन्त सन्तापयन्ति माम्।।

विषम अरु विरोध अरु विरोधाभास अरु युक्तायुक्त विषे संचरत है।।5।।

षष्टमभेदः (षष्ठभेदः)

कारज ते कारण जहाँ तहँ विभावना सोधि।
तेरे कर हैं कल्पतरु उपज्यो सुजस पयोधि।।

यथा – उपजहिं राम (जासु) अंस तें नाना। संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना।।[3]

कुवलयानन्दः –

कार्यात् कारण जन्मापि दृष्टा काचिद्विभावना।
यशः पयोराशिरभूत कर कल्पतरोस्तव।।

।। व्याजस्तुति निन्दालंकार लक्षणम् ।।

जहाँ जहाँ कछु ब्याज करि निन्दा स्तुति होइ।
ब्याज स्तुति निन्दा कहत चारि भाँति सब कोइ।।98।।99।।

।। निन्दा ब्याज स्तुति ।।

गीध अधम खग आमिष भोगी। दीन्हेउ गति जेहि जाचहिं जोगी।।[4]

---

1. *मानस 6/10/3*
2. *मानस 6/3/8*
3. *मानस 1/144/6*
4. *मानस 3/33/2*

पुनः दोहा –

निसिचर अधम मलायतन (मलाकर) ताहि दीन्ह निजधाम।
गिरिजा ते नर मंदमति जे न भजहि श्रीराम।।[1]

पुनः –

आभीर जमन किरात खस सुपचादि (स्वपचादि) अति अघ रूप जे।
कहि नाम बारक तेहि पावन होहिं राम नमामि ते।।[2]

बरवै रामायणे –

तुलसी जनि पग धरहु गंग महँ साँच।
निगानाग करि नितहिं नचाइहि नाच।।[3]

स्तुति ब्याज निदा यथा ब्रह्मस्तुति युद्ध समये

जन रंजन भंजन सोक भयं। गत क्रोध सदा प्रभु बोधमयं।।
जसु पावन रावन नाग महा। बरनौ महिमा मुख चारि कहा।।
(खगनाथ जथा करि कोप गहा)

अहो बिरोध करै सोई तुम्हरो जन ताके तुम रंजन। अरु गत क्रोध होना तो रावण ऐसो अपराधी मुक्त हो तो स्त्री हर्यौ तोहू क्षमा कर्यो याते बोधमय हो। रावण को जस जाग्यो जो स्त्री हरण करि अरु युद्ध-करि बरियाई मुक्ति लई। तुम्हरो कहा जस है तुम्हारी उलटी रीति चारि मुख करि कही न जाइ। याको अनन्त मुख चाहिए। प्रगट तौ स्तुति है अरु ब्यंग करि निन्दा सूचक है।।इत्यर्थः।।

बरवै रामायणे –

तुव जल जमुना जो जन जबहिं नहाइ।
जात लोक हरि जम के मुँह मसि लाइ।।[4]

जमराज जमुना को भाई है ताको मुख कारिख लगावनो यह निन्दा अरु स्तुति प्रसिद्ध ही है।।2।।

स्तुति ब्याज स्तुति यथा –

धन्य भूमि बन पंथ पहारा। जहँ जहँ नाथ कमल पग (पाउ तुम्ह) धारा।।[5]

---

1. *मानस 6/71*
2. *मानस 7/130/1*
3. *बरवै रामायण – ?*
4. *बरवै रामायण – (प्रचलित पाठ में यह बरवै नहीं है)*
5. *मानस 2/136/1*

निन्दा ब्याज निन्दा यथा –

मम पुर बसि तपसिन्ह सन (पर) प्रीती। सठ मिलु जाइ तिन्हहि कहु नीती।।[1]

पुनः –

वैसहि बिधि सब बात बनाई। प्रजा पाँचकत करहु सहाई।।[2]

(मोरि बात सब बिधिहि बनाई)

कुवलयानन्दः –

स्तुत्यास्तुतेश्च गम्यत्वे व्याज स्तुति उदाहृता।

धन्योसि भृंग यत्पद्मं तन्मुखद्युति चुम्बसि।।

पुनः कुवलयानन्दः –

निन्दाया निन्दया व्यक्ति ब्र्याज निंदा निगद्यते।

विधे! स निन्द्यो यस्ते प्रागेकमेवा हरच्छिरः।।

।। विषादन अलंकार लक्षणम् ।।

मन इच्छित जो बात है सो बिरुद्ध ह्वै जात।

ताहि बिषादन कहत हैं जिनकी मति अवदात।।100।।

यथा –

सेवा समय दैअँ दुख (बनु) दीन्हा। मोर मनोरथ सुफल न कीन्हा।।[3]

पुनः स्फुटम् –

सिगरी निसि निज मोच्छ की कीन्हो भँवर उपाय।

उदित सूर गज मूलजुत कमल फूल गौ खाय।।[4]

कुवलयानन्दः –

इष्यमाण विरुद्धार्थ संप्राप्तिस्तु विषादनम्।

दीपमुद्योजयेद्यावन्निर्वाणस्तावदेव सः।।

परिवृत्त ते मिलतु है।।

।। विषमालंकार लक्षणम् ।।

बिषम तीनि बिधि अनमिलित संग प्रथम वह होइ।

देखहु सभा बलाक की हंस न सोहत कोइ।।101।।

---

1. *मानस 5/41/5*
2. *मानस 2/180/8*
3. *मानस 2/69/4*
4. *स्फुट दोहा (संस्कृत के एक श्लोक का भावानुवाद)*

यथा – कहँ रघुपति के चरित अपारा। कहँ मति मोरि निरत संसारा।।[1]

पुनः – सुर समाज सब भाँति अनूपा। नहिं बरात दूलह अनुरूपा।।[2]

पुनः – जेहि विधि तुम्हहि रूप अस दीन्हा। तेहिं जड़ बरु बाउर कस कीन्हा।।[3]

पुनः – कहँ धनु कुलिसहुँ चाहि कठोरा। कहँ कोमल (स्यामल) मृदुगात कठोरा।।[4]

पुनः – सिय सुन्दरता बरनि न जाई। लघुमति बहुत मनोहरताई।।[5]

पुनः –

मानस सुलिल सुधा प्रतिपाली। सोह कि (जिअइ) कि लवन पयोधि मराली।।

नव रसाल बन बिहरन सीला। सोह कि कोकिल बिपिन करीला।।

हंस गवनि तुम्ह नहिं बन जोगू। सुनि अपजसु मोहि देइहि लोगू।।[6]

कुवलयानन्दः –

विषमं वर्ण्यते यत्र घटनाऽननुरूपयोः।
क्वेयं शिरीष मृद्वंगी क्व तावन्मदन ज्वरः।।

द्वितीय विषम –

अवर अंग कारण जहाँ कारज को अँग जान।
होत नृपति करवाल की कीरति बिसद बखान।।

यथा – सुनि गुन दोष (देखि) दसा पछिताहीं। कैकइ जननि जोगु सुत नाहीं।।[7]

बरवै रामायणे –

स्याम गौर दोउ मूरति लछिमन राम।
इनतें भइ सित कीरति अति अतिराम।।[8]

कुवलयानन्दः –

बिरूप कार्यस्योत्पत्तिरपरं विषमं मतम्।
विरूपात्कार्य्यसम्पत्तिरपरं विषम्मतम्।।
कीर्तिं प्रसूते धवलां श्यामा तव कृपाणिका।।

---

1. *मानस 1/12/10*
2. *मानस 1/92/8*
3. *मानस 1/96/8*
4. *मानस 1/258/4*
5. *मानस 1/323/1*
6. *मानस 2/63/5-7 (चौपाइयों का क्रम विपर्यय)*
7. *मानस 2/223/4*
8. ***बरवै रामायण** - 34*

तृतीय विषमः –

जहाँ भलो उद्यम किए पावत फलहिं निषिद्ध।
तीजो बिषम बखानिए पंडित सुमति समृद्ध।।

यथा –

आह दइअ मैं काह नसावा। करत नीक फल अनइस पावा।।[1]

कुवलयानन्दः –

अनिष्टस्याप्यवाप्तिश्च तदिष्टार्थ्थ समुद्यमात्।
भक्ष्याशयाऽहिमञ्जूषां दृष्ट्वाखुस्तेन भक्षितः।।

।। विरोधाभासालंकार लक्षणम् ।।

बरनत जहाँ बिरोध सो अर्थ सबै अविरोध।
वहै बिरोधाभास है भाषत जिनहिं प्रबोध।।102।।

यथा बरवै रामायणे –

कुजन-पाल गुन-बर्जित अकुल, अनाथ।
कहहु कृपानाथ राउर कह गुनगाथ।।[2]

कुवलयानन्दः –

आभासत्वे विरोधस्य विरोधाभास इष्यते।
विनापि तन्वि! हारेण वक्षोजौ तव हारिणौ।।

।। यथान्य प्रकारेण बिरोधाभास लक्षणम् ।।

सो बिरुद्ध अबिरुद्ध में जहाँ बिरुद्ध बिधान।
सु तौ जाति गुण क्रिया अह द्रव्य माहँ सज्ञान।।
जाति जाति आदिकनि सो गुण गुणदि सो जानि।
क्रिया क्रिया आदिकनि सो द्रव्य द्रव्य सो मानि।।
यों बिरोध दस भाँति सो मम्मट गए बखानि।

---

1. *मानस 2/163/6*
2. *बरवै रामायण - 35*
3. *विरोध : सोऽविरोधेऽपि विरुद्धेन यद्वचः ।। काव्यप्रकाश ।।*
   जातिश्चतुर्भिर्जात्याद्यैर्विरुद्धा स्याद गुणास्त्रिभिः।
   क्रिया द्वाभ्यामपि द्रव्यं द्रव्येणैवेति ते दश।। काव्यप्रकाश

तिनके देत उदाहरण सुकवि लेहु अनुमानि।।[3]

जाति जाति सो विरोध या गीतावली –

नव दल समेत लतिका असोक। घन दहत रूप ह्वै करत सोक।।
पद्मिनी जो अतिसय हित बखान। ते लगत मोहि अति तेजमान।।[1]

विटपादि मृगादि नरादि ए जाति है। द्रव्य फल पुष्पादि।
इति कल्पलता सम्मते।।1।।

जाति गुण सो विरोध – यथा

भर जब जाहि कहँ (सुनु जाहि जब) होइ बिधाता बाम।
धूरि मेरु सम जनक जम ताहि ब्याल सम दाम।।[2]

पुनः –

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।।
गिरि सुमेरु सर्षप (गरुड़ सुमेरु रेनु) सम ताही। राम कृपा करि चितवा जाही।।[3]

रिपु करै मिताई या पद करि जाति क्रिया सो बिरोध है।।

पुनः –

मातु मृत्यु पितु समन समाना। सुधा होइ बिष सुनु हरिजाना।।
मित्र करइ सत रिपु कै करनी। ता कहँ बिबुध नदी बैतरनी।।
सब जग ताहि अनलहु ते ताता। जो रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता।।[4]

मित्र ते रिपु की करनी करत संते जाति क्रिया सो बिरोध होत है।।

पुनः – निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्रक दुख रज मेरु समाना।।[5]

जाति क्रिया सो विरोध यथा –

करि केहरि कपि कोल कुरंगा। बिगत बैर बिचरहि एकं (सब) संगा।।[6]

पुनः – जिन्हहि निरखि मग साँपिनि बीछी।
तजहि बिषम बिषु ताप (तामस) सुतीछी (तीछी)।।[7]

---

1. *गीतावली - ?*
2. *मानस 1/175*
3. *मानस 5/5/2-3*
4. *मानस 3/2/6-8*
5. *मानस 4/7/2*
6. *मानस 2/138/1*
7. *मानस 2/262/8*

पुनः –

सुनहु मातु साखामृग नहि बल बुद्धि बिसाल।
प्रभु प्रताप तें गरुड़हि खाइ परम लघु ब्याल।।3।।[1]

जाति द्रव्य सो बिरोध यथा –

जे जन साधत साधुजन बचन सुधा को पान।
जरा मरन भयरहित ह्वै इत पावन कल्यान।।[2]

साधु जाति बचन सुधा द्रव्य ताको पान विरुद्ध है।।4।।

गुण गुण सो बिरोध यथा बरवै रामायणे –

सीतलता ससि की रहि सब जग छाइ।
अगिनि-ताप ह्वै हम (तन) कह सँचरत आइ।।[3]

सीतलता अरु ताप गुण गुण सो विरोध है।।5।।

गुण क्रिया सो विरोध –

अगुन अलेख (अलेप) अमान एकरस। राम सगुन भए भगत प्रेम बस।।6।।[4]

गुण द्रव्य सो विरोध

यथा बरवै रामायणे –

राम-सुजस कर चहुँ जुग होत प्रचार।
असुरन्ह कहँ लखि लागत जग अँधियार।।[5]

सुजस द्रव्य गुण स्वेत सो अंधकार लगतु है यह विरोध जानिए।।7।।

क्रिया क्रिया सो विरोध –

यथा – नौकारूढ़ चलत जग देखा। अचल मोह बस आपुहिं लेखा।।
बालक भ्रमहिं न भ्रमहिं गृहादी। कहहिं परस्पर मिथ्याबादी।।[6]

आपनो भ्रम न देखो तो क्रिया उचित है। यह और को भ्रमत देखो ताते विरुद्ध क्रिया है।।8।।

---

1. *मानस 5/16*
2. *स्फुट दोहा*
3. *बरवै रामायण - 33*
4. *मानस 2/219/6*
5. *बरवै रामायण - 39*
6. *मानस 7/73/5-6*

क्रिया द्रव्य सो बिरोध –

यथा बरवै रामायणे –

सिय-वियोग-दुख केहि विधि कहउँ बखानि।
फूल बान ते मनसिज बेधत आनि।।9।।[1]

द्रव्य द्रव्य सो विरोध –

यथा – ब्यापक ब्रह्म अलख अबिनासी। चिदानंद निरगुन गुनरासी।।[2]

निर्गुन गुनरासी यह द्रव्य द्रव्य सो विरोध है। याही को शब्द विरोधाभास कहत हैं। या विरोधाभास के भेद उपमा, विभावना, विरोध अरु युक्तायुक्त इत्यादि बहुत अलंकारनि में संचरत है प्राचीनोदित है। ताने जानिबे हेतु संग्रह कर्‌यो इति। जातिं शब्द जो एक अर्थ सो बहुत निमित्त है। द्रव्य नाम संज्ञा है। गुण क्रिया प्रसिद्ध है।।10।।

।। विरोधाभास काव्य प्रकाश सम्मते ।।

यथा कवित्त –

नीरजते अति तेज बढ़ै पुनि नीरहु सीरो न होत हियो।
दाह करै जमुना को समीर सुधाकरहू बिष रूप कियो।
जो सुकुमार है मैन के बाण भये तेउ तीछन तेज लियो।
रावरे देखे बिना बलि राधेहि मोहन क्यो करि जान जियो।।1।।
कोकिल के मृदु बैन हियो हठि बेधत है कहि काहि कहों।
तातो तुसार करै जिनि नीरेउ सीर गुलाबहि देखि दहों।।
बूड़त मोह अकास चढ़्यो मन जारै कपूरन चैन लहों।
हे सजनी ससि भानु भयो अब तौ कहि धीरज कैसे गहों।।2।।

टीका – नीरज जाति बहु बस्तुनि को नाम नीरज है ताते जाति शब्द जानिए। तेजहू जाति शब्द है।। ताते जाति जाति सो बिरोध है।।1।। नीर जाति सीरो गुण ताते जाति गुण सो विरोध है।।2।। दाह करै क्रिया समीर जाति। ताते क्रिया सो विरोध है।।3।। सुधाकर द्रव्य नाम संज्ञा बिष जाति यह जाति नाम सो विरोध है।।4।। सुकुमार गुण तीछन गुण यह गुण गुण सो विरोध है।।5।। इति प्रथम कवित्त।। मृदु बैन यह गुण बेधत है क्रिया। यह क्रिया गुण सो विरोध है।।6।। ताते गुण।।

---

1 *बरवै रामायण - 40*

2 *मानस 1/341/6*

तुसार द्रव्य उसीर गुलाब द्रव्य।। तातो गुण।। ताते गुण द्रव्य सो विरोध है।।7।। बूड़त क्रिया। चढ्यो क्रिया।। ताते क्रिया क्रिया सो विरोध है।।8।। जारै क्रिया कपूर नाम। ताते द्रव्य क्रिया सो विरोध है।।9।। ससि नाम भानु नाम। ताते नाम सो विरोध है।।10।। इति द्वितीय कवित्त।।

।। अथ विकल्पालंकार लक्षणम् ।।

समबल जुत द्वै बस्तु को बरनत जहाँ बिरोध।
तासो कहत बिकल्प हैं पण्डित करि मति सोध।।103।।

यथा –

प्रभु (सो) भुजकंठ कि तव असि घोरा। सुनु सठ अस प्रमान (प्रवान) पन मोरा।।[1]

पुनः – देहु कि लेहु अजसु करि नाहीं। मोहि न बहुत प्रपंच सोहाहीं।।[2]

कुवलयानन्दः –

विरोधे तुल्यवलयोर्विकल्पालंकृतिर्म्मता।
सद्यः शिरांसि चापान्वा नमयन्तु महाभुजः।।

।। वैचित्रालंकार लक्षणम् ।।

एक काल एकहिं बिषे केहू दुख सुख होइ।।
बिना नियम बैचित्र सो बरनत है सब कोइ।।104।।

यथा – सुनि सुनि राम भरत संबादू। दुहु समाज हियँ हरषु बिषादू।।[3]

चन्द्रालोके –

अत्रान्तरे च कुलटा कुलवर्त्मपात संयात पातक इव स्फुट लांछन श्रीः।
वृन्दावनान्तर मदोय यदंशु जालैदिक सुन्दरी वदन चन्दन विन्दुरिन्दुः।।

।। विकस्वरालंकार लक्षणम् ।।

कहि बिसेष सामान्य पुनि कहिए बहुरि बिसेष।
ताहि विकस्वर कहत हैं पण्डित सुकबि असेष।।105।।

यथा – मधुप मोह मोहन तज्यो यह स्यामन की रीति।
मिले आपने काज लौं अब कुबिजा सन प्रीति।।[4]

---

1. *मानस 5/10/4*
2. *मानस 2/33/6*
3. *मानस 2/309/6*
4. *स्फुट दोहा*

कुवलयानन्दः –

यस्मिन्विशेष सामान्य विशेषाः स विकस्वरः।
स न जिग्ये महान्तो हि दुर्धर्षाः सागरा इव।।

।। अथ विक्षेपालंकार लक्षणम् ।।

जो जाको अधिकार है करै और सो काम।
ताहि कहत विक्षेप है लहै न ताको नाम।।106।।

यथा – इंद्र जालि कहुँ कहिअ न बीरा। काटइ निज कर सकल सरीरा।।[1]
जरहिं पतंग मोह बस भार बहहिं खर बृंद।
ते नहिं सूर कहावहिं समुझि देखु मतिमंद।।[2]

चन्द्रोदये – अन्यत्र क्रियाधिकारेण यत्रान्योत्कर्षत्वेन तुल्यस्तस्य विक्षेपः।।
इन्द्रजाली न शूरमा।।

।। अथ भकारादिकथनम् ।।

।। भ्रान्त्यलंकार लक्षणम् ।। द्विधा।।

भ्रमते सदृश वस्तु को लखिय और को और।
द्वै बिधि भ्रान्ति बखानिए कहत सुकवि सिरमौर।।107।।

प्रथम भ्रान्ति – यथा –

देखि कुठार बान धनुधारी। भै लरिकहि रिस बीरु बिचारी।।[3]

पुनः – भयउ कोलाहल नगर मझारी। आवा कपि लंका जेहिं जारी।।[4]

पुनः – आवत मुकुट देखि कपि भागे। दिनहीं लूक परन विधि लागे।।[5]

बरवै रामायणे – सरद चाँदनी सँचरत चहुँ दिसि आनि।
बिधुहिं जोरिकर बिनवति कुलगुरु जानि।।[6]

गीतावली बिषे –

नचत राम लखि मुदित मोर।
मानत लखन सतड़ित ललित धनुधनुसुर धनु गरजनि टँकोर।

---

1. *मानस 6/29/10*
2. *मानस 6/29*
3. *मानस 1/282/1*
4. *मानस 6/18/8*
5. *मानस 6/32/7*
6. *मानस 6/32/9*

सघन छाँह तम रुचिर रजनिभ्रम, बदन चंद चितवत चकोर।
तुलसीदास खग मृगनि सराहत दंड कवन कौतुक न थोर।।
(तुलसी – मुनि खग मृगनि सराहत भए हैं सुकृत सब इन्हकी ओर।।)[1]

कुवलयानन्दः – अयं प्रमत्त मधुपस्त्वन्मुखं वेत्ति पंकजम्।।

द्वितीयान्योन्य भ्रान्तिः यथा –

अन्योन्या है भ्रान्ति सो कीर चंचु अलि ठाम।
उन जाने किंसुक कुसुम इन जाने फल जाम।।

कुवलयानन्दः – पलाशकुसुमं (मुकुल) भ्रान्त्या शुकतुण्डे पतत्यलिः (विशत्यलिः
सोऽपियम्बूफल भ्रान्त्या तमलिं धर्तुमिच्छति।।

।। भाविकालंकार लक्षणम् ।।

भाविक भूत भविष्य जो होइ प्रतक्ष बनाइ।
बृन्दाबन में आज्जु वह लीला देखहिं जाइ।।108।।

यथा – आइ बना भल सकल समाजू। प्रगट करउँ रिस पाछिल आजू।।[2]

पुनः – तोहि देखि सीतलि भइ छाती। पुनि मो कहुँ सोइ दिनु सो राती।।[3]

कुवलयानन्दः – भाविकं भूत भाव्यर्थ साक्षात्कारस्य वर्णनम्।
अहं विलोकयेऽद्यापि युध्यन्तेऽत्र सुरासुराः।।

।। अथ मकारादि कथनम् ।।

।। मीलितालंकार लक्षणम् ।।

रूप एकताकरि जहाँ निबल सबल में जोग।
तासो मीलित कहत है जे कवि पण्डित लोग।।109।।

यथा गीतावली – नीज कंज दुति पुंज कलेवर बिलसत अति सुखमा सरसाई।
मिलित बरन मनहरन रूपसम लखियन मरकत मनि रुचिराई।।[4]

कुवलयानन्दः – मिलितं यदि सादृश्यात् भेद एव न लक्ष्यते।
रसो न लक्षि लाक्षायाश्चरणे सहजारुणे।।

।। मिथ्यालंकार लक्षणम् ।।

मिथ्या तासो कहत है जो मिथ्या सब होइ।
गगन फूल के माल को पहिरो चाहत कोइ।।110।।

---

1. *गीतावली - अरण्यकाण्ड - ?*
2. *मानस 2/230/5*
3. *मानस 5/27/8*
4. *गीतावली - ?*

यथा – कमठ पीठ जामहिं बरु बारा। बंध्या सुत बरु काहुहिं मारा।।
फूलहिं नभ बरु बहुबिधि फूला। जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला।।
तृषा जाइ बरु मृगजल पाना। ससा सीस बरु जमहिं बिषाना।।[1]
बारि मथें बरु होइ घृत सिकता ते बरु तेल।
बिनु हरिभजन न भव तरिअ यह सिद्धांत अपेल।।[2]

कुवलयानन्दः – किञ्चिन्मिथ्यात्व सिद्धयर्थं मिथ्यान्तर कल्पनम्।
मिथ्याध्यवसितिर्वेश्यां वशयेत्स्वस्रजं वहन्।।

।। मुद्रालंकार लक्षणम् ।।

प्रकृत अर्थ पर पदनि सो सूच्य प्रकासै अर्थ्थ।
मुद्रा तासों कहत हैं पण्डित सुभति समर्थ्थ।।111।।

यथा – देह दीप दीपति दिपै बदन चन्द की जोति।
दामिनि दुति मुसुकानि मृदु सुख की खानि उदोति।।[3]

बरवै रामायणे – बड़े नयन, कटि, भृकुटी भाल बिसाल।
तुलसी मोहत मनहि मनोहर चाल (बाल)।।[4]
इति श्री रामरूप प्रकृतं तीसरे उल्लेख ते मिलतु है।।

कुवलयानन्दः – सूच्यार्थं सूचनं मुद्रा प्रकृतार्थ परैः पदैः।
नितम्ब गुर्वी तरुणी दृग्युग्म विपुला च सा।।

दोहा – सम्मत काव्य प्रकास को और कुवलयानन्द।
चन्द्रालोक कलपलता चन्द्रोदय सुभकन्द।।1।।
एकादस अरु एक सत मुख्य अलंकृति रूप।
बिबिध भेद इनके धरे तुलसीदास अनूप।।2।।
दस बसु सत संबत् हुतो अधिक और दस एक।
कियो सुकबि रसरूप यह पूरण सहित बिबेक।।3।।

।।इति श्री तुलसी भूषण ग्रन्थे समस्त भूषण भूषिते रसरूप कृतिः सम्पूर्णम्।।

।। शुभमस्तु ।।

---

1. *मानस 7/122/15-17*
2. *मानस 7/122*
3. *स्फुट दोहा*
4. *बरवै रामायण - 4*

(अथ तुलसीभूषण सूची पत्रं लिख्यते)

1. अनुप्रास (भेद 10), 2. वक्रोक्ति (भेद 3), 3. यमक (1), 4. श्लेष (3), 5. पुनरुक्तिवदाभास (1), 6. चित्र (24), इति शब्दालंकाराः।।

अर्थालंकार – 1. आशिष (1), 2. अपह्नुति (10), 3. अवज्ञा (2), 4. अनुज्ञा (1), 5. अनन्वय (1), (6) असम्भव (1), 7. अतद्‌गुण (1), 8. अनुगुण (1), 9. अमित (1), 10. अधिक (2), 11. अल्प (1), 12. आक्षेप (12), 13. असंगति (3), 14. अनुमान (1), 15. अर्थान्तरन्यास (2), 16. अयुक्त (1), 17. अयुक्तायुक्त (1), 18. अर्थापत्ति (1), 19. अप्रस्तुत प्रशंसा (1), 20. अर्थपाति (1), 21. अन्योन्य (1), 22. उपमा (27), 23. उक्ति (28), 24. उत्प्रेक्षा (7), 25. उर्जस्वी (1), 26. उन्मीलित (1), 27. उल्लेख (3), 28. उत्तर (2), 29. उदात्त (1), 30. उल्लास (4), 31. एकावली (1), 32. रूपक (20), 33. रसवद् (1), 34. रूपाभास (1), 35. रत्नावली (1), 36. लेश (1), 37. सामान्य (1), 38. सूक्ष्म (1), 39. स्मृत (1), 40. सार (2), 41. सन्देह (2), 42. समाहित (1), 43. समाधि (1), 44. सिद्ध (1), 45. सम (6), 46. समुच्चय (2), 47. संख्या (2), 48. सोपाधिक रूपक (1), 49. संभावना (1), 50. संकर (1), 51. संसृष्टि (1), 52. हेतु (4), 53. क्रम (2), 54. कारणमाला (2), 55. काव्यलिङ्ग (1), 56. चित्र (2), 57. जाति सुभाव (1), 58. युक्त (1), 59. युक्तायुक्त (1), 60. युक्ति (1), 61. तद्‌गुण (1), 62. तुल्ययोगिता (3), 63. दीपक (11), 64. दृष्टान्त (1), 65. धन्यत (1), 66. निर्णय (1), 67. निदर्शना (4), 68. नियम बिरोधी (1), 69. प्रतीप (5), 70. परिणाम (1), 71. परिवृत (1), 72. पर्य्यायोक्ति (2), 73. प्रहर्षण (3), 74. प्रहेलिका (1), 75. पूर्वरूपक (2), 76. प्रत्यनीक (1), 77. परिकर (1), 78. परिकुरांकुर (1), 79. प्रेम (1), 80. प्रसिद्ध (1), 81. प्रश्नोत्तर (1), 82. प्रतिषेध (1), 83. परिसंख्या (4), 84. पिहित (1), 85. पर्याय (2), 86. प्रत्याय (1), 87. प्रतिबिम्ब (1), 88. परस्पर (1), 89. प्रस्तुतांकुर (1), 90. विचित्र (1), 91. व्यतिरेक (26), 92. विधि (2), 93. विपरीत (1), 94. विनिमय (1), 95. विशेष (3), 96. व्याघात (2), 97. विभावना (6), 98. व्याजस्तुति (2), 99. व्याजनिंदा (2), 100. विषादन (1), 101. विषम (3), 102. विरोधाभास (11), 103. विकल्प (1), 104. वैचित्र्य (1), 105. विकस्वर (1), 106. विक्षेप (1), 107. भ्रांति (2), 108. भाविक (1), 109. मिलित (1), 110. मिथ्या (1), 111. मुद्रा (1) ।।इत्यर्थालंकार।।

चतुर्थ प्रति के टीकाकार एवं लेखक ने अंत में अपना परिचय इस प्रकार दिया है –

दोहा – व्योम नयन निधि इन्दु युत संवत् विक्रम जान।
फाल्गुन कृष्ण सु सप्तमी चन्द्रवार सुभ मान।।1।।

सोरठा – सिंग्रिफ लाल सुजान तुलसी भूषण ग्रंथवर।
पूर्ण कियो मतिमान स्वकर लेखि अति चावकर।।2।।

कवित्त – विक्रम नरेश जू के सम्वत वितीत भयो
व्योम युग अंक महिमान मनभाय के।
फाल्गुन सु कृष्ण तिथि सप्तमी सुचन्द्रवार
योग ग्रह कक्ष लग्न आयो सुखदाय के।
तुलसी सुभूषण सुभूषण है ग्रंथन को
कीन्ही रसरूप नृप हिये सरसाय के।
सिग्रिफ सुलाल कीन्हे लिखि कै सम्पूर्ण हाल
द्विज गुरु देवन ते आयसु सुपाय के।।3।।
कल्पलता अरु काव्यप्रकास कुवलयानन्द
चन्द्रोदय चन्द्रालोक कहूँ लाय धरी हैं।
और मत लैकै रसरूप कवि सज्जन सुख हेतु
सोई काव्य माहँ भरी है।
बाबू घनश्याम सिंह आयसु ले राधाकृष्ण
तुलसी सुभूषण की भाषा टीका करी है।
टीका सहित सोई सिग्रिफ सुलाल लिखे
ताहि दोषि हिये माँह आनंद की झरी है।।4।।

दोहा – तुलसी भूषण इन्दुकर अलंकार परकास।
सज्जन कुमुद चकोर हिय बाढ़त सदा हुलास।

अलंकारस्यसंख्या 117।। भेदस्य संख्या 361।

इति तुलसी भूषण

।।शुभमस्तु।।